शैक्षणिक पुस्तकालय : भूमिका, उद्देश्य एवं कार्य (ACADEMIC LIBRARIES : ROLE, OBJECTIVES AND FUNCTIONS)

प्रश्न—पुस्तकालय को परिभाषित कीजिए और इसकी आवश्यकता की शैक्षणिक संरचना में विवेचना कीजिए।

Define library and discuss its need in a academic setup.

अथवा (Or)

शैक्षणिक पुस्तकालय के उद्देश्यों एवं कार्यों की विस्तृत चर्चा कीजिए।

Discuss the objectives and functions of academic library in detail.

अथवा (Or)

किसी शैक्षणिक संरचना में पुस्तकालय की आवश्यकता एवं उद्देश्यों की वर्णन कीजिए।

Describe the need and objectives of a library in a academic setup.

अथवा (Or)

शैक्षिक पुस्तकालय से आप क्या समझते हैं ? इसके कार्यों की विवेचना कीजिए।

What do you understand by an academic library ? Describe its functions.

उत्तर—अंग्रेजी भाषा का लाइब्रेरी (Library) शब्द लेटिन भाषा के लिबर (Liber) शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ है 'पुस्तक' (book)। व्यापक अर्थ में इसके अन्तर्गत सभी प्रकार के प्रलेखों, अभिलेखों, हस्तलिखित एवं मुद्रित ग्रन्थों, फिल्मस्, फोटोग्राफ्स, टेप्स, फोनोग्राफ, रिकॉर्डस, वीडियो डिस्क, माइक्रोफॉर्म्स एवं कम्प्यूटर प्रोग्राम्स आदि का सम्मिलित संग्रह आता है। लिबरारिया (Libraria) जो लिबर (Liber) शब्द से बना है का अर्थ है पुस्तकों की दुकान और इसी शब्द से पुस्तकालय (Library) की उत्पत्ति मानी जाती है। वास्तविक रूप में यह पुस्तकों का आलय है जहाँ सभी प्रकार की पाठ्य-सामग्री पठन-पाठन, अध्ययन और परामर्श हेतु संग्रहित और व्यवस्थित की जाती है।

पुस्तकालय के लिए भिन्न-भिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न शब्दों का प्रयोग होता है। जर्मन में Bibliotheck, स्पेनिश में Bibliotheca, फ्रेंच में Bibliotheque, इटैलियन में Biblioteca, रशियन में Bibliotek कहा जाता है। हिन्दी में पुस्तकालय के लिए ग्रंथागार, ग्रंथालय, संस्कृत में ग्रंथागार और पुस्तकागार दो शब्द मिलते हैं। प्राकृत-साहित्य और बौद्ध साहित्य में 'सरस्वती भण्डार' शब्द से पुस्तकालय शब्द का ही बोध होता है।

पुस्तकालय शब्द का प्रयोग एक ऐसे स्थान, भवन, कमरा अथवा विशेष कक्ष की ओर इंगित करता है जहाँ उपयोग के लिए पुस्तकों एवं अन्य विभिन्न प्रकार की अध्ययन सामग्री को संग्रहित कर व्यवस्थित किया जाता है। पुस्तकालय की कई **परिभाषाएँ** (Definitions) प्रतिपादित की गई हैं, जिनमें से कुछ **परिभाषाएँ** इस प्रकार हैं—

1. **Lexicon Universal Encyclopedia** के अनुसार—"पुस्तकालय, पुस्तकों एवं अन्य अध्ययन तथा सूचना प्रदायक सामग्री का एक व्यवस्थित संग्रह है जो ज्ञान के समस्त क्षेत्र

अथवा उसके किसी एक अंश को समाहित करता है, एक पुस्तकालय सभी के लिए सुलभ हो सकता है अथवा किसी एक समुदाय के लिए प्रतिबन्धित हो सकता है।"

("A Library is an organized collection of books and other informational material covering the whole field of knowledge or any part of it; a library may be available to every one or restricted to a particular community.")

2. **A. L. A. Glossary of Library and Information Science** के अनुसार—"पुस्तकालय किसी विशेष समूह को भौतिक, ग्रन्थात्मक (Bibliographic) और बौद्धिक ज्ञान प्रदान करने हेतु एक व्यवस्थित सामग्री का संग्रह होता है, जिसमें प्रशिक्षित कर्मचारी होते हैं जो विशेष समूह को उनकी सूचना आवश्यकताओं से सम्बन्धित सेवाएँ तथा कार्यक्रम प्रदान करते हैं।"

3. **पियर्स बटलर** ने पुस्तकालय को एक सामाजिक संस्था माना है। उनके विचार में यह सामाजिक संरचना की अनिवार्य इकाई है जिसके द्वारा ग्रन्थों, चित्रों तथा ध्वनिजनित सामग्रियों के माध्यम से समाज के संचित अनुभवों को समाज के जिज्ञासु सदस्यों तक सम्प्रेषित किया जाता है।

4. **आक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी** के अनुसार—"पुस्तकालय एक सार्वजनिक संस्था अथवा संगठन है, जिस उद्देश्य पुस्तकों एवं अन्य अध्ययन सामग्री के संग्रह को सुरक्षित एवं व्यवस्थित रखना तथा उन उपयोक्ताओं को उपलब्ध कराना जिनको उनकी आवश्यकता हो।"

5. **हेरॉड्स लाइब्रेरियन्स ग्लॉसरी एण्ड रेफरेंस बुक** में पुस्तकालय की परिभाषा देते हुए लिखा गया है :

(i) वह स्थान जहाँ ग्रन्थों और अन्य साहित्यिक सामग्री को अध्ययन और पठन के लिए संकलित किया जाता है।

(ii) ऐसा स्थान, भवन अथवा कक्ष जहाँ उपयोग के लिए ग्रन्थों को रखा जाए।

(iii) फिल्मों, छायाचित्रों, अन्य पुस्तकेतर सामग्रियों, प्लास्टिक या धातु के टेप या डिस्क या 'प्रोग्राम' के सेट आदि। किसी एक ही वृहद पुस्तकालय के अलग-अलग विभागों में अलग-अलग प्रकार की सामग्रियों के संग्रह हो सकते हैं, या किसी विशेष पुस्तकालय में इनमें से केवल किसी एक प्रकार की सामग्री का संग्रह हो सकता है।

6. **डॉ. एस. आर. रंगनाथन** ने पुस्तकालय की परिभाषा देते हुए लिखा है कि यह एक ऐसी संस्था या प्रतिष्ठान है जिसका दायित्व तथा कर्त्तव्य संग्रह की देखरेख करना तथा इसे उन व्यक्तियों को उपलब्ध कराना है जिन्हें इसकी आवश्यकता है।

डॉ. एस. आर. रंगनाथन ने पुस्तकालय को सार्वजनिक संस्था कहा है। संग्रह की देखभाल तथा उसे व्यवस्थित कर उपयोक्ताओं को वांछित सूचना प्रदान करने के साथ-साथ इस बात पर भी जोर दिया है कि प्रचार एवं प्रसार के माध्यम से समाज के सभी व्यक्तियों को पुस्तकालय की ओर आकृष्ट किया जाए जिससे वे पुस्तकालय के नियमित पाठक बन संग्रहित अध्ययन सामग्री का उपयोग करने लगें। यह पुस्तकालय का दायित्व है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पुस्तकालय एक ऐसी संस्था अथवा संगठन है जहाँ मानव स्मृतियों, विचारों एवं अनुभवों के अभिलेखों को न केवल सुरक्षित रखा जाता है बल्कि भविष्य में उपयोग हेतु इनका संचयन, व्यवस्था एवं सुरक्षा की जाती है। ये अभिलेख विभिन्न भौतिक स्वरूपों, जैसे—पाण्डुलिपि, मुद्रित ग्रन्थ, सामयिकी प्रकाशन, ग्रामोफोन रिकॉर्डस, माइक्रोफिल्म, रेखाचित्र, चार्ट, टेप रिकॉर्डस, कम्प्यूटर प्रोग्राम्स, डिस्क, आदि के रूप में होते हैं।

शैक्षणिक पुस्तकालय की भूमिका
(Role of Academic Libraries)

सामाजिक संस्था के रूप में शैक्षणिक पुस्तकालय की भूमिका दो रूपों में निर्धारित की जा सकती है—

(1) यह शिक्षा एवं सूचना संचार के माध्यम के रूप में अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं,

(2) एक सामाजिक तथा सांस्कृतिक केन्द्र के रूप में भूमिका का निर्वाह करते हैं।

(1) **शिक्षा एवं सूचना माध्यम के रूप में**—शैक्षणिक पुस्तकालय शिक्षा के प्रसार तथा सूचना के संचार का प्रभावशाली माध्यम हैं। शिक्षा एक अनवरत प्रक्रिया है। शिक्षा की प्रक्रिया में मनुष्य दो प्रकार की शिक्षा ग्रहण करता है, औपचारिक तथा अनौपचारिक। शैक्षणिक पुस्तकालय औपचारिक शिक्षा (Formal education) में अपनी प्रमुख भूमिका निभाता है। औपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत मनुष्य किसी विशेष पाठ्यक्रम के आधार पर विशेष स्तर की शिक्षा प्राप्त करता है। यह शिक्षा विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों तथा शोध संस्थानों के माध्यम से प्राप्त होती है। नए पाठ्यक्रमों के प्रादुर्भाव, शिक्षा का असीमित विस्तार, शिक्षण पद्धति में नए प्रयोग, ज्ञान का विस्फोट, ज्ञान का पुस्तकेतर रूप (Non-book material) आदि ऐसे तत्व हैं जिनके कारण औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में पुस्तकालयों का महत्व बढ़ गाया है।

(2) **सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्था** के रूप में भी पुस्तकालय की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह छात्रों में बौद्धिक, नैतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक मूल्य उत्पन्न कर उन्हें नीति, अनुशासन और व्यवहार के साथ जीवन निर्वाह की शिक्षा देती है।

इसके अतिरिक्त शैक्षणिक पुस्तकालय की **शोध एवं विद्वता** के संदर्भ में भी अहम भूमिका है। शोध के विस्तार के लिए पुस्तकालय सशक्त भूमिका का निर्वाह करते हैं। शैक्षणिक पुस्तकालयों द्वारा शोध के लिए उपयुक्त वांछित सामग्री एवं साधन उपलब्ध कराए जाते हैं। आज का छात्र वैज्ञानिक, विद्वान और टैक्नोक्रेट अपने शोध कार्य के लिए पुस्तकालय पर निर्भर करते हैं।

शैक्षणिक पुस्तकालय की आवश्यकता
(Need of Academic Libraries)

वर्तमान में प्रकाशनों की संस्था एवं मूल्य में वृद्धि, नए-नए स्वरूपों में ज्ञान सामग्री की उपलब्धता, नए-नए पाठ्यक्रमों का प्रारम्भ, उच्चस्तरीय शिक्षा पर बल आदि कुछ ऐसे कारक हैं जिनके कारण प्रत्येक शिक्षण संस्थान में एक उत्तम पुस्तकालय का होना आवश्यक हो गया है। शिक्षण की पद्धति और प्रकृति में जो परिवर्तन आया है उसने पुस्तकालयों का महत्व और

भी बढ़ा दिया है। आज पुस्तकालय अध्ययन एवं अध्यापन के प्रमुख केन्द्र माने जाते हैं। इस प्रकार विविध प्रकार की अध्ययन सामग्री के संग्रहण उसके संरक्षण और सम्प्रेषण के लिए शैक्षणिक संस्था में पुस्तकालय की आवश्यकता होती है।

शैक्षणिक पुस्तकालय के उद्देश्य एवं कार्य

(Objectives and Functions of Academic Libraries)

शैक्षणिक पुस्तकालयों की स्थापना सम्बन्धित शिक्षण संस्थान (विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय) की शिक्षा सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए की जाती है। इन आवश्यकताओं को पूरा करने की दृष्टि से उच्च शिक्षा के क्षेत्र में शैक्षणिक पुस्तकालय के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

(1) शिक्षण (Teaching)

(2) शोध (Research)

(3) प्रकाशन (Publication)

(4) शिक्षा विस्तार (Expansion of education)

(5) ज्ञान का परिरक्षण (Preservation of knowledge)

(6) ज्ञान की व्याख्या (Explanation of knowledge)

(7) छात्रों में सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों और वैज्ञानिक दृष्टिकोण पैदा करना।

(8) छात्रों की कल्पना और विश्लेषणात्मक शक्ति में विकास करना।

(9) कला, विज्ञान, वाणिज्य, प्रौद्योगिकी आदि के क्षेत्र में विश्वस्तर पर होने वाले विकास से छात्रों को परिचित कराना।

(10) छात्रों में अध्ययन के प्रति आत्मनिर्भरता पैदा करना।

कार्य (Function) – वर्तमान शैक्षणिक पुस्तकालय अपनी सम्बन्धित संस्था के उद्देश्यों को पूरा करने में संलग्न है। किसी भी शैक्षणिक पुस्तकालय के निम्नलिखित प्रमुख कार्य हैं—

(1) छात्रों, शोध छात्रों, शिक्षकों एवं अन्य सदस्यों को उनकी शिक्षा, शोध तथा पठन-पाठन से सम्बन्धित सामग्री उपलब्ध कराना।

(2) ऐसी उपयोगी सामग्री भी उपलब्ध कराना जिससे (i) छात्रों में कल्पना एवं विश्लेषणात्मक शक्ति का विकास हो, (ii) सामाजिक, सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों के प्रति उनकी आस्था बढ़े, (iii) विश्व और देश में कला, विज्ञान प्रौद्योगिकी आदि के क्षेत्र में होने वाली प्रगति से परिचित होते रहें, (iv) अपने जीवन को आत्मनिर्भर बनाने में सक्षम सिद्ध हों।

(3) विभिन्न प्रकार के उपाय अथवा प्रयास कर छात्रों में अध्ययन के प्रतिरुचि उत्पन्न करना।

(4) नवीन आगन्तुक छात्रों को पुस्तकालय और उसके द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं से परिचित कराना।

(5) समय-समय पर पाठक शिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना।

(6) पाठकों को विभिन्न प्रकार की उपयोगी सेवाएँ—संदर्भ सेवा, प्रलेखन सेवा, सामयिक जागरूकता सेवा, चयनित सूचना प्रसार सेवा आदि प्रदान करना।

(7) नई तकनीकों विशेष रूप से कम्प्यूटर, इन्टरनेट आदि का अनुप्रयोग कर कम से कम समय में पाठकों की अध्ययन एवं सूचना सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा करना।

शैक्षणिक पुस्तकालयों के प्रकार
(TYPES OF ACADEMIC LIBRARIES)

प्रश्न—उच्च शिक्षा के उन्नयन में पुस्तकालय के महत्व तथा भूमिका की विवेचना कीजिए।

Discuss the role and importance of the library in promoting higher education.

अथवा (Or)

एक विद्यालय पुस्तकालय किस प्रकार से एक महाविद्यालय और विश्वविद्यालय पुस्तकालय से भिन्न है ? विद्यालय पुस्तकालय के कार्यों का वर्णन कीजिए।

How does a school library differ from a college and university library ? Discuss its functions.

अथवा (Or)

"भारतीय शैक्षणिक पुस्तकालय प्रणाली के अन्तर्गत विद्यालयी पुस्तकालय सबसे कम विकसित संस्था है।" विवेचना कीजिए कि मुदालियर कमीशन की संस्तुतियाँ माध्यमिक विद्यालय पुस्तकालयों के विकास में किस प्रकार सहायक सिद्ध हो सकती है ?

"School libraries are least developed institutions in the Indian academic library system". Discuss and explain how far the Mudaliar Commission recommendations have been helpful in the development of secondary school libraries.

अथवा (Or)

उच्च शिक्षा की संस्थानों में पुस्तकालयों के महत्व पर प्रकाश डालिए।

Discuss the importance of libraries in the institution of higher education.

अथवा (Or)

विद्यालय पुस्तकालय के कार्यों एवं महत्व का वर्णन कीजिए।

Describe the functions and importance of school library.

अथवा (Or)

आधुनिक विश्वविद्यालय पुस्तकालय के प्रमुख कार्यों का उल्लेख कीजिए। क्या भारत के विश्वविद्यालय पुस्तकालय यह कर्त्तव्य निभा रहे हैं ?

State the important functions of a modern university library. Are the university libraries in India discharging these functions ?

अथवा (Or)

एक विश्वविद्यालय में विभागीय पुस्तकालयों के क्या उद्देश्य हैं ? क्या ये विभागीय पुस्तकालय उपयोगी हैं ? व्याख्या कीजिए।

What are the objectives of departmental libraries in a university ? Are these departmental libraries useful ? Discuss.

अथवा (Or)

विश्वविद्यालय के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की पूर्ति में विश्वविद्यालय पुस्तकालय की भूमिका एवं कार्यों की विवेचना कीजिए।

Discuss the role and functions of the university library in achieving the aims and objectives of the university.

अथवा (Or)

शैक्षणिक पुस्तकालयों के विभिन्न प्रकारों की विवेचना कीजिए।

Discuss various types of academic libraries.

उत्तर—

शैक्षणिक पुस्तकालय
(Academic Libraries)

किसी भी शैक्षणिक संस्था से सम्बद्ध पुस्तकालय शैक्षणिक पुस्तकालय कहलाता है। शैक्षणिक संस्था वह होती है जिसमें छात्र-छात्राओं को औपचारिक शिक्षा प्रदान की जाती है तथा अध्ययन एवं शोध कार्य किया जाता है। छात्र अपने किसी निश्चित पाठ्यक्रम के अनुसार अध्ययन कार्य को पूरा करते हैं। शैक्षणिक पुस्तकालय अपने उद्देश्य, क्षेत्र और सेवाओं के आधार पर सार्वजनिक एवं विशिष्ट पुस्तकालयों से भिन्न होते हैं। इनका उद्देश्य अपनी पैतृक शिक्षण संस्था के शिक्षण कार्यक्रम को पूरा करने में प्रभावपूर्ण ढंग से सहयोग प्रदान करना है। इन पुस्तकालयों का स्वरूप, संग्रह, कार्य तथा सेवाएँ पैतृक संस्था की प्रकृति पर आधारित होती हैं, शैक्षणिक समुदाय के लिए पुस्तकालय एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक बौद्धिक संसाधन है जो अपने सदस्यों के स्व-विकास में सहयोग करती हैं, और पाठ्यक्रम सम्बन्धी आवश्यकताओं तथा अध्ययन एवं शोध को बढ़ावा देती हैं।

वर्तमान शैक्षणिक व्यवस्था के अन्तर्गत विद्यालय से विश्वविद्यालय स्तर तक अध्ययन एवं अध्यापन के कार्य में सहयोग प्रदान करने की दृष्टि से शैक्षणिक पुस्तकालयों को विभिन्न प्रकारों अथवा श्रेणियों में विभाजित किया गया है।

शैक्षणिक पुस्तकालयों के प्रकार
(Types of Academic Libraries)

सामान्यतः शैक्षणिक प्रणाली के अन्तर्गत पुस्तकालयों को तीन प्रकारों में विभाजित किया गया है—

(1) विद्यालय पुस्तकालय (School Libraries),

(2) महाविद्यालय पुस्तकालय (College Libraries),

(3) विश्र्वविद्यालय पुस्तकालय (University Libraries)।

विद्यालय पुस्तकालय (School Libraries)

प्राथमिक से लेकर उच्चतर माध्यमिक शिक्षण संस्थाओं के पुस्तकालय इस श्रेणी में आते हैं। बालकों में पढ़ने की आदत का विकास करना और उसकी विचार शक्ति को प्रबल बनाना परम आवश्यक है और इस कार्य को केवल विद्यालयी शिक्षा के द्वारा ही पूर्ण किया जा सकता है। इसलिए प्रत्येक विद्यालय में एक उन्नत और व्यवस्थित पुस्तकालय का होना नितांत आवश्यक है, जिससे इस कार्य को पूर्ण किया जा सके। पूर्व में विद्यालय पुस्तकालयों

में मात्र उन पुस्तकों का समावेश किया जाता था जो छात्रों के पाठ्यक्रम से सम्बन्धित होती थीं या उन्हें पढ़ायी जाती थीं। परन्तु सन् 1952-53 में माध्यमिक शिक्षा आयोग ने माध्यमिक शिक्षा पर एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। जिसमें सुझाव दिया गया है कि एक विद्यालय पुस्तकालय में पाठ्यक्रम से सम्बन्धित पुस्तकों के अतिरिक्त कुछ मनोरंजनात्मक व अन्य ज्ञानवर्धक साहित्य को भी समावेशित करना चाहिए जिससे विद्यालयों के छात्र अपनी रुचियों को विकसित करने के साथ-साथ ज्ञान की भी वृद्धि कर सकें साथ ही पुस्तकालय कर्मचारियों को ऐसा होना चाहिए जो छात्रों में पढ़ने की रुचि का विकास करने में पूर्णरूप से सहायक हों।

विद्यालय पुस्तकालय निश्चित रूप से एक ऐसा केन्द्र है, जो विद्यालय के छात्रों में स्वाध्याय की प्रवृत्ति का विकास कर उनमें भविष्य के प्रति निर्णय लेने की क्षमता को विकसित कर सकता है।

विद्यालय पुस्तकालय के कार्य एवं उद्देश्य
(Objectives and Functions of School Library)

विद्यालय पुस्तकालयों के निम्नलिखित कार्य एवं उद्देश्य हैं—

(1) विद्यालयों में अध्ययन एवं अध्यापन कार्य कराने वाले शिक्षकों एवं छात्रों की आवश्यकता एवं अभिरुचि के अनुरूप पुस्तकों एवं अन्य अध्ययन सामग्री का अधिग्रहण करना, उन्हें अध्ययन हेतु उपलब्ध कराना।

(2) छात्रों में पुस्तकालय में संग्रहित पुस्तकों को पढ़ने के प्रति अभिरुचि उत्पन्न करना तथा उनकी रुचि की पठनीय सामग्री प्राप्त करने में उनकी सहायता करना।

(3) पुस्तकालय में आने वाले प्रत्येक छात्र एवं अन्य पाठकों को पुस्तकालय को उपयोग करने की प्रारम्भिक शिक्षा देना जिससे वे स्वयं पुस्तकालय की सामग्री का लाभ उठा सकें।

(4) छात्रों को पुस्तकालय उपयोग में प्रशिक्षित कर उनमें बिना किसी की सहायता के अपनी सामग्री स्वयं प्राप्त करने की क्षमता को विकसित करना।

(5) छात्रों को पुस्तकों एवं ज्ञान तथा सूचना के अन्य स्रोतों के विवेकपूर्ण उपयोग में सक्षम बनाने हेतु उनके मस्तिष्क में पुस्तकों के प्रति भाव उत्पन्न करना और उनमें पठन-पाठन की रुचि उत्पन्न करना।

(6) आजीवन शिक्षा के लिए छात्रों में स्व-शिक्षा की प्रभावशाली योग्यता एवं निपुणता उत्पन्न करना।

(7) विद्यालय के विभिन्न शैक्षणिक कार्यक्रमों में सहयोग करना एवं समर्थन देना।

(8) शिक्षकों के स्वयं के शैक्षणिक विकास के लिए ज्ञान एवं सूचना प्राप्ति के विभिन्न स्रोतों का उपयोग करने योग्य बनाना।

उपर्युक्त कार्यों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु पाठ्य-सामग्री और अन्य अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराने के साथ-साथ श्रव्य-दृश्य सामग्री की सहायता से शिक्षण तथा अनुदेश की विविध पद्धतियाँ भी विकसित की जाती हैं। विभिन्न आयु वर्ग के छात्रों के लिए अनेक विभिन्न प्रकार की गतिविधियों की योजना बनाकर उनमें सम्मिलित होने के लिए भी उन्हें प्रोत्साहित किया जाता है। वर्तमान में पुस्तकालयों को मात्र एक सुविधा के रूप में ही नहीं बल्कि ज्ञान के विभिन्न आयामों की प्राप्ति के लिए प्रमुख साधन के रूप में भी स्वीकार किया

गया है। विद्यालय पुस्तकालय शैक्षिक एवं गैर शैक्षिक दोनों प्रकार की गतिविधियों में छात्रों के लिए सहायक होते हैं।

प्राथमिक विद्यालय पुस्तकालय

प्राथमिक विधालयों में सामान्यत: 5 वर्ष से 10 वर्ष तक की आयु के बालक-बालिकाएँ आते हैं। यह उम्र ऐसी होती है जिसमें उनकी प्रवृत्तियों और रुचियों का निर्माण किया जा सकता है। बालक तथा बालिकाओं को यहाँ प्रथम बार पुस्तकालय के उपयोग का अवसर प्राप्त होता है। इस स्तर के छोटे-छोटे बच्चे पुस्तकालय में कहानियाँ सुनने के लिए, पुस्तकों का अवलोकन तथा अध्ययन हेतु, मनोरंजनात्मक सामग्री को प्राप्त करने हेतु और अपने प्रश्नों का उत्तर पाने हेतु आते हैं। इस स्तर पर पुस्तकालयों को उनमें पढ़ने की अभिरुचि विकसित करने का पूरा प्रयास करना चाहिए।

अत: प्राथमिक विद्यालयों के पुस्तकालय को अपने उद्देश्य की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित कार्य करने चाहिए—

(1) बालक-बालिकाओं में पुस्तकों के पठन हेतु रुचि उत्पन्न करना,

(2) पुस्तकों के प्रति प्रेम उत्पन्न करना,

(3) छात्रों एवं शिक्षकों के लिए उनकी आवश्यकतानुसार ज्ञान प्राप्ति एवं शिक्षण हेतु अन्य महत्वपूर्ण अध्ययन सामग्री का संग्रह करना,

(4) बालक-बालिकाओं का ध्यान और उनमें उत्सुकता उत्पन्न करने एवं उनका ध्यान आकर्षित करने के लिए समस्त संग्रह का उचित व्यवस्थापन एवं प्रदर्शन करना,

(5) पठन-पाठन और पुस्तकों का उपयोग करने की रुचि उत्पन्न करने के लिए विविध प्रकार के मनोरंजात्मक कार्यक्रम कराना और सेवाएँ उपलब्ध कराना,

(6) पुस्तकालय में सभी आवश्यक भौतिक सुविधाएँ—भवन, फर्नीचर और उपकरण आदि उपलब्ध कराना,

(7) पढ़ने में रुचि और उत्सुकता उत्पन्न करने के लिए विविध प्रकार की सामग्री जिससे उन्हें पृथ्वी, ब्रह्माण्ड, समुद्र, वन्यजीव, प्राणिजगत, विश्व एवं उसके देश, विज्ञान और प्रौद्योगिकी आदि के सम्बन्ध में जानकारी मिल सके।

उच्चतर माध्यमिक विद्यालय पुस्तकालय

उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पुस्तकालयों के आकार तथा संकलन का स्तर प्राथमिक विद्यालय पुस्तकालयों के आकार तथा संकलन से कुछ विशिष्ट होता है। उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पुस्तकालय इसलिए भी बड़े होते हैं कि इन विद्यालयों में शिक्षकों तथा छात्र-छात्राओं की संख्या अधिक होती है, पुस्तकें तथा अन्य ज्ञान-सामग्रियाँ विभिन्न स्तरों छठवीं से आठवीं कक्षा (मिडिल कक्षाएँ), नवीं एवं दसवीं कक्षा (माध्यमिक कक्षाएँ) तथा ग्यारहवीं एवं बारहवीं कक्षा (उच्चतर माध्यमिक कक्षाएँ) के छात्रों की अभिरुचि के अनुसार होती है। किसी बड़े उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के पुस्तकालय के अन्तर्गत विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, गणित तथा भाषा एवं साहित्य आदि सभी विषयों के प्रथक विभाग हो सकते हैं। इन पुस्तकालयों में अध्ययन कक्ष, गोष्ठी तथा सम्मेलन कक्ष विशिष्ट प्रकार की सामग्री—चलचित्र, टेप रिकार्ड, कम्प्यूटर आदि के लिए भी अलग-अलग कक्ष हो सकते हैं। उच्चतर माध्यमिक शिक्षा कार्यक्रम का अपना एक विशेष महत्व होता है। यह वह समय होता

है जो छात्र-छात्राओं के सर्वांगीण विकास के लिए निर्णायक वर्ष होते हैं। विद्यार्थी जीवन की इस अवस्था में निर्मित अच्छी रुचियाँ और आदतें चिरस्थायी होती हैं।

उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के पुस्तकालयों के निम्नलिखित उद्देश्य होते हैं—

(1) पाठ्यक्रम से सम्बन्धित अध्ययन सामग्री के उपयोग हेतु रुचि जागृत करने के साथ-साथ उनमें सामान्य ज्ञान एवं अन्य सूचनात्मक साहित्य के अध्ययन के प्रति भी रुचि जागृत करना,

(2) छात्रों एवं शिक्षकों में ज्ञान एवं सूचना को प्राप्त करने हेतु रुचि का विकास करना, जिससे वे विभिन्न संदर्भ स्रोतों एवं सूचना सामग्री में से किसी भी सम्बन्धित विषय पर स्वयं सूचना ढूँढ़ सकें और उसका उपयोग कर सकें,

(3) विभिन्न प्रकार के अन्य पुस्तकालयों का भी अवलोकन कराना, जिससे वे उनके सम्बन्ध में भी ज्ञान प्राप्त कर सकें और आवश्यकता होने पर अपने अध्ययन हेतु उनका उपयोग करने में सक्षम बन सकें।

भारत में विद्यालय पुस्तकालयों की स्थिति

भारत में स्वतन्त्रता के पश्चात् प्राथमिक, माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की संख्यात्मक वृद्धि हुई है, गुणात्मक नहीं, इसी प्रकार इन विद्यालयों में पुस्तकालयों की स्थिति भी ज्यादा अच्छी नहीं है और भारत के विद्यालय पुस्तकालयों की अत्यन्त निराशाजनक छवि उभरकर सामने आई है। नवोदय विद्यालय समिति द्वारा जो नवोदय विद्यालय खोले गए हैं उनमें तथा केन्द्रीय विद्यालयों में पुस्तकालयों की स्थिति संतोषजनक है। अन्य विद्यालयों एवं विद्यालय पुस्तकालयों का उचित विकास न हो पाने के पीछे अनेक कारण है, जैसे—धन का अभाव, भवन का अभाव, प्रशिक्षित कर्मचारियों का अभाव, उपकरणों का अभाव आदि। इन विभिन्न कारणों के फलस्वरूप विद्यालय पुस्तकालय अपने उद्देश्य की प्राप्ति करने में सक्षम नहीं है।

राष्ट्रीय शैक्षिक शोध तथा प्रशिक्षण परिषद् (National Council of Educational Research and Training – NCERT) द्वारा विद्यालयों में पुस्तकालय, प्रयोगशाला और उपकरणों की उपलब्धता जानने के लिए 1981 में एक सर्वेक्षण कराया गया था। उस समय भारत में लगभग 6 लाख विद्यालय थे जिनकी संख्या विगत 25 वर्षों में बढ़कर अब 10 लाख के लगभग हो गई होगी। इन विद्यालयों का नियंत्रण एवं प्रबन्ध विभिन्न निकायों द्वारा किया जाता है। जैसे—(i) राज्य सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा, (ii) भारत सरकार के केन्द्रीय शिक्षा बोर्ड द्वारा, (iii) स्थानीय निकायों द्वारा जिनमें नगर निगमों, नगरपालिका, ग्राम पंचायत आदि सम्मिलित हैं, (iv) व्यक्तिगत संस्थाओं द्वारा आदि।

विभिन्न निकायों द्वारा नियंत्रित इन विद्यालयों में एकरूपता नहीं है। पुस्तकालय सुविधा की दृष्टि इस सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि केवल 41.80 प्रतिशत विद्यालयों में ही पुस्तकालय सुविधा उपलब्ध है। 40 प्रतिशत विद्यालयों में पूर्णकालिक प्रशिक्षित पुस्तकालयाध्यक्ष नियुक्त हैं। जहाँ तक पुस्तकों की संख्या का प्रश्न है वहाँ 17.8 प्रतिशत विद्यालयों में 100 पुस्तकें, 9.6 प्रतिशत में 100 से 249 पुस्तकें, 5.3 प्रतिशत विद्यालयों में 250 से 499 तक पुस्तकें, 3.6 प्रतिशत में 500 से 999 पुस्तकें, 2.52 प्रतिशत विद्यालयों में 1000 से 1999 तक पुस्तकें,

महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के उन्नयन में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) की भूमिका

(ROLE OF UNIVERSITY GRANTS COMMISSION (U.G.C.) IN THE DEVELOPMENT OF COLLEGE AND UNIVERSITY LIBRARIES)

प्रश्न—महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के विकास में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के कार्यों एवं भूमिका का वर्णन कीजिए।

State the functions of UGC for the development of college and university libraries.

अथवा (Or)

भारत में महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के विकास में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की भूमिका की चर्चा कीजिए।

Discuss the role of UGC in the development of college and university libraries in India.

अथवा (Or)

यू.जी.सी. द्वारा भारत में विश्वविद्यालयी एवं महाविद्यालयी पुस्तकालयों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? विवेचना कीजिए।

UGC has played an important role in the development of college and university libraries in India. Do you agree with the statement ? Discuss.

अथवा (Or)

भारतीय महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के विकास में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) के योगदान की विवेचना कीजिए।

Discuss the contribution of University Grants Commission to the development of college and university libraries in India.

उत्तर—उच्च शिक्षा के विकास, शिक्षण संस्थानों की देखभाल एवं उन्हें आधुनिक परिप्रेक्ष्य में उपयोगी बनाने और सभी प्रकार की सुविधायें उपलब्ध कराने का पूर्ण दायित्व शासन का होता है। इस कार्य के लिए पर्याप्त धन उपलब्ध कराने और यह देखने के लिए कि धन का उपयोग उचित प्रकार से हो रहा है, शासन आवश्यक व्यवस्था करता है। उच्च शिक्षा के संदर्भ में ब्रिटेन का अनुसरण करते हुए भारत सरकार ने सेन्ट्रल एडवाइजरी बोर्ड ऑफ एजूकेशन की उप-समिति की सिफारिश पर 1945 में यूनिवर्सिटी ग्राण्ट्स कमैटी की नियुक्ति की लेकिन समिति के अध्यक्ष और सदस्यों को पूर्णकालिक न बनाकर और समिति को आवश्यक धन उपलब्ध न करवाकर उसे निष्क्रीय और अनुपयोगी बना दिया। समिति का मुख्य कार्य शिक्षा विभाग को केवल परामर्श देना था फलस्वरूप उच्च शिक्षा के विकास के संदर्भ में इस समिति की कोई व्यावहारिक उपयोगिता नहीं थी। इन समस्त बातों को ध्यान में रखते हुए राधाकृष्णन आयोग (1948) ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि उच्च शिक्षा के विकास त[...]

सुधार तथा कालेज एवं विश्वविद्यालयों को अनुदान देने से सम्बद्ध संस्तुतियों के क्रियान्वयन हेतु आवश्यक अधिकारों से युक्त एक स्वतन्त्र आयोग का गठन किया जाना चाहिए। राधाकृष्णन आयोग की इस संस्तुति के आधार पर भारत सरकार ने 1953 में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की नियुक्ति की और 1956 में एक विधेयक पारित कर संसद ने उसे वैधानिक रूप प्रदान कर दिया। देश के प्रमुख अर्थशास्त्री, प्रशासक एवं शिक्षाविद् डॉ. सी. डी. देशमुख इस आयोग के प्रथम अध्यक्ष नियुक्त किए गए। डॉ. देशमुख ने पुस्तकालयों के सम्बन्ध में विश्वविद्यालय आयोग की संस्तुतियों को दृढ़ता के साथ क्रियान्वित करने का निश्चय किया। विश्वविद्यालय और महाविद्यालय पुस्तकालयों का व्यापक रूप से अध्ययन करने और उनके सुधार तथा विकास हेतु परामर्श देने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) ने डॉ. एस. आर. रंगनाथन की अध्यक्षता में पुस्तकालय समिति की नियुक्ति की। इस समिति ने आयोग को पुस्तकालयों के विकास और उन्नयन हेतु एक रूपरेखा प्रस्तुत की।

आयोग केन्द्र तथा राज्य सरकारों के मध्य महत्वपूर्ण कड़ी का कार्य करता है। उच्च शिक्षा के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए राष्ट्रीय अनुदान का वितरण महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में विकास कार्यक्रम हेतु करता है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग प्रत्येक पंचवर्षीय योजना के आरम्भ में विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों की विकास योजनाओं पर प्रस्ताव आमंत्रित करता है। आयोग द्वारा नियुक्त विशेषज्ञों की समिति प्राप्त प्रस्तावों का अध्ययन कर उन पर अपना अभिमत प्रस्तुत करती है। आयोग का मुख्य कार्य केन्द्रीय अनुदान के नियंत्रित एवं व्यवस्थित संप्रवाह के साथ-साथ भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा के समन्वय एवं उन्नयन हेतु सभी आवश्यक प्रयास करने, विश्वविद्यालयों को स्वायत्तशासी स्तर प्रदान करने, शिक्षा और अनुसंधान के उच्च स्तर एवं मानकों का निर्धारण तथा व्यवस्था करना है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग भारत में उच्च शिक्षा से सम्बन्धित मुख्य पक्षों पर विभिन्न स्तरों पर सार्थक संवाद भी स्थापित कर रहा है। भारत का विश्वविद्यालय अनुदान आयोग विश्व के किसी भी राष्ट्र की अनुदान प्रदान करने वाली किसी भी संस्था से एक अलग विशेषता लिए हुए है। ये संस्थाएँ मात्र अनुदान की व्यवस्था करती हैं, जबकि भारत में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अनुदान की व्यवस्था के साथ-साथ मानकों के निर्धारण एवं समन्वय का कार्य भी कर रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना भारतीय विश्वविद्यालय शिक्षा की वृद्धि एवं विकास यात्रा में मील का पत्थर सिद्ध हुआ है।

यू. जी. सी. की शक्तियाँ और कार्य—विश्वविद्यालय में अध्यापन, परीक्षा तथा अनुसंधान के मानकों को सुनिश्चित करने तथा उन्हें बनाए रखने के लिए और विश्वविद्यालय शिक्षा के उन्नयन और समन्वयन के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को अधिनियम द्वारा अधिकार प्राप्त है कि वह विश्वविद्यालयों और सम्बन्धित अन्य निकायों से सलाह कर विश्वविद्यालयों के उन्नयन हेतु आवश्यक कदम उठा सकता है। इन उद्देश्यों के पूर्ति के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग—

- वित्तीय आवश्यकताओं की पूछताछ कर सकता है और विश्वविद्यालयों को अनुदान आवंटित कर सकता है।
- सामान्य सेवाएँ एवं सुविधाएँ स्थापित कर उन्हें व्यवस्थित रख सकता है।
- विश्वविद्यालय शिक्षा के विकास और उन्नयन लिए आवश्यक उपायों की अनुशंसा कर सकता है।
- अनुदान के आवंटन में तथा नये विश्वविद्यालयों की स्थापना में सलाह दे सकता है।

इस तरह विश्वविद्यालय अनुदान आयोग भारत में उच्च शिक्षा के लिए नीति एवं कार्यक्रमों को बनाता है तथा निर्देशित करता है। आयोग के पास सभी केन्द्रीय विश्वविद्यालयों, डीम्ड विश्वविद्यालयों, दिल्ली विश्वविद्यालय के 70 महाविद्यालयों और बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के सभी महाविद्यालयों को उनके रख-रखाव हेतु अनुदान उपलब्ध कराने का पूर्ण उत्तरदायित्व है। यह उपर्युक्त सभी विश्वविद्यालयों तथा उनसे सम्बद्ध सभी महाविद्यालयों को योजनागत अनुदान भी उपलब्ध कराता है। आयोग देश के सभी राज्यों के उपयुक्त पात्र विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों को पूरक अनुदान प्रदान कर वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता है।

आयोग द्वारा नियुक्त प्रमुख आयोग एवं समितियाँ—शिक्षा सरकार का एक महत्वपूर्ण विषय है जिसके लिए स्वतन्त्रता के पश्चात् सरकार ने कई आयोग एवं समितियों का गठन किया कि वे भारतीय शिक्षा प्रणाली के विकास एवं सुधार के लिए अनुशंसाएँ करें। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग देश में एक ऐसी महत्वपूर्ण वैधानिक, सलाहकार और कार्यकारी निकाय है जिसकी स्थापना सरकार की शिक्षा के क्षेत्र में संवैधानिक उत्तरदायित्वों के निर्वाह हेतु उसे सलाह देना है। यह अपनी इस प्रदत्त भूमिका को उच्च शिक्षा के साथ-साथ विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों के पुस्तकालयों के विकास एवं उन्नयन हेतु अपनी भूमिका को निभा रही है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने समय-समय पर उच्च शिक्षण संस्थाओं के पुस्तकालयों की स्थिति उनके विकास एवं उन्नयन हेतु कई समितियों और आयोगों का गठन किया है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा नियुक्त प्रमुख आयोग एवं समितियाँ निम्नलिखित हैं—

(i) पुस्तकालय समिति (1957)
(ii) पुस्तकालय विज्ञान पर समीक्षा समिति (1961)
(iii) शिक्षा आयोग (1964-66)
(iv) पाल समिति (1970)
(v) मेहरोत्रा समिति (1983)
(vi) विश्वविद्यालयों/पुस्तकालयों के लिए राष्ट्रीय नेटवर्क प्रणाली पर समिति (इनफ्लिबनेट) (1988)
(vii) पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान पर पाठ्यक्रम विकास समिति (1990-93)
(viii) पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान पर पाठ्यक्रम विकास समिति (2001)

उपर्युक्त सभी समितियों एवं आयोगों का विस्तृत विवरण पिछले अध्याय 5 में दिया जा चुका है।

शैक्षणिक पुस्तकालयों के विकास हेतु यू. जी. सी. के महत्वपूर्ण कार्यक्रम

सुसंगठित एवं सुसज्जित पुस्तकालय और इसकी उच्च शिक्षा में भूमिका के मूल्य एवं महत्व को अनुभव करके, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कुछ आयोगों और समितियों की अधिकांश अनुशंसाओं को स्वीकार कर लिया है। यह संग्रह विकास, पुस्तकों एवं विषय पत्रिकाओं के अधिग्रहण, फर्नीचर एवं उपकरणों के क्रय और नये पुस्तकालय भवन के निर्माण आदि में वित्तीय सहायता प्रदान कर एक अद्वितीय विकासात्मक भूमिका का निर्वाह करती है।

केन्द्रीय सरकार विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा विभिन्न महत्वपूर्ण परियोजनाओं के लिए पर्याप्त एवं समुचित अनुदान प्रदान करती है। विभिन्न परियोजनाएँ निम्नलिखित हैं जिनके माध्यम से आयोग पुस्तकालयों के विकास में सक्रिय योगदान दे रहा है—

- गेहूँ देय शैक्षणिक विनिमय कार्यक्रम (1951-61)
- पुस्तक बैंक (1963-64)
- क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्र (1976)
- अध्ययन केन्द्र
- राष्ट्रीय सूचना केन्द्र एवं अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्र
- क्षेत्र अध्ययन केन्द्र
- संग्रह विकास
- पुस्तकालय भवन, उपकरण एवं फर्नीचर।

इन योजनाओं ने विश्वविद्यालय पुस्तकालयों को विगत पाँच दशकों में तीव्र विकास करने में सहायता प्रदान की है। प्रत्येक योजना का निम्नलिखित संक्षिप्त परिचय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा नवीन योजनाओं से प्रत्येक पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के विकास के नए आयामों को बतायेगा।

गेहूँ देय शैक्षणिक विनिमय कार्यक्रम (1951-61)

यह परियोजना 1951 में अस्तित्व में आई जब अमेरिकन कांग्रेस ने सार्वजनिक कानून 480 (पी. एल. 480) को पारित किया। इस अधिनियम के अन्तर्गत भारत को $ 190,000,000 का ऋण प्रदान किया गया जिससे वह संयुक्त राज्य अमेरिका से गेहूँ खरीदकर स्वतंत्रोत्तर भारत के खाद्य अभाव को समाप्त कर सके।

अधिनियम में आगे निर्दिष्ट किया गया है कि देय धन के ब्याज के रूप में प्राप्त $ 5,000,000 की राशि का उपयोग उच्च शिक्षा के उन्नयन हेतु पुस्तकों एवं पत्रिकाओं के क्रय में, वैज्ञानिक उपकरणों के क्रय में तथा भारत एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच शिक्षा शास्त्रियों तथा विद्वानों के विनिमय में किया जाना चाहिए।

इस प्रकार गेहूँ देय अनुदान और विनिमय कार्यक्रम ने पुस्तकालय व्यवसाय के उन्नयन में तथा विश्वविद्यालय और अनुसंधान के पुस्तकालयों के विकास में सहायता प्रदान की।

पुस्तक बैंक (1963-64)

1963-64 में, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने 'पुस्तक बैंक' नामक एक नयी योजना को क्रियान्वित किया और सभी विषयों की मंहगी पाठ्य-पुस्तकों की अनेक प्रतियों को रखने के लिए अनुदान प्रदान करने की अनुशंसा की। इस योजना का उद्देश्य गरीब, जरूरतमंद तथा योग्य छात्रों को घर पर अध्ययन के लिए लम्बी अवधि के लिए नाम मात्र की जमा राशि लेकर पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध कराना था। प्रारम्भ में स्नातकोत्तर महाविद्यालयों को रु. 15,000 तथा स्नातक महाविद्यालयों को रु. 10,000 पुस्तक बैंक की स्थापना हेतु उपलब्ध कराए गए। 1975 के पूर्व विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने उन महाविद्यालयों को 75% अनुदान प्रदान किया जो महाविद्यालय में नामांकित छात्रों की संख्या के आधार पर 25% समतुल्य अनुदान देने पर सहमत थे।

1975 के बाद, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने योजना अवधि में एक महाविद्यालय में प्रति छात्र रु. 60 की सहायता जो अधिकतम रु. 50,000 हो, प्रदान की। इसमें पुस्तकालय अनुदान के 30% तक पुस्तक बैंक के उपयोग के लिए स्वीकृत किए गए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग समीक्षा समिति ने 1981 में अनुभव किया कि पुस्तक बैंक योजना के क्रियान्वयन में एकरूपता नहीं है और यह एक प्रकार से सभी विश्वविद्यालय और महाविद्यालयों में अपना प्रभाव नहीं छोड़ सकी। अतः इसे बन्द कर दिया।

अध्ययन केन्द्र—चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने एक नई योजना बनाई और प्रभावी पुस्तकालय सेवाएँ प्रदान करने के लिए अध्ययन केन्द्रों की स्थापना की। कुछ चुने हुए अध्ययन केन्द्रों को विभिन्न मदों में व्यय हेतु आवर्ती तथा अनावर्ती अनुदान उपलब्ध कराया गया।

क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्र (1976)

1976 में, कुलपतियों के सम्मेलन में, देश के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा के साथ-साथ पुस्तकालय सुविधाओं की आवश्यकता पर विचार-विमर्श किया गया। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने क्षेत्रवार केन्द्रीय पुस्तकालय सुविधाओं को प्रदान करने की व्यवहारिता की राय दी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गठित समिति ने 1976 में दिल्ली में एक राष्ट्रीय केन्द्र और चार केन्द्र कलकत्ता, बम्बई, बंगलौर और बनारस विश्वविद्यालयों में स्थापित करने की अनुशंसा की। क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्रों को स्थापित करने का उद्देश्य पूरे क्षेत्र में अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करके प्रभावी सूचना सेवाएँ यथा प्रतिलिपिकरण, माइक्रोफिल्म एवं अन्य यंत्रीकृत सेवाएँ प्रदान करना था। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में प्रत्येक क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्र को 60,000 रु. का अनुदान प्रदान किया। पाँचवीं पंचवर्षीय योजना के लिए 02 करोड़ रुपये की स्वीकृति इन केन्द्रों के विकास हेतु दी गई।

राष्ट्रीय सूचना केन्द्र और अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्र

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्रों की स्थापना के कार्यक्रम का छठवीं योजना के अन्तर्गत विभिन्न विषयों में नवीन सूचना प्रदान करने के उद्देश्य से, समीक्षा की गई। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने तीन राष्ट्रीय सूचना सेवा केन्द्रों की स्थापना की तथा सात विशिष्ट क्षेत्रों में अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्रों की। इनकी स्थापना शिक्षकों तथा अनुसंधानकर्ताओं को सूचना के विकसित स्वरूप तथा ग्रन्थपरक सहयोग प्रदान करने के लिए की गयी। ये सभी वर्तमान विश्वविद्यालयों और अनुसन्धान संस्थानों में स्थापित किये गये।

(क) राष्ट्रीय सूचना केन्द्र

राष्ट्रीय सूचना केन्द्रों ने विविध विषयों में सन्दर्भ एवं सूचना सेवा, प्रलेखन सेवा और सामाजिक जागरूकता सेवा उपयोगकर्ताओं की माँग पर देने के लिए प्रस्तावित अध्ययन क्षेत्रों में कम्प्यूटर डाटाबेस विकसित किया है।

(ख) अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्र

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने विभिन्न विशिष्ठ क्षेत्रों में अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्रों की स्थापना का सूत्रपात किया जो विश्वविद्यालय प्रणाली के अन्तर्गत राष्ट्रीय अनुसंधान सुविधा प्रदान करेंगे। ये स्वशासी केन्द्र विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अधिनियम के

1975 के बाद, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने योजना अवधि में एक महाविद्यालय में प्रति छात्र रु. 60 की सहायता जो अधिकतम रु. 50,000 हो, प्रदान की। इसमें पुस्तकालय अनुदान के 30% तक पुस्तक बैंक के उपयोग के लिए स्वीकृत किए गए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग समीक्षा समिति ने 1981 में अनुभव किया कि पुस्तक बैंक योजना के क्रियान्वयन में एकरूपता नहीं है और यह एक प्रकार से सभी विश्वविद्यालय और महाविद्यालयों में अपना प्रभाव नहीं छोड़ सकी। अतः इसे बन्द कर दिया।

अध्ययन केन्द्र—चौथी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने एक नई योजना बनाई और प्रभावी पुस्तकालय सेवाएँ प्रदान करने के लिए अध्ययन केन्द्रों की स्थापना की। कुछ चुने हुए अध्ययन केन्द्रों को विभिन्न मदों में व्यय हेतु आवर्ती तथा अनावर्ती अनुदान उपलब्ध कराया गया।

क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्र (1976)

1976 में, कुलपतियों के सम्मेलन में, देश के सर्वांगीण विकास के लिए शिक्षा के साथ-साथ पुस्तकालय सुविधाओं की आवश्यकता पर विचार-विमर्श किया गया। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने क्षेत्रवार केन्द्रीय पुस्तकालय सुविधाओं को प्रदान करने की व्यवहारिता की राय दी। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा गठित समिति ने 1976 में दिल्ली में एक राष्ट्रीय केन्द्र और चार केन्द्र कलकत्ता, बम्बई, बंगलौर और बनारस विश्वविद्यालयों में स्थापित करने की अनुशंसा की। क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्रों को स्थापित करने का उद्देश्य पूरे क्षेत्र में अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग करके प्रभावी सूचना सेवाएँ यथा प्रतिलिपिकरण, माइक्रोफिल्म एवं अन्य यंत्रीकृत सेवाएँ प्रदान करना था। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में प्रत्येक क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्र को 60,000 रु. का अनुदान प्रदान किया। पाँचवीं पंचवर्षीय योजना के लिए 02 करोड़ रुपये की स्वीकृति इन केन्द्रों के विकास हेतु दी गई।

राष्ट्रीय सूचना केन्द्र और अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्र

पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्रों की स्थापना के कार्यक्रम का छठवीं योजना के अन्तर्गत विभिन्न विषयों में नवीन सूचना प्रदान करने के उद्देश्य से, समीक्षा की गई। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने तीन राष्ट्रीय सूचना सेवा केन्द्रों की स्थापना की तथा सात विशिष्ट क्षेत्रों में अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्रों की। इनकी स्थापना शिक्षकों तथा अनुसंधानकर्ताओं को सूचना के विकसित स्वरूप तथा ग्रन्थपरक सहयोग प्रदान करने के लिए की गयी। ये सभी वर्तमान विश्वविद्यालयों और अनुसन्धान संस्थानों में स्थापित किये गये।

(क) राष्ट्रीय सूचना केन्द्र

राष्ट्रीय सूचना केन्द्रों ने विविध विषयों में सन्दर्भ एवं सूचना सेवा, प्रलेखन सेवा और सामाजिक जागरूकता सेवा उपयोगकर्ताओं की माँग पर देने के लिए प्रस्तावित अध्ययन क्षेत्रों में कम्प्यूटर डाटाबेस विकसित किया है।

(ख) अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्र

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने विभिन्न विशिष्ठ क्षेत्रों में अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्रों की स्थापना का सूत्रपात किया जो विश्वविद्यालय प्रणाली के अन्तर्गत राष्ट्रीय अनुसंधान सुविधा प्रदान करेंगे। ये स्वशासी केन्द्र विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अधिनियम के

खण्ड-12 (सी. सी. सी.) के अन्तर्गत स्थापित किये गये हैं। आयोग ने इन्हें पुस्तकालय विकसित करने तथा राष्ट्र के किसी भी भाग से आये अनुसन्धानकर्ताओं को अनुसंधान एवं खोज के लिए प्रयोगशाला सुविधा प्रदान करने के लिए अनुदान प्रदान किया है।

क्षेत्र अध्ययन केन्द्र

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग क्षेत्र अध्ययन केन्द्र कार्यक्रम के अन्तर्गत कुछ चुने हुए विश्वविद्यालयों को वित्तीय सहायता प्रदान कर रहा है। ये विश्वविद्यालय विश्व के सोलह भागों के कुछ देशों और क्षेत्रों के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित गहन अध्ययन कराते हैं। यह सहायता पुस्तकालय सुविधाओं को सुदृढ़ करने में भी सहायक होती है। इस परियोजना की अभी समीक्षा की जा रही है।

संग्रह विकास

भारत की विश्वविद्यालय प्रणाली विभिन्न प्रकार के विश्वविद्यालय और महाविद्यालयों को सम्मिलित करती है, जैसे—केन्द्रीय विश्वविद्यालय, राज्य विश्वविद्यालय, डीम्ड विश्वविद्यालय, सरकारी और सम्बद्ध महाविद्यालय जो केन्द्रीय और राज्य सरकारों की विभिन्न परियोजनाओं के अन्तर्गत पुस्तकालय संग्रह को विकसित करने के लिए अनुदान प्राप्त करते हैं। विश्वविद्यालयों/महाविद्यालयों के शिक्षक, छात्र और अनुसंधानकर्ता पुस्तकालय सुविधाओं का लाभ उठा सकते हैं।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अपने प्रारम्भ से ही सामान्य और विशिष्ट विकास परियोजनाओं के अन्तर्गत पुस्तकों और पत्रिकाओं के अधिग्रहण के लिए अनुदान प्रदान करता रहा है। सामान्य विकास परियोजना, केन्द्रीय पुस्तकालय के साथ-साथ विभागीय पुस्तकालयों के लिए आवंटित अनुदान है। विशिष्ट कार्यक्रम के अन्तर्गत उन्नत अध्ययन केन्द्रों के लिए, विशिष्ट सहायता के विभागों को, विभागीय सहायता के लिए प्रदत्त धन, व्यक्तिगत शिक्षकों को और शिक्षक समूहों को अनुसंधान के लिए प्रदत्त वित्तीय सहायता और विशिष्ट अनुसंधान कार्यक्रमों तथा परियोजनाओं के लिए भी वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है।

विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों को प्रत्येक पंचवर्षीय योजना अवधि के अन्तर्गत धन आवंटित किया जाता है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग निर्दिष्ट दिशानिर्देशों का पालन करते हुए पुस्तकालयों से धन की आवश्यकता के लिए प्रस्ताव प्राप्त करता है।

उचित वितरण करने के लिए, राज्य सरकार एवं विश्वविद्यालय प्रणाली के विशेषज्ञों से बनी विशेषज्ञ समिति अथवा अतिथि समिति की राय ली जाती है। अनुदान आवंटन का प्रतिरूप समिति की आवश्यकताओं एवं अनुशंसाओं को प्राप्त करने के बाद तैयार किया जाता है। आवंटित धनराशि में भिन्नता विश्वविद्यालयों में छात्रों की संख्या, सुविधाओं, आधार संरचना, पाठ्यक्रमों, विभागों की संख्या और अन्य कारकों पर निर्भर करती है। आयोग ने विश्वविद्यालय और महाविद्यालय पुस्तकालयों के संग्रह विकास में काफी कुछ योगदान दिया है परन्तु इसके बावजूद भी पुस्तकों और पत्रिकाओं के अधिग्रहण के लिए सहायता अपर्याप्त ही पायी जाती है क्योंकि यह किसी अन्य स्रोत के द्वारा भी समतुल्य पूरी नहीं होती है।

सूचना विस्फोट के कारण, बढ़ते हुए मूल्य, उपयोगकर्ताओं की पेचीदी माँग और संकुचित बजट पुस्तकालय की आवश्यकता को बढ़ा रहे हैं जो पूरा नहीं हो पा रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग पुस्तकालयों के लिए अतिरिक्त धन की माँग को पूरा नहीं कर

पा रहा है। इस समस्या के समाधान के लिए आयोग विभिन्न सहकारी कार्यक्रमों को लाया है यथा क्षेत्रीय पुस्तकालय केन्द्र, राष्ट्रीय सूचना केन्द्र, अन्तर-विश्वविद्यालय केन्द्र और सूचना तथा पुस्तकालय नेटवर्क के माध्यम से संसाधन सहभागिता (इनफ्लिबनेट)। इस प्रकार के कार्यक्रम जहाँ पुस्तकालयों की उपयोगिता को बढ़ाने में सहायक होंगे वहीं विविधि प्रकार के उपयोक्ता समूह भी लाभान्वित हो सकेंगे।

आधारभूत सुविधाएँ : पुस्तकालय भवन, उपकरण और फर्नीचर

पुस्तकालय का सुचारू रूप से कार्य करना और प्रभावी तथा दक्ष सेवा का परिचालन, कार्यकारी भवन, आधुनिक उपकरणों और उचित फर्नीचर पर निर्भर करता है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने अपने प्रारम्भ से ही विश्वविद्यालय पुस्तकालयों में भवन सुविधाओं के अभाव का अनुभव किया है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के गेहूँ देय शैक्षणिक विनिमय कार्यक्रम के अन्तर्गत पाँच पुस्तकालयों को भवन विस्तार के लिए 1951-61 के बीच रु. 54,30,000 का अनुदान दिया गया।

आयोग ने प्रत्येक पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत नये पुस्तकालय भवन के निर्माण के लिए या वर्तमान भवन के पुनर्निर्माण या विस्तार के लिए अनुदान प्रदान किया है। उपलब्ध सांख्यिकी के आधार पर आयोग ने निम्न प्रकार से अनुदान उपलब्ध कराया है—

(i) द्वितीय और तृतीय पंचवर्षीय योजना के दौरान रु. 2.67 करोड़

(ii) चौथी पंचवर्षीय योजना के दौरान रु. 78.88 लाख

(iii) पुस्तकालय भवनों के लिए मार्च 1973 तक रु. 3,83,75,289 करोड़

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के द्वारा उदार भाव से प्रदत्त अनुदान के पश्चात् भी, ये पुस्तकालयों की बढ़ती आवश्यकता के लिए अपर्याप्त हैं।

डॉ. एस. आर. रंगनाथन, अध्यक्ष विश्वविद्यालय और महाविद्यालय पुस्तकालय विकास समिति (1965) ने पुस्तकालयों की वर्तमान स्थिति का विस्तृत अध्ययन किया। समिति मुद्रित प्रलेखों के परिरक्षण और संरक्षण के लिए भी जागरूक थी। भारतीय मानक संस्थान से पुस्तकालय भवन और उपकरणों के लिए एक खण्डीय समिति बनाने के लिए सम्पर्क किया गया। समिति ने पहला मानक 15 : 1533 : 1960 "पुस्तकालय भवन के अभिकल्प में प्राथमिक तत्वों से सम्बन्धित व्यवहार संहिता" के नाम से प्रकाशित किया।

समिति ने संस्तुति की कि किसी भी नये भवन, उपकरण का प्रारूप या वर्तमान पुस्तकालय भवन के अनुकूलन के लिए अथवा पुस्तकालय के विस्तार के लिए परीक्षण और अनुमोदन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा स्वीकृत विश्वविद्यालय विशेषज्ञों द्वारा किया जायेगा।

ये मानक भारतीय मानक 15 : 1533 : 1976 द्वारा पुस्तकालय भवन के अभिकल्प में प्राथमिक तत्व के नाम से संशोधित हुए। संस्तुति की गई है कि—

(i) पुस्तकालय के साथ-साथ विभाग, प्रयोगशाला, छात्रावास के भवनों की अवस्थिति;

(ii) पुस्तकालयों के विभिन्न विभागों के आकार और उनके सापेक्ष स्थान के साथ खिड़कियों और रोशनदानों के लिए विनिर्दश;

(iii) कर्मचारियों की संख्या व स्थान निर्धारण तथा समूह वार्ता, सम्मेलन, गोष्ठी और समिति कक्ष;

(iv) जलापूर्ति, निकासी और स्वच्छ वातावरण के लिए जरूरी आवश्यकताएँ सातवीं योजना में, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के दिशानिर्देशों में विश्वविद्यालय को यह राय दी है कि अनुदान का 20% पुस्तकालय भवन और सुविधाओं के लिए खर्च किया जाये। इसमें पुनः 50% से 60% आवंटन प्रतिलिपिकरण और सूक्ष्मीकरण सुविधाओं के लिए यन्त्रों के क्रय और रख-रखाव पर खर्च किया जाये।

आठवीं योजना के दिशानिर्देशों में, पुस्तकालय भवन के लिए सहायता का 50% और इतना ही उपकरणों, पुस्तकों और पत्रिकाओं पर। इस तरह 45% से 50% दृश्य-श्रव्य सहायता के लिए, टीवी. वी.सी.आर. प्रक्षेपक, प्रतिलिपिकरण सुविधाओं, इत्यादि के लिए और साथ ही पुस्तकों और पत्रिकाओं के अधिग्रहण तथा पुस्तकालय सेवाओं और अध्यापन और अनुसंधान के विशिष्ट शैक्षणिक कार्यक्रमों के लिए उपलब्ध कराया गया।

इनफ्लिबनेट (INFLIBNET) कार्यक्रम के आगमन के साथ विश्वविद्यालय अनुदान आयोग अब मानव संसाधन विकास तथा पुस्तकालय स्वचालन हेतु कम्प्यूटर सुविधा के लिए विश्वविद्यालय और महाविद्यालय पुस्तकालयों के नेटवर्क में भागीदार बनायेगा, और धन देना शुरू किया है।

आयोग ने पुस्तकालय और सूचना विज्ञान के लिए पैनल बनाये हैं जो पुस्तकालय विकास और सेवाओं की समीक्षा तथा विकास के लिए अनुशंसाएँ करेंगे और पुस्तकालय और सूचना विज्ञान के क्षेत्र में अध्यापन तथा अनुसंधान कार्यक्रमों में परिवर्तन करेंगे।

आयोग ने विश्वविद्यालय तथा महाविद्यालय पुस्तकालयों के विकास के लिए और इसकी शिक्षा के लिए कई समितियाँ और कार्यक्रम बनाये हैं।

भारत में विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय पुस्तकालयों का ऐतिहासिक अवलोकन करते हुए हम पाते हैं कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के प्रयासों से शैक्षणिक पुस्तकालयों में महत्वपूर्ण विकास हुआ है।

पुस्तकालय प्राधिकरण एवं पुस्तकालय समिति
(LIBRARY AUTHORITY AND LIBRARY COMMITTEE)

प्रश्न—पुस्तकालय प्राधिकरण से आप क्या समझते हैं ? विश्वविद्यालय पुस्तकालय के विकास में इसकी भूमिका की चर्चा कीजिए।

What do you mean by Library Authority. Discuss its role in the development of University Library.

अथवा (Or)

पुस्तकालय प्राधिकरण की विशेषताओं की विवेचना कीजिए।

Discuss the characteristics of Library Authority.

अथवा (Or)

पुस्तकालय समिति की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए इसके अधिकारों एवं कार्यों की विवेचना कीजिए।

Explain the need for a library committee and discuss its powers and functions.

महिला विश्वविद्यालय, मुम्बई (1951), बिहार विश्वविद्यालय मुजफ्फरनगर (1952), इसी प्रकार विभिन्न प्रदेशों और मण्डलों में विश्वविद्यालयों की स्थापना की गई। वर्तमान में विश्वविद्यालयों की संख्या 210 से अधिक है जिनमें पारम्परिक विश्वविद्यालय, तकनीकी विश्वविद्यालय, डीम्ड विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय के समकक्ष अन्य संस्थान सम्मिलित हैं जिनमें अपने समृद्ध पुस्तकालय सम्मिलित हैं। ये सभी विश्वविद्यालय पुस्तकालय उच्च शिक्षा, शोध एवं विकास के कार्यक्रमों को पूरा करने की दिशा में प्रयासरत हैं। वर्तमान में ज्ञान एवं सूचना की विविधता को दृष्टिगत रखते हुए समस्त विश्वविद्यालय पुस्तकालयों की भूमिका एवं उत्तरदायित्व बढ़ गये हैं।

शैक्षणिक पुस्तकालयों के विकास हेतु विभिन्न समितियों एवं आयोगों की संस्तुतियाँ (RECOMMENDATIONS OF VARIOUS COMMITTEES AND COMMISSIONS FOR DEVELOPMENT OF ACADEMIC LIBRARIES)

प्रश्न—भारत में शैक्षणिक पुस्तकालयों के विकास में एवं उच्च शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विभिन्न समितियों एवं आयोगों की अनुसंशाओं की विवेचना कीजिए।

Discuss the recommendations of various committees and commissions of higher education in achieving the aims of development of academic libraries in India.

अथवा (Or)

भारत सरकार की नई शिक्षा नीति के संदर्भ में विश्वविद्यालय पुस्तकालय की भूमिका का वर्णन कीजिए।

Discuss the role of university library in the light of New Education Policy of Government of India.

अथवा (Or)

भारत में महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय पुस्तकालयों में उन्नयन हेतु यू.जी.सी. द्वारा गठित प्रमुख आयोगों एवं समितियों की व्याख्या कीजिए।

Discuss the major commissions and committees appointed by UGC for improvement of college and university libraries in India.

अथवा (Or)

निम्नलिखित पर टिप्पणियाँ लिखिए—

Write Short notes on the following :

(i) एस. राधाकृष्णन कमीशन (S. Radhakrishnan Commission)

(ii) कोठारी कमीशन (Kothari Commission)

(iii) पैरी कमैटी (Parry Committee)

(iv) रंगनाथन समिति (Ranganathan Committee)

(v) हन्टर आयोग (Hunter Commission)

(vi) सैडलर आयोग (Sadler Commission)

उत्तर—शिक्षा को हर दृष्टि से उच्चस्तर प्रदान करने में पुस्तकालयों का विशेष महत्व है। विद्यालयों से लेकर विश्वविद्यालय तक शिक्षा एवं शोध में पुस्तकालयों की भूमिका को अत्यन्त आवश्यक एवं उपयोगी साधन माना गया है।

शैक्षणिक जगत में विद्यालय, महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय पुस्तकालय की भूमिका एवं महत्व पर अनेक शिक्षा आयोगों तथा समितियों ने प्रकाश डाला और शिक्षा के प्रसार एवं शोध के क्षेत्र में पुस्तकालयों की उपयोगिता को स्वीकार किया है। इन आयोगों ने अपने प्रतिवेदनों में शैक्षणिक पुस्तकालयों की जो भूमिका निर्दिष्ट की है उससे निःसंदेह यह स्पष्ट होता है कि पुस्तकालय उच्चशिक्षा एवं शोध की धुरी माने जाते हैं।

सन् 1882 के हण्टर कमीशन के प्रतिवेदन से लेकर वर्तमान तक के विभिन्न प्रतिवेदनों पर यदि दृष्टिपात करें तो यह स्वतः स्पष्ट हो जाता है कि उच्च शिक्षा एवं शोध मात्र कक्षा शिक्षण पद्धति और परीक्षाओं के आयोजन से ही सशक्त और उपयोगी नहीं बनाई जा सकती। इन आयोगों ने पुस्तकालयों को शिक्षा का एक आवश्यक उपकरण एवं साधन माना है तथा पुस्तकालयों की शैक्षणिक भूमिका की अनिवार्यता स्वीकार की है। आयोगों के प्रतिवेदनों में महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में उच्च स्तरीय शिक्षण, प्रशिक्षण तथा अनुसन्धान को प्रोत्साहित करने हेतु पुस्तकालयोन्मुख शिक्षा पद्धति अपनाने पर अत्यधिक बल दिया गया है।

स्वतन्त्रता से पूर्व ब्रिटिशकाल में भारत में अनेक समितियाँ और आयोग बने। इनके सुझावों के आधार पर शिक्षा एवं पुस्तकालयों के विकास हेतु विशेष प्रयास नहीं किए गए। शिक्षा एवं पुस्तकालयों सम्बन्धी अनेक समस्याएँ हैं और उन समस्याओं के समाधान हेतु स्वतन्त्रता के पश्चात् तीन बड़े आयोग—विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, माध्यमिक शिक्षा आयोग और शिक्षा आयोग (कोठारी कमीशन) गठित किए गए। उसके पश्चात् 1968, 1979 और 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाई गई। 1992 में कार्य-योजना का निर्माण किया गया। इन सभी ने शिक्षा और उसके सहयोगी के रूप में पुस्तकालयों के विकास के विभिन्न पहलुओं पर विचार करके अपने प्रतिवेदन तैयार किए और संस्तुतियाँ प्रस्तुत कीं किन्तु इन संस्तुतियों को पूर्णतः व्यावहारिक रूप नहीं दिया गया। यही कारण है कि पुस्तकालयों की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है।

प्रमुख समितियाँ एवं आयोग निम्नलिखित हैं जिन्हें तत्कालीन सरकारों द्वारा समय-समय पर गठित और नियुक्त किया, जो शिक्षा की तत्कालीन स्थिति की समीक्षा करके शिक्षा में आए दोषों को दूर करने तथा शिक्षा की भावी रूपरेखा सम्बन्धी संस्तुतियाँ शासन को प्रस्तावित कर सकें।

ब्रिटिशकालीन भारत में गठित समितियाँ एवं आयोग

1. भारतीय शिक्षा आयोग, 1882 (हण्टर कमीशन) —सन् 1882 में भारत के वाइसराय लार्ड रिपन ने सर विलियम हण्टर की अध्यक्षता में "भारतीय शिक्षा आयोग" की नियुक्ति की। हण्टर आयोग का कार्य मुख्य रूप से भारतीय शिक्षा और शैक्षणिक पुस्तकालयों के स्तर की समीक्षा करना था कि 1854 के वुड घोषणा-पत्र के सिद्धान्तों को किस प्रकार कार्यान्वित किया गया है। आयोग को यह भी सुझाव देना था कि वुड घोषणा-पत्र में

निर्धारित नीति को और अधिक कार्यान्वित करने के लिए कौन-से उपाय अधिक वांछनीय होंगे।

इस आयोग ने महाविद्यालयों को सहायता अनुदान देते समय शिक्षकों की संख्या, उनके व्यय, और उनकी कार्यक्षमता आदि पर अपनी संस्तुति में अधिक बल दिया। पुस्तकालयों के सम्बन्ध में इस आयोग ने अपनी केवल यह संस्तुति की है कि पुस्तकालय तथा शिक्षण सामग्री के लिए विशेष आर्थिक सहायता उपलब्ध करायी जाए।

2. भारतीय विश्वविद्यालय आयोग, 1902 (रैले कमीशन) —सन् 1899 में लार्ड कर्जन भारत के वाइसराय होकर आए, उन्हें शिक्षा से विशेष रुचि थी। अतः भारत आने के कुछ समय बाद ही उसने यहाँ की शिक्षा की ओर ध्यान दिया। उसने अपने शिक्षा कार्यक्रम में विश्वविद्यालयों के दोषों के कारण उनके सुधार को प्राथमिकता दी। इस समय तक विश्वविद्यालय केवल परीक्षा लेने और उपाधियाँ बाँटने का काम कर रहे थे। उनका छात्रों से किसी प्रकार का प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं था। भारतीय विश्वविद्यालयों की इस स्थिति की कटु आलोचना करते हुए कर्जन ने कहा कि आदर्श विश्वविद्यालय के दो पहलू होने चाहिए। उसे ज्ञान के प्रसार और विद्या के प्रोत्साहन का स्थान होना चाहिए और उसे एक मानवीय कारखाना होना चाहिए, जहाँ चरित्र का निर्माण अनुभव रूपी अग्निशाला में किया जाए तथा जहाँ उसको सत्य की कसौटी पर परखा जाए।

लार्ड कर्जन का विचार था कि उपर्युक्त स्थितियों के कारण भारतीय विश्वविद्यालयों में सुधार किए जाने की आवश्यकता है, अतः उसने एक आयोग नियुक्त करने का निश्चय किया और अपने निश्चय के अनुसार उसने 27 जनवरी 1902 को सर थॉमस रैले की अध्यक्षता में भारतीय विश्वविद्यालय आयोग की नियुक्ति की। आयोग का कार्य क्षेत्र ब्रिटिश भारत में स्थित विश्वविद्यालयों की दशा और उनकी भावी उन्नति पर विचार करना था। विश्वविद्यालय शिक्षा के स्तर को उन्नत बनाने के लिए भी आयोग को अपने सुझाव गवर्नर जनरल को प्रस्तुत करना थे।

विश्वविद्यालय शिक्षा के स्तर को उन्नत बनाने के लिए इस आयोग ने अपने कई सुझाव तथा संस्तुतियाँ प्रस्तुत कीं किन्तु पुस्तकालयों के सम्बन्ध में आयोग ने महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालय पुस्तकालयों को दृष्टिगत रखते हुए अपने प्रतिवेदन में यह उल्लेख किया कि—

(1) प्रत्येक उच्च स्तरीय शैक्षणिक संस्थाओं में पुस्तकालय स्थापित होना आवश्यक है। अतः इन्हें तक तक मान्यता प्रदान न की जाए जब तक इनके पास अच्छा पुस्तकालय न हो।

(2) महाविद्यालय तथा विश्वविद्यालय पुस्तकालयों में संदर्भ अध्ययन पाठ्यसामग्री के साथ-साथ अच्छे संदर्भ ग्रन्थों का संकलन होना आवश्यक है।

3. कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग, 1917 (सैडलर कमीशन) —'भारतीय शिक्षा आयोग' का एक सुझाव यह था कि विश्वविद्यालयों में स्नातकोत्तर शिक्षा की व्यवस्था की जाए। सन् 1916 में कलकत्ता विश्वविद्यालय के उपकुलपति सर आशुतोष मुकर्जी ने इस सुझाव को व्यावहारिक रूप देने के लिए अपने विश्वविद्यालय में एक स्नातकोत्तर विभाग की स्थापना की। सरकार का ध्यान शीघ्र ही इस ओर आकर्षित हुआ। अतः उसने एक आयोग की नियुक्ति करके यह समीक्षा करने का निश्चय किया कि स्नातकोत्तर शिक्षा का कार्य

कलकत्ता विश्वविद्यालय द्वारा किया जा सकता है अथवा नहीं। अपने निश्चय के अनुसार भारत सरकार ने 14 सितम्बर 1917 को डॉ. माइकेल सैडलर की अध्यक्षता में 'कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग' की नियुक्ति की। इस आयोग के कार्य क्षेत्र में कलकत्ता विश्वविद्यालय की स्थिति और आवश्यकताओं की जाँच करना तथा उसके द्वारा उपस्थित किए जाने वाले प्रश्न (स्नातकोत्तर शिक्षा) पर रचनात्मक सुझाव देना था। आयोग के कार्य क्षेत्र में यद्यपि केवल कलकत्ता विश्वविद्यालय की जाँच करना था तथापि उसे यह अधिकार दिया गया कि वह तुलनात्मक अध्ययन के लिए दूसरे अन्य विश्वविद्यालयों की जाँच भी कर सकता है।

सैडलर आयोग ने कलकत्ता विश्वविद्यालय की समस्याओं का अध्ययन कर प्रमुखतः विश्वविद्यालय के शिक्षा सम्बन्धी कार्यों, शिक्षकों की नियुक्ति, विभागों की स्थापना, पाठ्यक्रमों में सुधार, विश्वविद्यालय के आन्तरिक प्रशासन, परीक्षा, उपाधि वितरण और व्यावसायिक शिक्षा के प्रबन्ध से सम्बन्धित कई सुझाव अपने प्रतिवेदन में दिए हैं।

आयोग ने अपने प्रतिवेदन में पुस्तकालय के सम्बन्ध में संस्तुति की कि विश्वविद्यालय के प्रख्यात विद्वानों के निर्देशन में पुस्तकालय एवं शोधशालाएँ स्थापित की जायें। पुस्तकालयाध्यक्ष को विश्वविद्यालय के सर्वोच्च शैक्षणिक निकाय में प्रमुख स्थान प्रदान किया जाए।

भारत की स्वतन्त्रता के पश्चात् गठित समितियाँ एवं आयोग

1. विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग, 1948-49 (राधाकृष्णन आयोग) —सन् 1947 में स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ ही भारत का नव निर्माण प्रारम्भ हुआ। शिक्षा के ढाँचे में परिवर्तन करना आवश्यक समझा गया। परतन्त्र भारत में विश्वविद्यालय शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य छात्रों को परीक्षा उत्तीर्ण कराकर सरकारी नौकरी के लिए तैयार करना था किन्तु स्वतन्त्र भारत के लिए राष्ट्र की आवश्यकतानुसार उसमें परिवर्तन की माँग की गई। शिक्षा एवं शिक्षण पद्धतियों को नए उद्देश्यों के परिप्रेक्ष्य में सार्थक ढंग से क्रियान्वित करने और शिक्षा के इस विकास को उपयुक्त दिशा देने के लिए सन् 1948 में डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग की नियुक्ति की गई। इस आयोग को राधाकृष्णन आयोग के नाम से भी जाना जाता है। इस आयोग ने आधुनिक शिक्षा और शिक्षण पद्धति का एक अभिन्न अंग होने के कारण पुस्तकालयों के सम्बन्ध में भी बहुत उपयोगी सुझाव दिए साथ ही विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की स्थापना का सुझाव भी इसी आयोग ने दिया था जिसे 1956 में संसद् द्वारा अधिनियम बनाकर मूर्तरूप प्रदान किया।

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग द्वारा पुस्तकालयों के सम्बन्ध में प्रस्तावित मुख्य संस्तुतियाँ निम्नानुसार हैं :

1. शिक्षा एक सहकारी कार्य है। शिक्षकों को योग्य छात्र-छात्राओं के साथ पुस्तकालय एवं शोध शालाओं के रूप में आवश्यक साधन उपलब्ध होने चाहिए। उच्च शिक्षा एवं अनुसन्धान साधनों के उपयोग का प्रशिक्षण है। पुस्तकालयों के अभाव में विद्यार्थी उनका उपयोग करना कैसे सीखेंगे। मानविकी और वैज्ञानिक दोनों प्रकार के उच्च अध्ययन के लिए विश्वविद्यालय में पुस्तकालय का होना अत्यावश्यक है।

2. विश्वविद्यालय पुस्तकालयों को प्रभावशाली ढंग से अपना कार्य करने के लिए प्रतिवर्ष संस्था के पूरे बजट का सवा छह प्रतिशत धन तथा चालीस रुपया प्रति छात्र के हिसाब से अनुदान प्राप्त होना चाहिए। इसके अतिरिक्त निरन्तर बढ़ते हुए अच्छे प्रकाशनों में से अतिरिक्त ग्रंथ और पत्रिकाओं को क्रय करने के लिए प्रत्येक पाँच वर्ष पर उन्हें अनावर्तक अनुदान प्राप्त हो। भारतीय दर्शन, इतिहास और साहित्य का शोधकार्य बहुत अंशों में हस्तलिखित ग्रंथों पर आधारित होने से पुस्तकालयों को अमुद्रित साहित्य के संग्रह पर भी ध्यान देना चाहिए। इसके लिए उनके बजट में अलग से प्रावधान किया जाये।
3. प्रत्येक विश्वविद्यालय पुस्तकालय में खुली प्रणाली (ओपन एक्सेस सिस्टम) की व्यवस्था की जाए। साथ ही साथ स्नातक पूर्व स्तर के विद्यार्थियों को इसकी शिक्षा दें कि पुस्तकालय का उपयोग कैसे करना चाहिए।
4. विश्वविद्यालय पुस्तकालय को प्रतिदिन बारह घण्टे तक खुला रखना चाहिए।
5. एक केन्द्रीय पुस्तकालय के अतिरिक्त उससे सम्बद्ध विभागीय पुस्तकालय हों और वहाँ उपलब्ध साहित्य पर प्रकाश डालने के लिए व्यवस्थित सूची बनी हो।
6. पुस्तकालय में पर्याप्त, प्रशिक्षित तथा योग्य कर्मचारी होना चाहिए। वहाँ पुस्तकालय विज्ञान में प्रशिक्षित तथा प्राध्यापक के समकक्ष योग्यता रखने वाला पुस्तकालयाध्यक्ष नियुक्त हो। उसके अधीन विविध श्रेणी के प्राविधिक कर्मचारी उपलब्ध होने चाहिए।
7. कक्षा के व्याख्यानों को पुस्तकालय में अध्ययन और वहाँ की सन्दर्भ सेवा के माध्यम से पूर्ण और उपयोगी बनाना आवश्यक है। इसके लिए पुस्तकालय में वांङ्मय सूची संबंधी कार्यों को विकसित करने के लिए प्रयास किया जाना चाहिए।
8. छात्रों को अधिक से अधिक पुस्तकों को पढ़ने के लिए उनमें आरम्भ से ही ग्रंथ चेतना उत्पन्न करनी चाहिए ताकि नियमित अध्ययन की आदत के निर्माण के साथ-साथ अपने निजी पुस्तकालय को बनाने हेतु विद्यार्थी प्रेरित हो सकें।
9. विशेष रूप से निम्न श्रेणी तथा वेतनभोगी शिक्षकों को अपना निजी पुस्तकालय बनाने के लिए इस शर्त पर सौ रुपये का वार्षिक अनुदान देने की व्यवस्था की जाये कि इसके लिए उतना ही धन वे अपने पास से व्यय करें।
10. प्रशिक्षित पुस्तकालय कर्मचारी उपलब्ध करने के दृष्टिकोण से प्रत्येक प्रान्त में कम से कम एक विश्वविद्यालय में पुस्तकालय विज्ञान की उच्च शिक्षा देने की व्यवस्था की जाए।

संक्षेप में आयोग का अभिमत था कि उच्च शिक्षा और शोध की दृष्टि से पुस्तकालय विश्वविद्यालय का हृदय है और उसे हमेशा स्वस्थ, सार्थक एवं सक्षम बनाए रखने के लिए उसका संगठन तथा प्रबन्ध वैज्ञानिक पद्धति से करना चाहिए।

2. माध्यमिक शिक्षा आयोग, 1952-53 (मुदालियर आयोग) —स्वतन्त्रता के पश्चात् यह अनुभव किया गया कि माध्यमिक शिक्षा के सम्बन्ध में विस्तृत रूप से विचार किया जाना चाहिए जिससे इसे अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके। सन् 1949 में केन्द्रीय शिक्षा

सलाहाकार परिषद् ने सरकार से कहा कि वह माध्यमिक शिक्षा आयोग का गठन करे। केन्द्रीय सरकार ने इस सिफारिश को मानते हुए 23 सितम्बर, 1952 को डॉ. ए. लक्ष्मणस्वामी मुदालियर, कुलपति मद्रास विश्वविद्यालय की अध्यक्षता में माध्यमिक शिक्षा आयोग का गठन किया।

माध्यमिक शिक्षा आयोग को भारत में माध्यमिक शिक्षा से सम्बन्धित सभी पक्षों की वर्तमान स्थिति ज्ञात कर राष्ट्र की आवश्यकताओं और संसाधनों के अनुसार एक उचित और समान माध्यमिक शिक्षा प्रणाली प्रदान करने हेतु सुझाव देने के लिए अधिकृत किया गया था। प्रश्नावली एवं साक्षात्कारों की सहायता से माध्यमिक शिक्षा प्रणाली प्रदान करने हेतु सुझाव देने के लिए अधिकृत किया गया था। प्रश्नावली एवं साक्षात्कारों की सहायता से माध्यमिक शिक्षा के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करके इस आयोग ने 29 अगस्त, 1953 को 240 पृष्ठ का अपना प्रतिवेदन संस्तुतियों के साथ प्रस्तुत किया।

इस आयोग ने अपने प्रतिवेदन में माध्यमिक शिक्षा के पुनर्गठन, बहुउद्देशीय विद्यालयों की स्थापना, विकलांगों की शिक्षा, कृषि शिक्षा, सह शिक्षा, आवासीय शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, पाठ्यक्रम संशोधन, शिक्षा का माध्यम, पाठ्य-पुस्तकें, पाठ्येत्तर क्रियाएँ, परामर्श व निर्देशन, स्वास्थ्य शिक्षा, धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा, परीक्षा प्रणाली, छात्र संख्या, वित्त व्यवस्था, संगठन एवं प्रशासन, अध्यापक आदि बिन्दुओं के साथ-साथ पुस्तकालयों के सम्बन्ध में निम्नलिखित संस्तुतियाँ की थीं—

1. पुस्तकालय को विद्यालय की बौद्धिक प्रयोगशाला का रूप दिया जाए,
2. पुस्तकालय को विद्यालय का सबसे अधिक आकर्षक स्थान बनाया जाए,
3. प्रत्येक माध्यमिक विद्यालय में एक प्रशिक्षित पुस्तकालयाध्यक्ष की नियुक्ति की जाए,
4. पुस्तकों के चयन का कार्य शिक्षकों की एक समिति द्वारा कराया जाए,
5. छात्रों को पढ़ने हेतु दी जाने वाली पुस्तकों का लेखा रखा जाए।

3. यू. जी. सी. पुस्तकालय समिति, 1957—राधाकृष्णन आयोग ने स्पष्ट रूप से कहा कि उच्च शिक्षा के विकास तथा सुधार तथा विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों को आवर्तक व अनावर्तक अनुदान देने से सम्बद्ध उसकी संस्तुतियों के क्रियान्वयन हेतु आवश्यक अधिकारों से युक्त एक स्वतन्त्र समिति या आयोग की नियुक्ति की जानी चाहिए। आयोग की इस संस्तुति के अनुसार सन 1953 में भारत शासन ने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की नियुक्ति की तथा 1956 में संसद द्वारा एक विधेयक पारित कर उसे वैधानिक स्वरूप प्रदान किया गया। देश के प्रख्यात अर्थशास्त्री, प्रशासक तथा शिक्षा विशेषज्ञ डॉ. सी. डी. देशमुख विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष नियुक्त किए गए। तभी से इस आयोग ने भारतीय उच्च शिक्षा जगत में वास्तविक नेतृत्व और अधिकार प्राप्त किया है। इसी के साथ ही देश के उच्च शैक्षणिक पुस्तकालयों का भाग्योदय भी आरम्भ हुआ। डॉ. देशमुख ने पुस्तकालयों के सम्बन्ध में राधाकृष्णन आयोग की संस्तुतियों को दृढ़ता के साथ क्रियान्वित करने का निश्चय किया। विश्वविद्यालयीन और महाविद्यालयीन पुस्तकालयों का व्यापक रूप से अध्ययन करने, उनके सुधार तथा विकास

हेतु परामर्श देने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने सन् 1957 में डॉ. रंगनाथन की अध्यक्षता में एक पुस्तकालय समिति की नियुक्ति की। समिति ने देश के विभिन्न विश्वविद्यालय पुस्तकालयों का निरीक्षण एवं अवलोकन किया। रंगनाथन समिति की मुख्य संस्तुतियाँ निम्नानुसार है :

1. विश्वविद्यालय और महाविद्यालयों के पुस्तकालय के लिए आवश्यक पूरे वित्त का भार क्रमशः 4/5 एवं 1/5 के अनुपात से विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा प्रादेशिक शासन को वहन करना चाहिए। भविष्य में इस अनुपात में संशोधन किया जा सकता है।
2. प्रारम्भ में पुस्तकालयों के अनुदान का आकलन प्रत्येक छात्र पर पन्द्रह रुपये तथा प्रत्येक शिक्षक पर दो सौ रुपये के हिसाब से किया जाये। समय-समय पर इन अंकों में संशोधन आवश्यक है।
3. नवीन विश्वविद्यालय पुस्तकालयों में प्रारम्भिक ग्रंथ संग्रह हेतु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा तीन लाख रुपयों का अतिरिक्त अनुदान दिया जाना चाहिए।
4. स्नातकोत्तर विभागों के नवीन विकासात्मक प्रस्तावों को स्वीकार करने पर सम्बद्ध विषयों पर पुस्तकें क्रय करने के लिए यू.जी.सी. अतिरिक्त अनुदान प्रदान करे।
5. पुस्तकालयों को अनुदान का धन प्रत्येक वर्ष अप्रैल माह के प्रथम सप्ताह में निश्चित रूप से प्राप्त हो जाना चाहिए।
6. पुस्तकों के क्रय का कार्य बारहों महीने निरन्तर जारी रखने के लिए अग्रिम वर्ष में प्राप्त होने वाले ग्रंथ अनुदान से सम्बन्ध क्रय का कार्य नवम्बर माह में आरम्भ कर देना चाहिए ताकि अनुदान आवश्यक खर्च के पूर्व समाप्त न हो जाए।
7. विकासशील पुस्तकालयों में नए ग्रन्थों का शीघ्रतिशीघ्र प्रक्रियाकरण कर अध्येताओं तक पहुँचाने के लिए अतिरिक्त कर्मचारियों की आवश्यकता होती है। अतः प्रत्येक ग्रन्थ अनुदान में से 10 प्रतिशत धन अतिरिक्त कर्मचारियों पर व्यय करने की अनुमति प्रदान की जानां चाहिए।
8. एतद् विषयों की पुस्तकों के क्रय पर ग्रन्थ अनुदान का विनियोग न्यायसंगत ढंग से किया जाए।
9. प्रत्येक अध्ययन एवं शोध विषय पर आवश्यक पुस्तकें क्रय करने के लिए त्रिपंक्तीय (थ्री टियर) पद्धति को अपनाया जाना चाहिए।
10. विशेषतः कीमती पुस्तकें, सन्दर्भ ग्रन्थ तथा शोध पत्रिकाओं के सन्दर्भ में ग्रन्थ चयन के कार्य में समन्वय बनाए रखने के लिए संघ सूची तथा अन्तर पुस्तकालय आदान के माध्यम से विविध पुस्तकालयों के सहयोग तथा विशिष्टीकरण के आधार पर पुस्तकों का चयन किया जाना चाहिए।
11. विदेशी पुस्तकों तथा शोध पत्रिकाओं को आसानी से उपलब्ध करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ग्रन्थ अनुदान का आधा भाग विदेशी मुद्रा या कूपन के रूप में पुस्तकालयों को प्रदान करे अथवा इसके लिए वह एक केन्द्र या एजेन्सी स्थापित करे। इस एजेन्सी का कार्य पुस्तकालयों से क्रयादेश एकत्रित

करना, सामूहिक रूप से पुस्तकों और शोध पत्रिकाओं को खरीदना, सम्बद्ध पुस्तकालयों को उनका वितरण करना तथा पुस्तकालयों को दिए जाने वाले अनुदान के धन से भुगतान करना है।

12. छात्र-छात्राओं में अध्ययन के प्रति रुचि तथा पुस्तकालय चेतना को जागृत रखने के लिए पुस्तकालयोन्मुखी शिक्षण पद्धति, संदर्भ सेवा और वाङ्मय सूची के कार्यों को क्रियात्मक रूप देने का प्रयास किया जाये।

13. शोध छात्रों को सामयिक शोध पत्रिकाओं का विश्लेषण करके नवीन विचारों से परिचित कराने तथा शोध से सम्बन्धित ज्ञान के अग्रतरंगों से स्वयं को अवगत रखते हुए पुस्तकालय कार्मिक अपने कर्त्तव्य का निवर्हन करें।

14. पुस्तकालय द्वारा माँग और उपलब्ध साधनों में समन्वय बनाए रखने तथा विद्यार्थियों के लिए ग्रन्थ अध्ययन के पाठ्यक्रम की योजना बनाने के लिए कक्षा के कार्यों से जीवन्त सम्पर्क बनाया जाना चाहिए।

15. शिक्षकों के सहयोग से एक संतुलित तथा समृद्ध संग्रह के विकास हेतु ग्रन्थ-जगत पर सतर्क दृष्टि रखने तथा विषयगत ग्रन्थ सूची में प्रवीणता प्राप्त करने हेतु पुस्तकालय कार्मिकों को हमेशा तत्पर रहना चाहिए।

16. अनुपयोगी पुस्तकों को समिति द्वारा उचित ढंग से समय-समय पर अपलिखित कर देना चाहिए।

17. खुली प्रणाली (ओपन एक्सेस) की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए एक हजार पुस्तकों पर कम से कम एक पुस्तक खोना स्वाभाविक तथा अवश्यभावी है, अतः इस अनुपात से पुस्तकों को अपलिखित किया जाना चाहिए।

18. शोध शक्ति के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु विश्वविद्यालय पुस्तकालयों में प्रलेखन के समस्त पक्षों का क्रियान्वयन किया जाना आवश्यक है।

19. आवश्यकतानुसार शैक्षणिक ·विभागीय पुस्तकालयों का विकास न्या जाये। केन्द्रीय पुस्तकालय द्वारा प्रेषित स्थायी तथा अस्थायी दो प्रकार के ग्रन्थ संग्रह वहाँ उपलब्ध हों।

20. संस्तुत योग्यताओं से सम्पन्न और विश्वविद्यालय तथा महाविद्यालय के शिक्षकों के समकक्ष चार प्रकार के व्यावसायिक कर्मचारी पुस्तकालय में नियुक्त किए जाएँ और उन्हें शिक्षकों के समान वेतनमान प्राप्त हो।

21. कर्मचारी परिसूत्र के अनुसार कर्मचारियों की आवश्यक संख्या का निर्धारण किया जाये।

22. मानद पुस्तकालयाध्यक्ष की नियुक्त करने की परम्परा समाप्त की जानी चाहिए।

23. पुस्तकालय के व्यावसायिक कर्मचारियों के कार्यों की अधिकता को दृष्टि में रखते हुए उन्हें पुस्तकालय विज्ञान के अध्यापन का दायित्व न सौंपा जाए। इस कार्य के लिए स्वतन्त्र शिक्षक नियुक्त करना चाहिए।

24. विश्वविद्यालयों को पुस्तकालय विज्ञान में प्रमाण-पत्र स्तर की शिक्षा की व्यवस्था नहीं करनी चाहिए। यह पुस्तकालय संघों का कार्य है।

करना, सामूहिक रूप से पुस्तकों और शोध पत्रिकाओं को खरीदना, सम्बद्ध पुस्तकालयों को उनका वितरण करना तथा पुस्तकालयों को दिए जाने वाले अनुदान के धन से भुगतान करना है।

12. छात्र-छात्राओं में अध्ययन के प्रति रुचि तथा पुस्तकालय चेतना को जागृत रखने के लिए पुस्तकालयोन्मुखी शिक्षण पद्धति, संदर्भ सेवा और वाङ्मय सूची के कार्यों को क्रियात्मक रूप देने का प्रयास किया जाये।

13. शोध छात्रों को सामयिक शोध पत्रिकाओं का विश्लेषण करके नवीन विचारों से परिचित कराने तथा शोध से सम्बन्धित ज्ञान के अग्रतरंगों से स्वयं को अवगत रखते हुए पुस्तकालय कार्मिक अपने कर्त्तव्य का निवर्हन करें।

14. पुस्तकालय द्वारा माँग और उपलब्ध साधनों में समन्वय बनाए रखने तथा विद्यार्थियों के लिए ग्रन्थ अध्ययन के पाठ्यक्रम की योजना बनाने के लिए कक्षा के कार्यों से जीवन्त सम्पर्क बनाया जाना चाहिए।

15. शिक्षकों के सहयोग से एक संतुलित तथा समृद्ध संग्रह के विकास हेतु ग्रन्थ-जगत पर सतर्क दृष्टि रखने तथा विषयगत ग्रन्थ सूची में प्रवीणता प्राप्त करने हेतु पुस्तकालय कार्मिकों को हमेशा तत्पर रहना चाहिए।

16. अनुपयोगी पुस्तकों को समिति द्वारा उचित ढंग से समय-समय पर अपलिखित कर देना चाहिए।

17. खुली प्रणाली (ओपन एक्सेस) की उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए एक हजार पुस्तकों पर कम से कम एक पुस्तक खोना स्वाभाविक तथा अवश्यभावी है, अतः इस अनुपात से पुस्तकों को अपलिखित किया जाना चाहिए।

18. शोध शक्ति के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु विश्वविद्यालय पुस्तकालयों में प्रलेखन के समस्त पक्षों का क्रियान्वयन किया जाना आवश्यक है।

19. आवश्यकतानुसार शैक्षणिक विभागीय पुस्तकालयों का विकास ल्यिा जाये। केन्द्रीय पुस्तकालय द्वारा प्रेषित स्थायी तथा अस्थायी दो प्रकार के ग्रन्थ संग्रह वहाँ उपलब्ध हों।

20. संस्तुत योग्यताओं से सम्पन्न और विश्वविद्यालय तथा महाविद्यालय के शिक्षकों के समकक्ष चार प्रकार के व्यावसायिक कर्मचारी पुस्तकालय में नियुक्त किए जाएँ और उन्हें शिक्षकों के समान वेतनमान प्राप्त हो।

21. कर्मचारी परिसूत्र के अनुसार कर्मचारियों की आवश्यक संख्या का निर्धारण किया जाये।

22. मानद पुस्तकालयाध्यक्ष की नियुक्त करने की परम्परा समाप्त की जानी चाहिए।

23. पुस्तकालय के व्यावसायिक कर्मचारियों के कार्यों की अधिकता को दृष्टि में रखते हुए उन्हें पुस्तकालय विज्ञान के अध्यापन का दायित्व न सौंपा जाए। इस कार्य के लिए स्वतन्त्र शिक्षक नियुक्त करना चाहिए।

24. विश्वविद्यालयों को पुस्तकालय विज्ञान में प्रमाण-पत्र स्तर की शिक्षा की व्यवस्था नहीं करनी चाहिए। यह पुस्तकालय संघों का कार्य है।

25. पुस्तकालय भवन का निर्माण कार्यानुसारी हो। इसके लिए प्रमाणीय निर्माण (माड्यूलर कन्सट्रक्शन) पद्धति और निर्धारित मानक अपनाए जाना चाहिए।
26. पुस्तकालयों के लिए उपकरण एवं उपस्कर निर्धारित मानकों के अनुसार बनवाए अथवा क्रय किए जाएँ।
27. नवीन पुस्तकालय भवन का निर्माण अथवा विद्यमान भवन में परिवर्तन करने के कार्य में पुस्तकालयों को परामर्श देने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा विशेषज्ञों की एक स्थायी समिति की नियुक्ति की जानी चाहिए।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने रंगनाथन समिति की उपर्युक्त संस्तुतियों को स्वीकार कर निष्ठा के साथ उन्हें क्रियान्वित करना आरम्भ किया।

4. शिक्षा आयोग, 1964-66 (कोठारी आयोग)

भारत सरकार ने 1964 में डॉ. डी. सी. कोठारी की अध्यक्षता में शिक्षा आयोग का गठन किया। इसे कोठारी आयोग के नाम से भी जाना जाता है। इस आयोग ने उच्च शिक्षा के संदर्भ में पुस्तकालयों पर व्यापक विचार विमर्श और चिन्तन किया।

विश्वविद्यालय पुस्तकालय के संबंध में कोठारी आयोग द्वारा प्रस्तावित मुख्य संस्तुतियाँ निम्नानुसार हैं :

1. किसी भी विश्वविद्यालय, महाविद्यालय अथवा विभाग की स्थापना तक तब नहीं होनी चाहिए, जब तक उसकी पुस्तकालय संबंधी आवश्यकताओं को अर्थात् इसके लिए प्रशिक्षित एवं योग्य कर्मचारियों, पुस्तकों पत्र-पत्रिकाओं, भवन आदि जैसी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति की समुचित व्यवस्था न हो जाए। महाविद्यालय या विश्वविद्यालय के परिसर में पुस्तकालय सर्वाधिक आकर्षण का केन्द्र होना चाहिए।
2. पुस्तकों के संग्रह मात्र को पुस्तकालय की संज्ञा नहीं दी जा सकती। यदि छात्रों को उत्साही अध्यापक मिल जाएँ जो उन्हें पुस्तकों के माध्यम से अध्ययन करायें तथा ऐसे समर्पित पुस्तकालय कर्मचारी प्राप्त हो जाएँ, जो पुस्तकालय को बौद्धिक कर्मशाला में परिवर्तित कर डालने मे उनके साथ सहयोग करें तो सूझ-बूझ के साथ चयन की गई पुस्तकों का छोटा सा संग्रह भी विद्यार्थियों के जीवन में क्रान्ति ला सकता है। अन्यथा ऐसे कार्यकर्ता नहीं, तो समस्त प्रकार की सुख सुविधाओं वाले भवन और बड़े से बड़ा ग्रंथ संग्रह भी निरर्थक सिद्ध होगा।
3. विश्वविद्यालय में प्रवेश लेने वाले प्रत्येक विद्यार्थी के ऊपर दो सौ पचास रुपये तथा हर अध्यापक के ऊपर तीन सौ रुपये व्यय करना चाहिए।
4. पुस्तकालय के अनुदानों का विनियोग योजना की पूरी अवधि में उपयुक्त अवस्थाओं में निर्धारित कर होना चाहिए।
5. पुस्तकों का चयन, उनकी व्याख्या, पुस्तकों तक पहुँचने की परिस्थितयाँ और पुस्तकालय के सारे क्रिया-कलाप इस प्रकार आयोजित किए जायें कि शिक्षा के माध्यम से समाज की तथा अध्यापक और विद्यार्थी दोनों की दैनिक आवश्यकताओं एवं गतिविधियों में पूरा-पूरा समन्वय स्थापित किया जा सके।

6. पुस्तकालयों को ऐसे संसाधान उपलब्ध किए जाने चाहिए जो विश्वविद्यालय की विशेष रुचि वाले क्षेत्रों में अनुसंधान के लिए आवश्यक हों।
7. पुस्तकालय द्वारा विश्वविद्यालय के अध्यापकों को अधिकाधिक सहायता प्राप्त होनी चाहिए ताकि वह अपने क्षेत्र की गतिविधियों से परिचित रह सकें।
8. शिक्षा के समस्त औपचारिक पाठ्यक्रमों की सफलता के लिए आवश्यक पुस्तकालय सुविधाओं एवं सेवाओं की व्यवस्था करनी चाहिए।
9. पुस्तकों के माध्यम से उस व्यापक जगत के द्वार खोलने का प्रयास किया जाये जिसका प्रसार किसी के अपने विशिष्टीकरण क्षेत्र की सीमाओं से परे होता है।
10. पुस्तकालय के माध्यम से पुस्तकों, छात्रों तथा अध्यापकों को ऐसी परिस्थितियों में एक-दूसरे के समीप लाना चाहिए, जिससे स्वान्तः सुखाय, आत्मान्वेषण, वैयक्तिक विकास तथा बौद्धिक जिज्ञासा को शान्त व संतुष्ट करने के लिए निरन्तर अध्ययन करने की प्रेरणा प्राप्त हो सके।

कोठारी आयोग की उपर्युक्त संस्तुतियों ने यह सिद्ध किया कि पुस्तकालय विश्वविद्यालय शिक्षा का अनिवार्य अंग है, जिसकी यथोचित प्रगति के अभाव में उच्च शिक्षा के उद्देश्यों की सार्थक सफलता की कामना नहीं की जा सकती।

5. कार्ल. एम. व्हाइट का सर्वेक्षण, 1965

भारतीय विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के विकास में अनेक विदेशी संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सन् 1965 में दिल्ली विश्वविद्यालय ने फोर्ड फाउण्डेशन, अमेरिका के अनुदान से अपने पुस्तकालय का सर्वेक्षण करने तथा उसके विकास के लिए उपयोग सुझाव देने के लिए डॉ. कार्ल. एम. व्हाइट, फोर्ड फाउण्डेशन, अमेरिका में पुस्तकालय प्रशासन के कार्यक्रम विशेषज्ञ को आमंत्रित किया गया। व्हाइट ने विस्तार से विश्वविद्यालय पुस्तकालय और उसके कार्यों का सर्वेक्षण कर बहुत उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किए। यद्यपि सर्वेक्षण एवं सुझाव दिल्ली विश्वविद्यालय पुस्तकालय से सम्बद्ध हैं तथापि उसकी अधिकांश संस्तुतियाँ सामान्य और नीति निर्धारक हैं। अतः वे देश के अन्य विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के लिए स्वीकार्य एवं अनुकरणीय हैं। कार्ल. एम. व्हाइट द्वारा प्रस्तावित मुख्य संस्तुतियाँ निम्नानुसार हैं :

1. प्रस्तावित शैक्षणिक कार्यक्रम के संदर्भ में विश्वविद्यालय पुस्तकालय के कार्यों और दायित्वों का परीक्षण कराने की प्रथा को पुस्तकालयाध्यक्ष के सहयोग से क्रियान्वित करना चाहिए।
2. विश्वविद्यालय के अधिनियम तथा अध्यादेशों में पुस्तकालय के कार्यों का स्पष्ट उल्लेख किया जाये।
3. पुस्तकालय अध्यक्ष के वैधानिक अधिकार और दायित्व परिभाषित किए जायें।
4. पुस्तकालयाध्यक्ष को उच्च शैक्षणिक पद औपचारिक रूप से प्रदान किए जायें।
5. पुस्तकालय समिति को प्राप्त प्रबंधात्मक अधिकार विधिवत पुस्तकालयाध्यक्ष को सौंपे जायें।

6. विश्वविद्यालय के व्यय से संचालित समस्त पुस्तकालयों का प्रशासन समन्वित ढंग से करने के लिए आवश्यक दायित्व के केन्द्रीयकरण की नीति को विश्वविद्यालय प्रोत्साहन और समर्थन प्रदान करे।
7. ग्रंथ चयन का कार्य शिक्षा और शोध विषयों के अनुकूल होना चाहिए।
8. अतिरिक्त प्रतियों के क्रय हेतु विशिष्ट धनराशि की व्यवस्था होनी चाहिए।
9. इतिहास संबंधी मौखिक संप्रायोजन (ओरल हिस्ट्री प्रोजेक्ट) का विकास किया जाये।
10. विश्वविद्यालय के अभिलेखों के स्थायी संरक्षण और उनके उपयोग की व्यवस्था हो।
11. पुस्तकालय के कार्यक्रम की सफलता हेतु उच्च योग्यता सम्पन्न मानव शक्ति परम आवश्यक है। अतः व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित कर्मचारियों की संख्या में अनिवार्य वृद्धि की जानी चाहिए।
12. विभागीय पुस्तकालयों के प्रबंध के कार्य में मार्ग-दर्शन हेतु स्पष्ट नीति का निर्धारण किया जाये।
13. विज्ञान संकाय के विभागों की सेवा के लिए एक विज्ञान पुस्तकालय अवश्य स्थापित किया जाये।
14. केन्द्रीय पुस्तकालय के अंदर मानविकी पर एक प्रभावशाली कार्यशाला का निर्माण किया जावे तथा केन्द्रीय पुस्तकालय के समीप ही सामाजिक विज्ञान का एक पृथक् पुस्तकालय स्थापित हो।
15. विश्वविद्यालय के विविध पुस्तकालयों में उपलब्ध ग्रंथों की संघ सूची के रूप में केन्द्रीय सूची का विकास करें।
16. ग्रंथों के उपहार और विनिमय के कार्यों का केन्द्रीयकरण कर उसे विकसित किया जाये।
17. प्राध्यापकों, प्रवाचकों तथा प्रवक्ताओं को अनिश्चित समय के लिए पुस्तकें प्रदान की जानी चाहिए।
18. कालातीत दण्ड एवं विशिष्ट पुस्तकालय शुल्क को यथाशीघ्र समाप्त कर दिया जाए।
19. पुस्तकालय के कार्यक्रमों के उद्देश्यों की सफल प्राप्ति के लिए आवश्यक साधन संपदा का निर्धारण करने और तदर्थ आर्थिक सहायता देते समय पुस्तकालय के विकास के प्रति विश्वविद्यालय का रुख कार्यानुसारी हो।
20. उपयोगी प्रकाशन जैसे पत्रिकाएँ, मानचित्र तथा हस्तलिखित ग्रंथों के विकास हेतु अतिरिक्त धन की व्यवस्था की जाए।
21. अनुपयोगी तथा पुरानी पुस्तकों के प्रत्याहरण का कार्य शिक्षक और पुस्तकालय के कर्मचारी मिलकर करें।
22. प्रस्तुत संस्तुतियों के सार्थक एवं सफल क्रियान्वयन हेतु अतिरिक्त संसाधन विकसित किए जायें।

6. राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986

जनवरी, 1985 में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी ने राष्ट्र के लिए एक नई शिक्षा नीति तैयार करने की घोषणा की तथा अगस्त 1985 में "शिक्षा की चुनौती-नीति सम्बन्धी परिप्रेक्ष्य" नामक 68 पृष्ठों का दस्तावेज तैयार किया गया। इस दस्तावेज को तैयार करने का उद्देश्य यह था कि इसके द्वारा सम्पूर्ण राष्ट्र में विचार-विमर्श किया जा सके और आवश्यकतानुसार शिक्षा व्यवस्थाओं में परिवर्तन किया जा सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 की शिक्षा नीति काफी अंशों में पूर्ववर्ती शिक्षा नीति से मिलती है। इस नीति में पूर्व नीति से कहीं-कहीं सुधारात्मक नवीनता है जो वर्तमान सूचना प्रौद्योगिकी के परिप्रेक्ष्य में की गई है। साथ ही इस नीति के आधार पर ही नवोदय विद्यालयों का विकास हुआ जिससे प्राथमिक स्तर से ही पुस्तकालयों के विकास को प्राथमिकता मिली।

नई शिक्षा नीति, 1986 में पुस्तकालयों के विकास हेतु निम्नलिखित सुझाव दिए गए—

(1) सभी शैक्षणिक संस्थानों में व्यवस्थित एवं उत्तम पुस्तकालयों की स्थापना करना।

(2) आवश्यक पाठ्यसामग्री का समुचित संकलन करना।

(3) पुस्तकालयों के विकास हेतु समुचित धन की व्यवस्था।

(4) पुस्तकालय द्वारा उत्तम सेवा उपलब्ध कराने की दृष्टि से नवीन सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाना चाहिए।

(5) शैक्षणिक पुस्तकालयों को संग्रह विकास हेतु अनुदान दिया जाना चाहिए।

7. राष्ट्रीय शिक्षा नीति संशोधन, 1992—सन् 1986 में घोषित नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति शैक्षिक विकास के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कदम था। इन नीति में राष्ट्रीय पाठ्यक्रम को लागू करने, शैक्षिक अवसरों की समानता और शैक्षिक गुणवत्ता की तुलनीयता तथा नवोदय विद्यालयों की स्थापना आदि पर विशेष जोर दिया गया था।

इस नीति के अनुसार प्रत्येक पाँच वर्ष के बाद विभिन्न संकल्पों के कार्यान्वयन की समीक्षा किए जाने का प्रावधान था। इसी क्रम में 1992 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 की समीक्षा की गई तथा 7 मई, 1992 में संशोधित नीति प्रारूप संसद के दोनों सदनों में रखे गए तथा तदुपरान्त राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कतिपय संशोधन किए गए जिसे कार्यान्वयन कार्यक्रम 1992 कहा गया।

नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अन्तर्गत पूरे राष्ट्र में पुस्तकालय तथा पुस्तकालय सेवाओं को उन्नत बनाने पर जोर दिया गया। अनेक विधाओं एवं स्वरूपों में राष्ट्र की सांस्कृतिक सम्पदा एवं गौरव को सुरक्षित किया जाये, ज्ञान के अधिग्रहण तथा प्रसार और बौद्धिक स्वतन्त्रता के क्षेत्र में नवीन ज्ञान की खोज हेतु व्यक्तिगत प्रयासों को समुचित प्रोत्साहन एवं सहायता प्रदान की जाए। इन सभी बातों पर इस नीति में जोर दिया गया था।

कि ऐसे व्यक्तियों का पदों पर चयन किया जाना चाहिए जो उक्त पद के लिए हर प्रकार से उपयुक्त हों।

(4) **कर्मचारियों का चयन (Selection)** – पुस्तकालयों में कर्मचारियों का चयन करने से पहले उन सभी बातों पर विचार कर लेना चाहिए जो चयन से पहले आवश्यक हैं अर्थात् पद क्या है ? उसकी निर्धारित योग्यता क्या है ? तथा उक्त पद के लिए क्या-क्या कार्य निर्धारित हैं जो उस पद पर नियुक्त कर्मचारी को करने हैं ? चयन हेतु **चयन समिति** का गठन करना आवश्यक है। कर्मचारियों के चयन एवं नियुक्ति में पुस्तकालयाध्यक्ष का भी परामर्श, सुझाव एवं सहायता लेना आवश्यक है। ऐसा प्रयास होना चाहिए कि पुस्तकालय में योग्य, शिक्षित, कर्मठ, लगनशील आदि सभी गुणों से युक्त कर्मचारियों का ही चयन किया जा सके। इसके लिए **श्रेष्ठ कर्मचारी नीति** (Best Personnel Policy) अपनानी चाहिए।

कार्मिक प्रबन्धन के सिद्धान्त
(Principles of Personnel Management)

पुस्तकालय में कर्मचारियों की सुचारु व्यवस्था के लिए कुछ सिद्धान्तों का अनुप्रयोग किया जाता है जिन्हें **कार्मिक प्रबन्धन के सिद्धान्त** कहते हैं। इन्हें किसी भी पुस्तकालय में लागू करके उनमें कार्यरत कर्मचारियों से अधिक से अधिक काम लेकर पाठकों की उत्तम सेवा की जा सकती है। ये सिद्धान्त निम्न हैं—

(1) **व्यक्तिगत विकास का सिद्धान्त (Principle of Personal Development)** – कर्मचारी प्रबन्ध की सफलता का आधार व्यक्ति विशेष की संतुष्टि है। किसी भी कर्मचारी की संतुष्टि हेतु उसकी इच्छाओं का पूर्ण होना आवश्यक है। इसके साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुसार विकास के अवसर मिलने चाहिए।

(2) **वैज्ञानिक चयन का सिद्धान्त (Principle of Scientific Selection)** – पुस्तकालय में कर्मचारियों का चयन वैज्ञानिक आधारों पर होना चाहिए जिससे उपयुक्त व्यक्ति का ही चयन किया जा सके। रुचि परीक्षण में भी वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग करना चाहिए।

(3) **उचित पुरुस्कार का सिद्धान्त (Principle of Fair Reward)** – कर्मचारियों को अपने कार्यों का उचित पुरुस्कार मिलना आवश्यक है अन्यथा वे असन्तुष्ट रहेंगे। उचित पुरुस्कार के अभाव में कर्मचारियों से उत्तम एवम् उचित कार्य कराना असम्भव होता है यदि उन्हें उनके कार्य का उचित पारितोषिक मिलता रहता है, तो वे अपने कार्य के प्रति सजग रहकर रुचि लेते हैं।

(4) **प्रेरणा का सिद्धान्त (Principle of Motivation)** – कर्मचारियों में कार्य के प्रति रुचि उत्पन्न करने में प्रेरणा का अपना विशेष महत्व होता है। तरह-तरह के प्रलोभन देकर कर्मचारियों में प्रेरणा पैदा की जा सकती है।

(5) **सहभागिता का सिद्धान्त (Principle of Co-partnership)** – कर्मचारियों से सम्बन्धित निर्णय लेते समय कर्मचारियों के प्रतिनिधियों को साथी के रूप में सम्मिलित करना अत्यन्त आवश्यक है। कर्मचारियों से भी सुझाव आमन्त्रित किये जाने चाहिए तथा उन्हें निर्णय में सहभागी बनाना चाहिए।

(6) **सहयोग का सिद्धान्त (Principle of Cooperation)** – सहयोग से आशय मिलजुल कर कार्य करने से होता है। पुस्तकालय में अनेक कर्मचारी होते हैं जो विभिन्न स्तर, पद वेतनमान, योग्यताधारी होते हैं। यदि उनमें सहयोग की भावना नहीं हुई, तो पुस्तकालय

का उद्देश्य पूरा नहीं हो सकेगा। अतः कर्मचारियों में सहयोग की भावना का होना अत्यन्त आवश्यक है।

(7) **संचार का सिद्धान्त (Principle of Communication)** – कार्मिक प्रबन्धन का मुख्य पहलू संचार व्यवस्था भी है। आदेशों तथा निर्देशों को सही रूप में यथा स्थान पहुँचाना पर्याप्त संचार व्यवस्था पर ही निर्भर करता है।

(8) **राष्ट्रीय कल्याण का सिद्धान्त (Principle of National Welfare)** – शिक्षा एवं प्रशिक्षण के माध्यम से कर्मचारियों को इस बात का ज्ञान अवश्य कराना चाहिए कि राष्ट्रीय समृद्धि ही सर्वोपरि होती है, इसी में सभी का हित होता है। अतः सभी कर्मचारियों में राष्ट्रीय कल्याण की भावना अवश्य होनी चाहिए और उसी के अनुसार उन्हें कार्य करना चाहिए।

कर्मचारियों की चयन प्रक्रिया

(Selection Process)

शैक्षणिक पुस्तकालयों में कर्मचारियों का चयन करना एक महत्वपूर्ण कार्य होता है। पुस्तकालय के सफल संचालन के लिए योग्य, कर्मठ, दक्ष एवं क्षमतायुक्त कर्मचारियों की आवश्यकता होती है इसलिए इसी तरह के कर्मचारियों का चयन किया जाना चाहिए। चयन का तात्पर्य पुस्तकालय में किसी कार्य विशेष के लिए उपयुक्त व्यक्ति के चयन की प्रक्रिया से होता है। यदि कर्मचारियों का चयन ढंग से एवं उचित व्यक्तियों का नहीं किया जायेगा, तो उससे पुस्तकालय को हानि उठानी पड़ सकती है। चयनकर्त्ता को यह ध्यान में रखना चाहिए कि प्रत्येक कार्य के लिए धन का विनियोग करना पड़ता है और यदि उपयुक्त व्यक्ति का चयन नहीं होता है तो उस पर किए गये विनियोग की हानि पुस्तकालय को उठानी पड़ती है।

कर्मचारियों की चयन प्रक्रिया किसी एक विधि विशेष का नाम नहीं है वरन् इसके अन्तर्गत कई प्रकार की प्रक्रियाएँ अपनाई जाती हैं जिससे चुने जाने वाले व्यक्ति के बारे में पूर्ण जानकारी प्राप्त हो सके। इसका मुख्य उद्देश्य यह ज्ञात करना होता है कि आवेदक की सामाजिक, शैक्षिक, तकनीकी, शारीरिक, मानसिक एवं अनुभव आदि की पृष्ठभूमि क्या है ? तथा सबसे महत्वपूर्ण बात व्यक्ति की कार्य के प्रति रुचि को जानने की होती है। पुस्तकालय में कर्मचारी का चयन करना है तो पुस्तकालय के उद्देश्यों के अनुसार ही उसकी चयन प्रक्रिया निश्चित की जाती है। यह प्रक्रिया अधिक लचीली (Flexible) होती है। चयन प्रक्रिया की सफलता चयन की प्रकृति, पुस्तकालय के उद्देश्य एवं नीतियाँ तथा परिवीक्षा काल आदि तीन तत्वों पर निर्भर करती है।

वर्तमान समय में कर्मचारियों के चयन हेतु भिन्न-भिन्न प्रक्रियाएँ अपनाई जाती हैं। चयन प्रक्रिया में निम्न चरण सम्पादित किये जाते हैं। चयन प्रक्रिया के निम्न चरण प्रचलित एवं सर्वमान्य हैं। इनका प्रयोग विभिन्न दशाओं के अनुसार किया जाता है।

(1) **प्राथमिक साक्षात्कार (Preliminary Interview)** – वर्तमान समय में बेरोजगारी की समस्या है अतः एक पद के लिए असंख्य व्यक्ति इच्छुक हो सकते हैं। इसलिए प्रार्थियों की सम्भावित वृहत् संख्या को देखते हुए प्राथमिक साक्षात्कार लिया जा सकता है। कर्मचारियों के चयन का यह प्रथम चरण होता है। इस प्रकार के साक्षात्कार में व्यक्ति को कार्य की प्रकृति, कार्य करने की अवधि, कार्य की शर्तें एवं दशाएँ समझा कर उसकी स्वीकृति जानी जाती है तथा उसी समय उससे उसकी शैक्षिक योग्यता, कौशल, अनुभव, कार्य करने की

रुचि आदि जानकारी प्राप्त की जाती है। यदि प्राथमिक साक्षात्कार में ऐसा अनुभव हो कि वह व्यक्ति पुस्तकालय में उक्त पद के लिए उपयोगी सिद्ध होगा, तो उसे भरने के लिए आवेदन पत्र दे दिया जाता है। प्राथमिक साक्षात्कार में अयोग्य व्यक्तियों को छाँटकर उन्हें आवेदन पत्र नहीं दिया जाता है।

(2) **आवेदन पत्र तथा उसकी जाँच (Application Form and its Checking)** – प्राथमिक साक्षात्कार में सफल हुए व्यक्तियों से आवेदन-पत्र भरवाये जाते हैं जिनमें आवेदक की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त की जाती है। आवेदन-पत्र प्रार्थी द्वारा ही स्वयं भरा होना चाहिए जिससे उसके सम्बन्ध में सामान्य निर्णय लिया जा सके कि अमुक व्यक्ति कार्य के लिए उपयुक्त रहेगा अथवा नहीं। आवेदन पत्रों को देखकर एवं अवलोकन करके आवेदक के बारे में सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त की जाती है। आवेदन पत्रों की प्राप्ति के उपरान्त सभी आवेदन पत्रों की उचित जाँच एवं विश्लेषण किया जाता है। विश्लेषण के बाद ऐसे व्यक्तियों के आवेदन पत्रों को छाँट लिया जाता है जो कार्य विशेष के लिए सभी तरह से उपयुक्त हों। अचयनित आवेदन पत्रों को निरस्त कर दिया जाता है।

चयनित आवेदन पत्रों के अभ्यार्थियों के लिए अन्य प्रपत्र (साक्षात्कार पत्र) उस दिनांक एवं समय का उल्लेख करके जिस दिन उन्हें परीक्षण के लिए बुलाया जाता है भेजे जाते हैं।

(3) **परीक्षण (Testing)** – चयन की विभिन्न प्रक्रियाओं में परीक्षण करना भी एक महत्वपूर्ण विधि है। ये परीक्षण व्यक्ति की योग्यता आदि ज्ञात करने के लिए किये जाते हैं। अभ्यर्थियों की योग्यता तथा उनका बौद्धिक स्तर ज्ञात करने के लिए बहुत पहले से ही परीक्षण प्रणाली का चलन चला आ रहा है इससे यह ज्ञात होता है कि अभ्यार्थी में कार्य विशेष को कुशलता के साथ करने की योग्यता है अथवा नहीं। ये परीक्षण कई प्रकार से लिये जाते हैं, कुछ परीक्षण निम्नलिखित हैं—

(अ) योग्यता परीक्षण,

(ब) विशिष्ट योग्यता परीक्षण,

(स) बुद्धि परीक्षण,

(द) अभिरुचि परीक्षण,

(य) व्यक्तित्व परीक्षण।

उपर्युक्त परीक्षण सभी व्यवसायों के साथ-साथ संस्थाओं द्वारा भी प्रयोग में लाये जाते हैं। ये परीक्षण पूर्णतः प्रमाणित हो चुके हैं। ये परीक्षण तब ही सफल हो सकते हैं जब एक ही प्रकार के कार्य एवं व्यवसाय के लिए कई कर्मचारियों की आवश्यकता हो।

(4) **वास्तविक साक्षात्कार (Proper Interview)** – अभ्यार्थियों के चयन के लिए वास्तविक साक्षात्कार अत्यन्त लोकप्रिय एवं प्रचलित पद्धति है। प्रायः विभिन्न परीक्षणों के बाद अभ्यार्थियों का साक्षात्कार लिया जाता है, कुछ पदों के लिए केवल साक्षात्कार ही पर्याप्त होता है। साक्षात्कार एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए आयोजित विचारों का आदान-प्रदान होता है। साक्षात्कार से अभ्यार्थियों की बौद्धिक सतर्कता, भौतिक शक्ति, मानसिक सन्तुलन, व्यक्तित्व का आकर्षण आदि की जानकारी आसानी से हो जाती है। साक्षात्कार कर्त्ता अभ्यार्थी को अपने समक्ष बुलाकर उसका स्वागत करता है उससे प्रश्न पूछता है और उसकी प्रतिक्रिया तथा उत्तर को परखता है। इस प्रकार अभ्यार्थी की योग्यता परखने के लिए समुचित वार्तालाप करता है और इस तरह अभ्यार्थी के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की जाँच-पड़ताल साक्षात्कार के माध्यम

से की जाती है। आजकल एक समिति द्वारा साक्षात्कार लेने का प्रचलन है, इसके लिए कई लोगों की समिति साक्षात्कार के लिए बनायी जाती है।

(5) **शारीरिक जाँच (Physical Examination)** – अन्त में अभ्यार्थी की शारीरिक जाँच भी की जाती है। शारीरिक जाँच से यह पता चलता है कि चयनित व्यक्ति में कार्य करने की आवश्यक शारीरिक क्षमता है अथवा नहीं। अथवा उसमें कोई छूत की बीमारी टी.बी., एड्स, आदि तो नहीं है या अन्य कोई असाध्य बीमारी तो नहीं है जिससे उनकी नियुक्ति ही व्यर्थ हो जाय। ऐसा कर्मचारी अपने रोग के कारण कोई कार्य भी न कर सकेगा। अतः पुस्तकालय के लिए अभ्यार्थियों के चयन करते समय यह देखना भी आवश्यक है कि शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से पूर्ण स्वस्थ हों।

(6) **कार्य पर नियुक्ति (Appointment)** – अभ्यार्थी जब चयन की सभी प्रक्रियाओं से गुजरकर सभी परीक्षणों में उत्तीर्ण होता है तो अन्त में उसे कार्य का उत्तरदायित्व सौंपना होता है जिसके लिए वह चयन किया गया है। कार्य पर नियुक्ति के लिए उसे नियुक्ति पत्र प्रदान किया जाता है। जिसके प्रत्युत्तर में अभ्यार्थी पुस्तकालय में अपना नियुक्त होने का प्रतिवेदन (Joining Report) प्रस्तुत कर अपना कार्य प्रारम्भ कर देता है। वास्तव में कोई भी कर्मचारी अन्तिम रूप से नियुक्त तभी समझा जायेगा जब वह कुछ दिन कार्य कर लेता है तथा उसे तथा प्रबन्धन दोनों को संतुष्टि हो जाती है। इसलिए अन्तिम रूप से नियुक्त करने से पहले, चयनित व्यक्ति को परिवीक्षा काल (Probation Period) पर कुछ समय के लिए रखा जाता है। उसकी पूर्ण रूप से स्थायी नियुक्ति निश्चित परिवीक्षा काल (Probation Period) की समाप्ति पर दोनों पक्षों के सन्तुष्ट होने पर की जाती है।

श्रेष्ठ कार्मिक नीति
(Best Personnel Policy)

पुस्तकालयों में उत्तम कर्मचारियों के चयन हेतु एक श्रेष्ठ **कर्मचारी नीति** का निर्धारण करना आवश्यक होता है जिसमें निम्न तत्वों पर सदैव ध्यान रखना चाहिए।

(1) पुस्तकालय कर्मचारियों को अच्छे से अच्छा वेतन देने की व्यवस्था करनी चाहिए जिससे पुस्तकालय सेवा के प्रति योग्य एवम् सक्षम व्यक्ति आकर्षित हो सकें।

(2) अच्छे वेतन के साथ-साथ कर्मचारियों को अन्य सुविधएँ भी अधिक से अधिक प्रदान की जानी चाहिए। जैसे—अवकाश सम्बन्धी, आवास सम्बन्धी, चिकित्सा सम्बन्धी तथा उनके बच्चों की शिक्षा सम्बन्धी आदि सुविधाएँ प्रदान करनी चाहिए जिससे पुस्तकालय के कर्मचारी शारीरिक एवं मानसिक रूप से आत्म-सन्तुष्ट रह सकें। इस प्रकार की अन्य अतिरिक्त सुविधाओं में कार्य करने की अवधि 6 से 8 घण्टे के लगभग होनी चाहिए तथा दिन में कार्य पर रहते हुए लंच ब्रेक की सुविधा तथा बीच में भी चाय (Tea Brake) के लिए भी अवकाश दिया जाना चाहिए।

(3) कर्मचारियों के कार्यों का समय-समय पर उनके कार्य निषादन का मूल्यांकन करना चाहिये जिससे यह ज्ञात हो सके कि किसी एक कर्मचारी पर कार्य का बोझ (कार्यभार) अधिक या कम तो नहीं है। यदि ऐसा है तो उसमें कमी अथवा वृद्धि जैसी भी आवश्यकता हो की जा सकती है।

(4) कर्मचारियों के लिए समय-समय पर रिफ्रेशर कोर्स आयोजित करने चाहिए, जिससे कर्मचारियों को नवीन विधियों एवं तकनीकियों का ज्ञान हो सके।

(5) कर्मचारियों को उनकी योग्यता बढ़ाने के लिए समय-समय पर अवसर प्रदान किये जाने चाहिए जिससे वे अपनी शैक्षिक अथवा व्यावसायिक योग्यता बढ़ा सकें तथा अपने सामाजिक स्तर (Status) में सुधार कर सकें।

(6) पुस्तकालय में सभी कर्मचारियों के मध्य मित्रता का भाव होना चाहिए। इसके लिए समय-समय पर आपसी बैठकें आयोजित की जानी चाहिए तथा सम्बन्धों में दृढ़ता लानी चाहिए।

(7) कर्मचारियों के हितों की रक्षार्थ **लाइब्रेरी स्टाफ एसोशियेशन** का गठन करना चाहिए जो कर्मचारियों के हितों की रक्षा के लिए अधिकारियों से उनके कल्याण के लिए कार्य करा सकें तथा कर्मचारियों में भी आपस में भावनात्मक गतिविधियों का विकास हो सके।

(8) कर्मचारियों द्वारा प्रयुक्त किये जाने वाला सामान समय पर ही उपलब्ध करा देना चाहिए, जैसे—पेन, पेन्सिल, स्याही, कागज, स्टेशनरी, आदि जिससे उनके कार्य में कोई व्यवधान उत्पन्न न हो सके।

(9) कर्मचारियों के हितों के लिए समय-समय पर विस्तार भाषण (Extension Lectures) आयोजित किये जाने चाहिए जिससे उनके ज्ञान में वृद्धि हो सके।

(10) कर्मचारियों के बैठने के लिए सुसज्जित एवं टिकाऊ फर्नीचर, बैठने की उत्तम व्यवस्था, शीतल जल की व्यवस्था आदि का भी प्रबन्ध किया जाना चाहिए जिससे उन्हें कोई व्यक्तिगत परेशानी न हो सके।

(11) इसके अतिरिक्त उनकी कोई व्यक्तिगत समस्या है तो सहानुभूति पूर्वक हल करने में उनकी मदद करनी चाहिए।

पुस्तकालय कर्मचारियों की प्रकृति एवं स्वरूप
(Nature and Structure)

पुस्तकालय में कर्मचारियों की सेवाएँ सवैतनिक होती है अर्थात् वे अपने सेवा कार्य के बदले वेतन प्राप्त करते हैं लेकिन उनका कार्य फिर भी समाज सेवा कार्य की श्रेणी में ही गिना जाता है। पुस्तकालय के प्रत्येक कर्मचारी का कार्य एक चुनौतीपूर्ण (Challenging) कार्य होता है अतः पुस्तकालय में कार्य करने हेतु वही व्यक्ति इच्छुक एवम् सफल हो सकता है जो चुनौती को स्वीकार करने में नितान्त सक्षम हो। इसलिए पुस्तकालय कर्मचारियों में सभी गुणों का विद्यमान होना अति आवश्यक होता है, उनमें शैक्षिक योग्यता के साथ-साथ व्यावसायिक गुणों का भी होना अति आवश्यक होता है जिससे वे एक व्यवसायी की भाँति पुस्तकालय सेवा प्रदान करने के बदले में उत्तम परिणाम एवं प्रतिफल प्राप्त कर सकें। इसके अतिरिक्त व्यक्तिगत गुणों का समावेश होना भी अति आवश्यक होता है। अतः यदि हम पुस्तकालयों को जीवित रखना चाहते हैं, तो उसके कर्मचारियों में शैक्षिक एवं प्रशिक्षित गुणों के साथ-साथ व्यावसायिक एवं वैयक्तिक गुणो का होना आवश्यक है। पुस्तकालय की प्रकृति, स्वरूप एवं कर्मचारियों की योग्यताओं का सही प्रदर्शन, मूल्यांकन एवं अनुप्रयोग करने के लिए विश्वविद्यालय पुस्तकालय के निम्न उदाहरण प्रस्तुत हैं—

प्रकृति (विश्वविद्यालयी पुस्तकालय कर्मचारी)

किसी भी विश्वविद्यालयी पुस्तकालय स्टाफ (कर्मचारियों) को यूजीसी पुस्तकालय समिति (UGC Library Committee) ने निम्न प्रकार श्रेणीबद्ध किया है—

(अ) प्रवर व्यावसायिक (Professional Senior)	पुस्तकालयाध्यक्ष उप-पुस्तकालयाध्यक्ष प्रलेखन कार सूचना वैज्ञानिक सन्दर्भ पुस्तकालयाध्यक्ष प्रमुख सूचीकार एवं वर्गीकार
(ब) अवर व्यावसायिक (Professional Junior)	सहायक पुस्तकालयाध्यक्ष सहायक वर्गीकार सहायक सूचीकार
(स) व्यावसायिक सहायक (Professional Assistants)	प्रवर पुस्तकालय सहायक अवर पुस्तकालय सहायक
(द) अर्द्ध-व्यावसायिक सहायक	पुस्तकालय सहायक बुक लिफ्टर
(य) अ-व्यावसायिक	लेखाकार, आशुलिपिक, टंकक लिपिक, चपरासी, चौकीदार आदि।

विश्वविद्यालयी पुस्तकालय कर्मचारियों का स्वरूप (Structure of University Library Staff)

प्रत्येक पुस्तकालय में उसके संचालन के लिए विभिन्न श्रेणी के कर्मचारियों की आवश्यकता होती है। किसी विश्वविद्यालय पुस्तकालय में कर्मचारियों की संख्या कितनी हो, यह निर्धारित करने के लिए अनेक समितियों एवं विद्वानों ने अनेक सूत्र एवं सिद्धान्त प्रतिपादित किए हैं। पुस्तकालयों में कर्मचारियों की संख्या पुस्तकालय के प्रकार, स्वरूप, पाठकों की संख्या, पाठ्य-सामग्री की संख्या, पुस्तकालय का आर्थिक बजट, पुस्तकालय का समय तथा विभागों की संख्या आदि पर निर्भर करती है। इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए कुछ निम्न प्रकार के सूत्र दिये गये हैं जो किसी भी विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में कर्मचारियों की व्यवस्था के लिए प्रयोग किये जा सकते हैं।

(अ) **रंगनाथन-सूत्र**—प्रसिद्ध पुस्तकालय विज्ञानवेत्ता डा. रंगनाथन ने किसी भी प्रकार के पुस्तकालय के कर्मचारियों की संख्या निर्धारित करने के लिए स्टाफ फार्मूला (Staff Formula) नाम से एक कर्मचारी प्रारूप तैयार किया था जो थोड़े-बहुत संशोधन के साथ किसी भी पुस्तकालय में प्रयोग किया जा सकता है। वह सूत्र निम्न प्रकार पुस्तकालय के विभागकर प्रस्तुत किया है।

SM (Maintenance Section) $= \frac{A}{300}$

ST (Technical Section) $= \frac{A + 40D}{200}$

वाले व्यय का आकलन विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) द्वारा गठित पुस्तकालय समिति द्वारा कर्मचारियों की संख्या को निर्धारित करने हेतु दिए गए कर्मचारी परिसूत्र (Staff Formula) तथा उसके स्वीकृत नवीनतम वेतनमानों के अनुसार किया जाता है।

इस प्रकार विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय पुस्तकालयों के लिए विवरण विधि (Method of details) के अन्तर्गत वित्तीय आकलन हेतु यू.जी.सी. द्वारा निर्धारित निम्नलिखित मानकों को उपयोग में लाया जा सकता है।

(i) कर्मचारियों हेतु यू. जी. सी. कर्मचारी परिसूत्र एवं उनके लिए नवीन स्वीकृत वेतनमान।

(ii) अध्ययन सामग्री पर व्यय के आकलन हेतु 15 रु. प्रति छात्र और 200 रु. प्रति शिक्षक।

(iii) पुस्तकों एवं अन्य अध्ययन सामग्री के कुल मूल्य का 5 प्रतिशत पुस्तकों के संग्रह एवं व्यवस्था के लिए।

(iv) नए विश्वविद्यालय पुस्तकालयों को प्रारम्भिक रूप में उनके संग्रह विकास हेतु यू. जी. सी. द्वारा निर्धारित नियमों को आकलन हेतु प्रयोग में लाया जा सकता है।

वित्तीय आकलन की उपर्युक्त तीनों विधियों में विवरण विधि ही अधिक प्रमाणिक एवं सर्वमान्य है। डॉ. रंगनाथन ने पुस्तकालय के वित्तीय आकलन के बारे में सुझाव दिया कि विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय छात्रों हेतु व्यय का आकलन प्रति व्यक्ति विधि (Per Capita Method) से किया जाना चाहिए तथा शिक्षक एवं शोध छात्रों हेतु व्यय का आकलन विवरण विधि (Method of Details) के आधार पर किया जाना चाहिए।

शैक्षणिक पुस्तकालयों में संग्रह विकास
(COLLECTION DEVELOPMENT IN ACADEMIC LIBRARIES)

प्रश्न—संग्रह विकास से आप क्या समझते हैं ? यह किस प्रयोजन की पूर्ति करता है ?

What do you understand by collection development ? What purpose does it serve ?

अथवा (Or)

पुस्तकालय संग्रह विकास में पुस्तकालय समिति की आवश्यकता बताइए।

Explain the need for a library committee in collection development.

अथवा (Or)

पुस्तकालय में प्रलेख संग्रह अथवा स्टाक के विकास के लिए संग्रह विकास नीति एक साधन है। ऐसी नीति एक लिखित, परम्परागत अथवा एक प्रलेख भी हो सकती है। चर्चा करें।

Collection development policy is the course of action adopted for developing the collection or stock in a library. A policy can be written, conventional or a document. Discuss.

अथवा (Or)

संग्रह विकास से आप क्या समझते हैं ? यह किस प्रयोजन की पूर्ति करता है ?

What is meant by collection development ? What purpose will it serve ?

अथवा (Or)

संग्रह विकास नीति पूर्वापेक्षाओं का वर्णन कीजिए।

Explain the prerequisties of collection development policy.

अथवा (Or)

पुस्तकालय संग्रह निर्माण पर एक निबन्ध लिखिए।

Write an essay on building of library collection.

उत्तर—किसी भी पुस्तकालय के चार महत्वपूर्ण घटक (Factors) – प्रलेख (Documents), उपयोगकर्ता (Users), कर्मचारी (Staff) और भवन तथा उपकरण (Building and equipments) होते हैं। ये सभी घटक एक आधुनिक पुस्तकालय की स्थापना में सहायक होते हैं और एक-दूसरे के पूरक होते हैं। कोई भी पुस्तकालय यदि आधुनिक उपकरणों से सुसज्जित हैं, योग्य प्रशिक्षित कर्मचारी हैं किन्तु यदि उपयोगकर्ताओं को संतुष्ट करने हेतु उपयुक्त ज्ञान और सूचना सामग्री का अच्छा संग्रह नहीं है तो उसे पुस्तकालय की संज्ञा नहीं दी जा सकती। आधुनिक पुस्तकालय में स्तरीय प्रलेखों का संग्रह अत्यन्त आवश्यक होता है जो उपयोगकर्ताओं की माँग और आवश्यकता की पूर्ति कर सके।

वर्तमान समय में उपयोगी और महत्वपूर्ण सूचना मात्र परम्परागत प्रलेखों यथा पुस्तकों और पत्रिकाओं आदि में ही उपलब्ध नहीं होती बल्कि दूसरे प्रारूपों, जैसे—श्रव्य-दृश्य सामग्री (Audio-visual materials), माइक्रोफॉर्म, मानचित्र, पाण्डुलिपि, पैम्फलेट्स आदि में पाई जाती है। इस प्रकार के प्रलेखों को अपुस्तकीय सामग्री अथवा अ-परम्परागत प्रलेख कहा जाता है। ये सभी परम्परागत और अपराम्परागत प्रलेख मिलकर 'सूचना अभिलेख' (Information Records) अथवा 'सूचना संसाधन' (Information Resources) के नाम से जाने जाते हैं। अतः एक आधुनिक पुस्तकालय को अपने सूचना संसाधनों का संग्रह वर्तमान और भविष्य दोनों प्रकार के उपयोगकर्ताओं की माँग और आवश्यकता को ध्यान में रखकर समृद्ध करना चाहिए। इसके साथ यह भी देखना चाहिए कि इन प्रलेखों में उपलब्ध सूचना प्रासंगिक, नवीन, अद्यतन तथा प्रमाणिक हो।

संग्रह विकास

(Collection Development)

किसी पुस्तकालय की वर्तमान एवं भविष्य की आवश्यकताओं के अनुरूप अपने संग्रह को विकसित करने की योजना की प्रक्रिया को संग्रह विकास की संज्ञा दी जाती है। जिसका मूल आधार पुस्तकालय के उद्देश्यों की पूर्ति होता है।

Encyclopedia of Library and Information Science के अनुसार, "पुस्तकालय संग्रह का तात्पर्य पुस्तकालय में संग्रहित सामग्रियों यथा पुस्तकों, पाण्डुलिपियों, सामयिकी प्रकाशनों (Serials), शासकीय प्रलेखों, पैम्फलेट्स, ग्रन्थ सूचियों, प्रतिवेदनों,

अभिलेखों, माइक्रोफिल्म रील्स, माइक्रोकार्डस, माइक्रोफिश, पंच कार्डस, कम्प्यूटर टेप्स, आदि के कुल योग से है।"

Harrod's Librarian's Glossary (6th Edition) – में संग्रह विकास को परिभाषित करते हुए लिखा है, "केवल वर्तमान आवश्यकताओं की ही पूर्ति नहीं बल्कि आगामी आने वाले वर्षों तक के लिए एक सुसंबद्ध एवं विश्वसनीय संग्रह अधिग्रहण कार्यक्रम योजना बनाने की प्रक्रिया जिससे पुस्तकालय सेवा के उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके" को संग्रह विकास कहते हैं।

उपर्युक्त दो परिभाषाओं के अध्ययन के पश्चात् हम कह सकते हैं कि पुस्तकालयों में संग्रह विकास का तात्पर्य पुस्तकालय के प्रकार, स्थिति, पाठकों के प्रकार, पाठकों की माँग और आवश्यकता और उनकी भविष्य की माँग को निर्धारित करते हुए सभी प्रकार से सुसंबद्ध, विश्वसनीय, प्रासंगिक, अद्यतन और प्रमाणिक संग्रह की वृद्धि और विकास करना है। पुस्तकालय विज्ञानवेत्ता बर्विक सेयर्स ने पुस्तकों के सम्बन्ध में कहा है कि पुस्तकालय का आधार पुस्तकें ही होती हैं। अच्छे संग्रह द्वारा पुस्तकालय की पहचान बनती है। किसी श्रेष्ठ पुस्तकालय का निर्माण श्रेष्ठ पुस्तकों द्वारा ही किया जा सकता है। यदि पुस्तकालय को उत्तम और उपयोगी बनाना है, तो उसमें उत्तम संग्रह का विकास होना आवश्यक है।

संग्रह विकास के उद्देश्य (Purpose of Collection Development) – संग्रह विकास का आशय पुस्तकालय संग्रह का इस दृष्टिकोण से चयन, अधिग्रहण और मूल्यांकन करना है कि मुद्रित और अमुद्रित दोनों प्रकार की पुस्तकालय में उपलब्ध सामग्री उपयोगकर्ताओं के लिए वास्तविक रूप से कितनी उपयोगी है। अतः संग्रह विकास प्रलेखों के निरंकुश चयन और अधिग्रहण को महत्व नहीं देता। इसी प्रकार यह पुस्तकालय संग्रह के मूल्यांकन पर भी जोर देता है जिससे संग्रह समृद्ध बन सके और साथ ही असम्बद्ध, अनावश्यक और पुराने प्रलेखों को पुस्तकालय से छाँटने और हटाने में भी सहायक होता है। इसका यह भी आशय है कि जब भी संग्रह निर्माण किया जाए, उपयोगकर्ताओं की माँग और आवश्यकता को आवश्यक रूप से ध्यान में रखा जाना चाहिए।

इस प्रकार संग्रह विकास का प्रमुख उद्देश्य उपयोगकर्ता की प्रलेख अथवा सूचना सम्बन्धी आवश्यकता को ज्ञात करना है जिससे—

1. पुस्तकालय द्वारा उपयोगकर्ता समुदाय को प्रासंगिक, उपयोगी, नवीन और अद्यतन सूचना सामग्री उपलब्ध कराई जा सके,
2. उपयोगकर्ताओं की सूचना एवं प्रलेख से सम्बन्धित आवश्यकताओं को गहनता से ज्ञात करना,
3. उन प्रलेखों को चयन एवं अधिग्रहण करना जो उपयोगकर्ता के लिए वास्तविक रूप से उपयोगी हों और उसकी आवश्यकता की पूर्ति करते हों,
4. प्रलेख संग्रह पर सेवा के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए व्यवस्थित ढंग से व्यय करना,
5. संग्रह से अनावश्यक और पुरातन प्रलेखों के निष्कासन हेतु समय-समय पर संग्रह की समीक्षा करना।

संग्रह विकास नीति
(Collection Development Policy)

संग्रह विकास नीति किसी पुस्तकालय के संकलन के संग्रह विकास के लिए एक उपयुक्त क्रियात्मक प्रणाली है। यह नीति प्रलेख (Policy Document) अलिखित परम्परागत अथवा लिखित रूप में हो सकता है। संग्रह विकास नीति वक्तव्य में सैद्धान्तिक लक्ष्यों एवं व्यावहारिक तथ्यों को स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया जाता है। यह नीति वक्तव्य (Policy Statement) पुस्तकालय के नियोजन, आय-व्यय और प्रलेखों के चयन एवं अधिग्रहण से सम्बन्धित क्रियाकलापों हेतु आवश्यक निर्देश प्रदान करता है जिससे पुस्तकालय का संग्रह विकास कार्यक्रम उचित दिशा में क्रियान्वित हो सके। इस प्रकार संग्रह विकास नीति का मूल उद्देश्य किसी पुस्तकालय के संग्रह विकास हेतु पथ प्रदर्शन करना है।

अमेरिकन पुस्तकालय संघ (ALA) की संग्रह विकास समिति जब "Guidelines for the formation of collection development policies" तैयार कर रही थी तब उसने अनुमान लगाया कि किसी भी पुस्तकालय के लिए एक लिखित संग्रह विकास नीति आवश्यक उपकरण है जो चयनकर्ता को अधिक सुसंगतता के साथ परिभाषित लक्ष्य की ओर कार्य करने में सक्षम बनाता है और सुदृढ़ संग्रह के निर्माण में चातुर्यपूर्ण ढंग से सीमित धन के उपयोग में सहायक होता है।

अलिखित संग्रह विकास नीति के स्थान पर लिखित नीति को अधिक महत्व मिलता है। **कैट्ज** (Katzz) एवं कुछ अन्य विद्वानों ने यह अनुभव किया कि संग्रह विकास नीति लिखित रूप में होनी चाहिए। **फुटॉस** (Futas) ने कहा कि लिखित नीति पुस्तकालय क्रियाकलापों में स्थिरता तथा निरंतरता को प्रोत्साहित करती है। **फेन्ग** (Feng) ने भी अनुभव किया कि लिखित नीति वक्तव्य पुस्तकालय संसाधनों की संगतपूर्ण एवं संतुलित वृद्धि को सुनिश्चित करता है।

संग्रह विकास नीति के लाभ (Advantages of Collection Development Policy) – पुस्तकालय के पैतृक संगठन अथवा अनुदान उपलब्ध कराने वाले संगठन या संस्था की नीतियों में यदि कोई परिवर्तन किया जाता है, तब उस स्थिति में पुस्तकालय को भी अपनी संग्रह विकास नीति की समीक्षा करनी पड़ सकती है। किन्तु नीति के अधिकांश पक्ष यथावत रहते हैं। कुछ प्रमुख लेखकों यथा कैट्ज (Katzz), मैगरील (Magrill) और हिक्की (Hickey) ने लिखित संग्रह विकास नीति के महत्व एवं लाभों का उल्लेख किया है। इनके विचारों के आधार पर संग्रह विकास नीति के निम्नलिखित लाभ हैं :

1. संग्रह विकास नीति चयन और अधिग्रहण के सर्वोत्तम उपकरण के रूप में कार्य करती है,
2. संसाधनों के सर्वोत्तम उपयोग हेतु सहायता प्रदान करती है,
3. पैतृक संगठन अथवा पुस्तकालय के उद्देश्यों से अपने सम्बन्धों को व्यक्त करती है,
4. संग्रह विकास की योजना बनाने के लिए आधार प्रदान करती है,
5. व्यक्तिगत पक्षपात से रहित अध्ययन एवं विशिष्ट संदर्भ सामग्रियों के दिन-प्रतिदिन के चयन हेतु प्रायोगिक निर्देश प्रदान करती है,

6. अधिग्रहण की सर्वोत्तम विधि को सुनिश्चित करने में सहायता प्रदान करती है,
7. चयन एवं संग्रहण को न्यायसंगत बनाने में सहयोग एवं सहायता प्रदान करती है,
8. संग्रह विकास नीति हेतु किस प्रकार की सामग्री क्रम की जानी चाहिए पर स्पष्ट वक्तव्य प्रस्तुत कर सेंसर व्यवस्था के विपरीत भी कुछ सीमा तक सहायक होती है,
9. इस नीति को पुस्तकालय प्राधिकरण एवं समिति का समर्थन प्राप्त होता है,
10. बजट आवंटन के लिए तर्क संगत निर्देश और दीर्घकालीन बजट योजना के विकास के लक्ष्य, वृद्धि की रूपरेखा एवं प्राथमिकता स्पष्ट कर सहायता प्रदान करती है,
11. पुस्तकालय के सहकारी कार्यक्रमों यथा अन्तर्पुस्तकालय ऋण, संसाधन सहभागिता तथा नेटवर्क में सहयोग करती है,
12. सामग्रियों के क्रय के पूर्व समीक्षा विधियों के निर्माण में सहयोग प्रदान करती है,
13. अनुपयोगी पाठ्य सामग्री को निष्कासित किए जाने के सम्बन्ध में निर्देश और सहायता प्रदान करती है, और
14. पुस्तकालय को एक महत्वपूर्ण संस्था का स्वरूप प्रदान करने में सहायता प्रदान करती है।

इस प्रकार संग्रह विकास नीति वक्तव्य पुस्तकालयों में संग्रह विकास के लिए एक महत्वपूर्ण लाभदायक उपकरण है।

शैक्षणिक पुस्तकालय एवं संग्रह विकास नीति

(Academic Libraries and Collection Development Policy)

शैक्षणिक पुस्तकालय प्रणाली के अन्तर्गत विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों एवं उच्च शिक्षा के संस्थानों के पुस्तकालय आते हैं। इनका लक्ष्य एवं उद्देश्य सम्बन्धित शिक्षा संस्थान के ज्ञान एवं सूचना सम्बन्धी उद्देश्यों को पूरा करना होता है। ये पुस्तकालय अपनी पैतृक संस्था महाविद्यालय अथवा विश्वविद्यालय के अविभाज्य अंग होते हैं तथा उनकी सूचना आवश्यकता को ध्यान में रखकर ये कार्य करते हैं और सेवाएँ उपलब्ध कराते हैं। कभी-कभी एक ही श्रेणी के शैक्षणिक पुस्तकालयों के भी परस्पर कुछ लक्ष्य एवं उद्देश्य भिन्न-भिन्न होते हैं क्योंकि उनके पैतृक संस्था अथवा संगठन की प्राथमिकताएँ, विशिष्टीकरण एवं क्षेत्र भिन्न-भिन्न होते हैं। वर्तमान में नवीन तकनीकी और प्रविधियों के विकास के फलस्वरूप एक ही पुस्तकालय में समय-समय पर नवीन कार्य, नवीन सेवाएँ और नए लक्ष्य विकसित हो सकते हैं।

अतः शैक्षणिक पुस्तकालय की संग्रह विकास नीति सामान्यतः उसी प्रकार के पुस्तकालय के उद्देश्य एवं लक्ष्य को निर्देशित करने के लिए होनी चाहिए। समय-समय पर परिवर्तित उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए नीति की सामयिक समीक्षा आवश्यक है जिससे वह बदलती परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुरूप अद्यतन बनी रह सकें। अतः संग्रह विकास नीति की समय-समय पर समीक्षा आवश्यक है।

शैक्षणिक पुस्तकालयों में संग्रह विकास नीति सम्बन्धित पुस्तकालय में उपलब्ध संसाधनों पर निर्भर करती है। यथा—वित्त, आधारभूत सुविधाएँ जिनके अन्तर्गत समुचित

स्थान, एवं उपकरण, संसाधन सहभागिता हेतु अन्य समकक्ष पुस्तकालयों के साथ सम्बन्ध आदि उस पुस्तकालय की संग्रह विकास नीति की योजना को निर्धारित करते हैं। पुस्तकालय में प्रलेखों की उपलब्धता नीति के लिए दूसरा आधार है। विशेषत: प्रासंगिक एवं उपयोगी प्रलेख यदि विदेशी हैं तब उस स्थिति में नीति के अन्तर्गत विदेशी विनिमय, उच्च मूल्य और उन प्रलेखों को विदेशों से प्राप्त करने में होने वाले विलम्ब आदि को ध्यान में रखते हुए संग्रह विकास नीति में सम्बद्ध किया जाता है।

संग्रह विकास कार्यक्रम (Collection Development Programmes)

पुस्तकालय के संग्रह विकास में पुस्तक अथवा विविध प्रकार के प्रलेखों का चयन, अधिग्रहण, संग्रह मूल्यांकन और अनुपयुक्त/जीर्ण-शीर्ण/अप्रचलित प्रलेखों का निष्कासन कार्यक्रम अंतर्निहित होता है। इन सभी घटकों के लिए अलग-अलग नीतियों का निर्माण अथवा निर्धारण किया जाना आवश्यक है। यदि पुस्तक चयन, पुस्तक अधिग्रहण, संग्रह के मूल्यांकन तथा अप्रचलित प्रलेखों के निष्कासन हेतु अलग-अलग नीतियाँ होंगी तो इन कार्यों को नियमानुसार करना सम्भव होगा।

पुस्तकालय संग्रह में सामग्री के प्रकार (Types of Material in Library Collection) – शैक्षणिक पुस्तकालयों की सार्थकता और उपयोगिता उसमें संग्रहित सामग्री पर आधारित होती है। वर्तमान समय में सूचना का विशेष महत्व है और समस्त प्रकार की प्रभावी सूचना मात्र परम्परागत प्रलेखों, यथा—पुस्तकों और सामयिकी प्रकाशनों में ही निहित नहीं होती अन्य अपुस्तकीय स्वरूपों तथा इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों में भी प्रचुर मात्रा में होती है। विश्वविद्यालय पुस्तकालयों में अध्ययन, शिक्षण और शोध से सम्बन्धित विषयों पर परम्परागत प्रलेखों के साथ-साथ अपरम्परागत (Non-conventional) प्रलेखों की भी आवश्यकता होती है। इससे अतिरिक्त विश्वविद्यालय पुस्तकालयों को देश में प्रकाशित प्रलेखों के साथ-साथ उपयोगकर्ताओं की आवश्यकता और माँग के अनुसार कुछ प्रमुख विषयों में विदेशों में प्रकाशित प्रलेखों की भी आवश्यकता होती है। शिक्षण और शोध से सम्बन्धित विशिष्ट विषयों के प्रलेखों के अतिरिक्त सामान्य संदर्भ प्रकार के प्रलेख, जैसे—विश्वकोश, शब्दकोश, गजेटीयर्स, निर्देशिकाएँ आदि भी आवश्यक है।

शैक्षणिक पुस्तकालय में संग्रहित प्रलेखों के कई प्रकार होते हैं। विभिन्न प्रकार के प्रलेखों को निम्नांकित रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित किया गया है—

शैक्षणिक पुस्तकालयों में संग्रहित प्रलेखों की प्रकृति (Nature of Collected Documents in Academic Libraries)

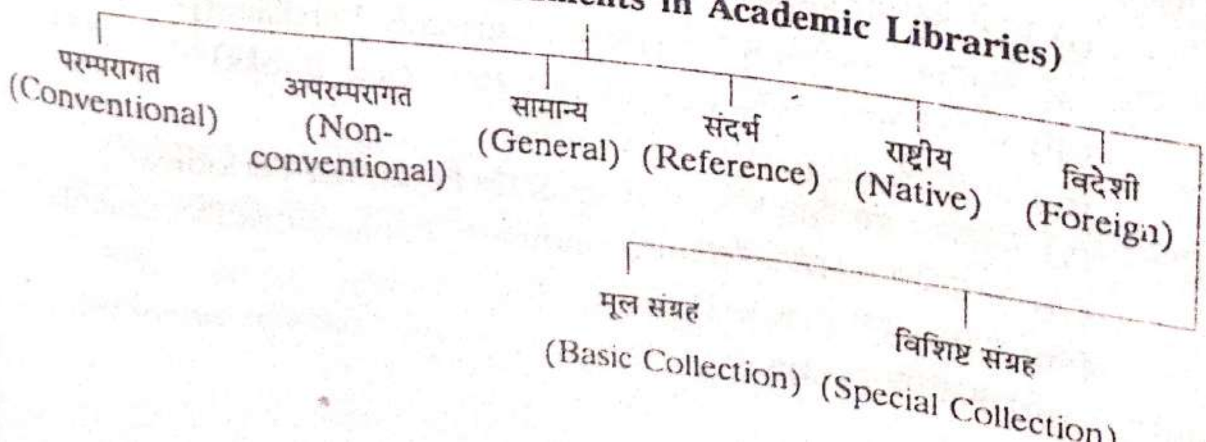

डॉ. एस. आर. रंगनाथन ने प्रलेखन कार्य और सेवाओं के आधार पर प्रलेखों को चार श्रेणियों अथवा प्रकारों में विभाजित किया है—

(1) **परम्परागत प्रलेख (Conventional documents)** – इस श्रेणी में पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं को रखा गया है। इन पाठ्य-सामग्रियों का भौतिक स्वरूप अत्यधिक पुराना है। इसलिए इनके लिए 'परम्परागत' शब्द का प्रयोग किया गया है।

(2) **अपरम्परागत प्रलेख (Non-conventional documents)** – इस श्रेणी के प्रलेखों को रंगनाथन सूक्ष्म प्रलेख (Micro-documents) भी कहते हैं। यहाँ अपरम्परागत शब्द का प्रयोग इसलिए किया गया है कि इस श्रेणी के प्रलेख परम्परागत प्रलेखों से भिन्न होते हैं और सूक्ष्म इसलिए कि ये आकार और माध्यम की दृष्टि से छोटे होते हैं। इस प्रकार के प्रलेखों के अन्तर्गत लेख अथवा किसी पुस्तक का कोई अंश, सूक्ष्म प्रतिलिपि, श्रव्य, दृश्य और श्रव्य-दृश्य प्रलेख आते हैं।

(3) **नव-परम्परागत प्रलेख (Neo-conventional documents)** – इस श्रेणी में आने वाले प्रलेख सूक्ष्म प्रलेखों से भी छोटे होते हैं। इनके अन्तर्गत मानक (Standards), विशिष्टियाँ (Specifications), पेटेंट्स (Patents), योजनाएँ (Plans), डेटा (Data) आदि आते हैं।

(4) **अनुप्रलेख (Meta-documents)** – ये ऐसे प्रलेख हैं, जो प्रत्यक्ष रूप से किसी यंत्र (Instrument) द्वारा तैयार किए जाते हैं, जैसे—कैमरे द्वारा खींची गई तस्वीरें, ग्रामोफोन रिकॉर्ड, टेप्स (Tapes), डिस्क्स (Discs), फिल्म आदि इस श्रेणी के प्रलेख हैं।

पैरी समिति, यू. के. (Perry Committee, UK) के अनुसार, "शैक्षणिक साधनों के रूप में विश्वविद्यालय पुस्तकालय के संग्रह का महत्व न केवल उसकी उपयोगिता पर आधारित है बल्कि उसकी शोध शक्ति पर भी निर्भर करता है। उसे स्नातक, स्नातकोत्तर, शोधपरक और प्रबुद्ध विद्वानों की बढ़ती हुई माँग की पूर्ति तथा अन्तर पुस्तकालय आदान-प्रदान का कार्य भी करना है। अतः पुस्तकालय संग्रह ऐसा हो जो विश्वविद्यालय के शैक्षणिक एवं शोध कार्यों को पूरा करने में सहायक हो।"

इस प्रकार सभी प्रकार का विशिष्ट संग्रह और सभी प्रकार की मुद्रित और अमुद्रित सामग्री समस्त अध्ययन-अध्यापन के विषय क्षेत्रों के अन्तर्गत जिनकी छात्रों, शोध छात्रों और शिक्षकों द्वारा माँग है, उस पर पुस्तकालय संग्रह नीति के अन्तर्गत विचार करना आवश्यक है।

एक विश्वविद्यालय पुस्तकालय के संग्रह में निम्नलिखित प्रकार की सामग्री की अपेक्षा की जाती है—

(i) छात्रों हेतु पाठ्य-पुस्तकें (Text-books for Students)

(ii) नवीनतम प्रकाशित पुस्तकें (Books Currently Published)

(iii) अद्यतन संदर्भ पुस्तकें (Up-to-date Reference Books)

(iv) ग्रन्थमाला (Series)

(v) नवीनतम प्रकाशित पत्रिकाएँ (Currently Published Periodicals)

(vi) शासकीय प्रकाशन/प्रलेख (Government Publications/Documents)

(vii) शोध प्रबन्ध (Theses)

(viii) मानचित्र (Maps)

(ix) माइक्रोफॉर्म्स (Microforms)

(x) श्रव्य-दृश्य सामग्री (Audio-visual Aids)

उपर्युक्त के अतिरिक्त पाण्डुलिपियाँ, पंच कार्डस, माइक्रोफिल्म, प्रक्षेप्य सामग्री (Projected material), रेखा चित्रात्मक साधन (Graphs), मानक, विशिष्ट, पेटेन्ट्स, ट्रेड साहित्य, फोटोग्राफ्स, कम्प्यूटर टेप्स आदि प्रकार की सूचना सामग्री का वित्तीय संसाधनों और उपयोगकर्ताओं की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए अपने संग्रह का विकास पुस्तकालय के उद्देश्य की पूर्ति हेतु करना चाहिए। पुस्तकालय के प्रकार और उसके उद्देश्यों को दृष्टिगत रखते हुए जिन और जिस स्तर के प्रलेखों की आवश्यकता है उन्हीं को महाविद्यालय अथवा विश्वविद्यालय पुस्तकालय संग्रह में सम्मिलित किया जाना चाहिए।

वर्तमान समय में शोध का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो रहा है अतः उसके अनुरूप विश्वविद्यालय पुस्तकालय को विकसित करना आवश्यक है। इसके लिए आवश्यक है कि विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के संग्रह का मूल्यांकन करना चाहिए जिससे वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप उसे विकसित किया जासके। आज संख्यात्मक संग्रह की अपेक्षा गुणात्मक संग्रह की आवश्यकता है। उपयुक्त, प्रभावी और संतुलित संग्रह का होना अनिवार्य है, जो प्रत्येक उपयोगकर्ता की वर्तमान आवश्यकताओं के साथ-साथ भविष्य की आवश्यकताओं की भी पूर्ति कर सके।

प्रश्न—विश्वविद्यालय पुस्तकालय के लिए पुस्तकों का चयन करते समय आप किन बातों का ध्यान रखेंगे ? इसमें आने वाली कठिनाइयों का वर्णन कीजिए।

What factors you will keep in mind while selecting books for a university library ? Discuss the problems connected with this task.

अथवा (Or)

किसी महाविद्यालय पुस्तकालय में पुस्तक चयन के सिद्धान्तों एवं विधियों की विवेचना करते हुए उनके चयन के विभिन्न उपकरणों का उल्लेख कीजिए।

Discuss the procedure and principles of book selection for a college library and also describe various tools of book selection.

अथवा (Or)

शैक्षणिक पुस्तकालय में पठन सामग्रियों के चयन में आने वाली समस्याओं की चर्चा करें।

Discuss the problems in selecting reading materials for a academic library.

अथवा (Or)

पुस्तकालय में अ-पुस्तकालय सामग्री से आप क्या समझते हैं ? अपुस्तकालय सामग्री के चयन में कौन-सी कठिनाइयाँ आती हैं ? संक्षेप में चर्चा करें।

What do you mean by non-book material in library ? What are the problems relating selection of non-book material ? Discuss in brief.

अथवा (Or)

किसी शैक्षणिक पुस्तकालय में संग्रहित पठन सामग्रियों के प्रकारों की परिगणना करें। इनके चयन के लिए मानदण्डों की चर्चा करें।

Enumerate the type of materials in an academic library. Discuss the criteria for selection of such materials.

अथवा (Or)

"श्रेष्ठ पुस्तकें अधिक से अधिक पाठकों के लिए न्यूनतम मूल्य पर।" विश्वविद्यालय पुस्तकालय के पुस्तक चयन के संदर्भ में इस कथन की व्याख्या कीजिए।

"Best books for the largest number at the least cost." Discuss this statement in the context of book selection in university library.

अथवा (Or)

पुस्तक चयन के सिद्धान्तों, उद्देश्यों, महत्व और आवश्यकता की विवेचना कीजिए।

Discuss the principles, objectives, importance and need of book selection.

अथवा (Or)

पुस्तक चयन के कौन-कौन से सिद्धान्त हैं ? शैक्षणिक पुस्तकालय के लिए पुस्तकों का चयन करते समय कौन-कौन सी बातों को आप ध्यान से रखेंगे ? समझाइए।

What are the principles of book selection ? What factors you will keep in mind while selecting books for academic library ? Explain.

उत्तर—पुस्तक अथवा प्रलेख चयन एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। इसमें तीन कारक—माँग (Demand), पूर्ति (Supply) और वित्त (Finance) प्रमुख रूप से सम्मिलित रहते हैं। अतः पुस्तक अथवा प्रलेख चयन की योजना बनाते समय इन समस्त कारक पक्षों को ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। इसमें माँग प्रमुख कारक है अतः माँग का पता लगाने और उसे निश्चित करने के लिए कोई प्रणाली विकसित की जानी चाहिए। माँग के अन्तर्गत पाठकों द्वारा व्यक्त और अव्यक्त दोनों ही प्रकार की माँगे सम्मिलित होती हैं। साथ ही साथ पाठकों की वास्तविक और सम्भावित माँग को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। माँग को सुनिश्चित करने हेतु निम्नलिखित स्रोतों को उपयोग में लाया जा सकता है—

- पुस्तकालय से आदान-प्रदान किए गए प्रलेखों एवं पुस्तकालय में अध्ययन हेतु उपयोग किए गए प्रलेखों की सांख्यिकी,
- पुस्तकालय परिसंचरण विभाग एवं संदर्भ तथा सूचना सेवा विभाग में कार्यरत कर्मचारियों के सुझाव,
- उपयोगकर्ताओं—छात्रों, शोध छात्रों और शिक्षकों के सुझाव,
- विभिन्न विषयों से सम्बन्धित विशेषज्ञों और विद्वानों के सुझाव,
- पाठकों की आवश्यकता के सम्बन्ध में सर्वेक्षण और उसके परिणामों द्वारा,
- अध्ययन से सम्बन्धित पाठ्यक्रम (Syllabi) और शोध छात्रों की प्रोफाइल द्वारा।

उपर्युक्त स्रोतों के माध्यम से माँग का निर्धारण कर प्रलेखों का चयन उनकी उपयोगिता और महत्व के अधार पर किया जाना चाहिए।

एक महाविद्यालय और विशेष रूप से विश्वविद्यालय पुस्तकालय के संग्रह हेतु मात्र पुस्तकों और पत्रिकाओं का चयन ही पर्याप्त नहीं होता अपितु इनके अतिरिक्त अन्य विभिन्न प्रकार की मुद्रित सामग्री, जैसे—पैम्फलेट्स, मानचित्र आदि तथा अमुद्रित सामग्री (Non-print media), जैसे—माइक्रोफिल्म्स, माइक्रोफार्म, टेप्स (Tapes), ओडियो कैसेट्स, वीडियो कैसिट्स, सीडी, फ्लॉपी आदि का भी आवश्यकतानुसार चयन किया जाना चाहिए।

प्रलेख चयन के सिद्धान्त

(Principle of Document Selection)

महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालयों में प्रलेख चयन का कार्य स्नातक, परास्नातक, एवं शोध छात्रों तथा शिक्षकों के उपयोग के लिए किया जाता है। अतः प्रलेखों का चयन करते समय उनकी विशेषताओं, पाठकों की माँग, आवश्यकता और अभिरुचियों को ध्यान में रखना अति आवश्यक है। अतः प्रलेख चयन का कार्य एक कला है और इसके कुछ उद्देश्य एवं सिद्धान्त होते हैं। जब से पुस्तकालय एक सेवाप्रदायक संस्था के रूप में विकसित हुई है तभी से प्रलेख चयन की नीति भी निर्धारित कर ली गई थी। जिसका कारण था कि—प्रत्येक प्रलेख पुस्तकालय के लिए उपयोगी नहीं होता, यदि कोई प्रलेख कुछ समय के लिए उपयोगी है और कुछ समय पश्चात् उसकी माँग नहीं रहेगी साथ ही मूल्य भी अधिक है उस स्थिति में उसका चयन उचित नहीं होगा। अतः ऐसे प्रलेखों का चयन ही उस समय किया जाता था जो पाठकों की माँग और आवश्यकता को संतुष्ट करें जिससे पुस्तकालय का उद्देश्य भी पूरा हो सके। इस प्रकार की नीति को हम प्रलेख चयन के पारम्परिक सिद्धान्त कह सकते हैं।

प्रलेख चयन के सामान्य सिद्धान्त

(General Principles of Document Selection)

समय-समय पर विभिन्न विद्वानों ने प्रलेख चयन हेतु सामान्य सिद्धान्त प्रतिपादित किए हैं, जो निम्नलिखित हैं—

1. **ड्रुरी के सिद्धान्त (Drury's Principles)** – प्रलेख चयन हेतु कुछ सामान्य सिद्धान्त ड्रूरी (Drury) द्वारा प्रतिपादित किए गए, जो इस प्रकार हैं—

(1) पुस्तकालय धनराशि का इस प्रकार विभाजन किया जाना चाहिए कि अधिक से अधिक पाठकों के लिए उच्च स्तरीय गुणात्मक प्रलेख क्रय किए जा सकें।

(2) ऐसे प्रलेखों का चयन किया जाना चाहिए जिनकी पुस्तकालय के लिए अधिक उपयोगिता हो।

(3) प्रलेखों के चयन हेतु पुस्तकालय को एक सुदृढ़ चयन नीति निर्मित करनी चाहिए और उसे तब तक अपनाते रहना चाहिए जब तक कि वह अनुपयोगी सिद्ध न हो।

(4) प्रलेखों के चयन में वास्तविक उपयोगकर्ताओं के साथ-साथ भविष्य में नवीन पाठकों की आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए।

(5) प्रलेखों का उचित मूल्यांकन करने हेतु उपयुक्त मानक बनाने चाहिए।

(6) किसी भी विषय में सर्वोत्तम प्रलेख का ही चयन करें, यदि पाठकों की संख्या अधिक है उस स्थिति में पाठकों की माँग और आवश्यकता का मूल्यांकन करके कम उत्तम प्रकार के प्रलेखों का भी चयन किया जा सकता है।

(7) ऐसे प्रलेखों का अवश्य चयन किया जाना चाहिए जिनकी विषय विशेषज्ञों को आवश्यकता हो।

(8) ऐसे प्रलेखों का भी अवश्य चयन किया जाना चाहिए जो पाठक के मानसिक, शारीरिक और चारित्रिक विकास के लिए महत्वपूर्ण हों।

(9) प्रलेख चयन में सकारात्मक दृष्टिकोण रखे क्योंकि उत्तम प्रलेखों का संग्रह और सेवा ही पुस्तकालय का उद्देश्य है।

(10) उन्हीं प्रलेखों का चयन करें जिनसे पुस्तकालय का उद्देश्य सिद्ध हो, साथ ही प्रलेखों का भौतिक स्वरूप, मुद्रण, अनुक्रम, जिल्दबन्दी, विषय गहनता आदि उपयुक्त हो।

(11) विभिन्न प्रकाशकों की कृतियों तथा उनके विशिष्टीकरण की पूर्ण जानकारी होनी आवश्यक है।

(12) स्थानीय, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर प्रलेख चयन संसाधनों को विकसित कर परस्पर सहयोग के आधार पर चयन करें।

(13) उन प्रलेखों की अनावश्यक प्रतियों का निष्कासन करें जिनकी वर्तमान में तथा भविष्य में पाठकों को आवश्यकता न हो। ऐसे प्रलेखों का विषय विशेषज्ञों से सर्वेक्षण कराना चाहिए।

(14) पुस्तकालय के बजट की सीमितता का ध्यान रखते हुए चयन किया जाना चाहिए।

(15) उचित पाठक को उचित समय पर उसकी माँग का उचित प्रलेख देना ही प्रलेख चयन का उद्देश्य होना चाहिए।

उपर्युक्त सिद्धान्त बिन्दुओं पर ध्यान देते हुए पुस्तकालय के लिए सर्वोत्तम और गुणात्मक अध्ययन सामग्री का चयन किया जाना चाहिए जिससे पुस्तकालय अपने लक्ष्य और उद्देश्य में सफल हो सके।

2. ड्यूवी का सिद्धान्त (Dewey's Principle) – मेलविल ड्यूवी का प्रलेख चयन का सिद्धान्त—"न्यूनतम मूल्य पर अधिकतम पाठकों हेतु सर्वोत्तम प्रलेख" (The best reading for the largest number at the least cost) उपलब्ध कराना है।

उपर्युक्त सिद्धान्त में तीन बिन्दुओं—(i) सर्वोत्तम प्रलेख, (ii) सर्वाधिक पाठक और (iii) न्यूनतम मूल्य पर जोर दिया गया है। मेलविल ड्यूवी का मानना था कि किसी भी पुस्तकालय की महत्ता इस बात में नहीं है कि उसके संग्रह में कितनी मात्रा में प्रलेख हैं बल्कि इस बात में है कि संग्रहित प्रलेखों का पाठकों द्वारा कितना उपयोग किया जाता है। प्रलेखों के द्वारा पाठकों के ज्ञान में वृद्धि और सूचना का सम्प्रेषण ही किसी पुस्तकालय का एक मात्र उद्देश्य है, अतः उपर्युक्त सिद्धान्त को दृष्टिगत रखते हुए ही सर्वोत्तम उपयोगी प्रलेखों का चयन किया जाना चाहिए।

3. मेक कॉल्विन का माँग सिद्धान्त (Mc Colvin's Demand Theory) – मेक कॉल्विन (Mc Colvin) का कथन था कि पुस्तकें केवल कागज के अतिरिक्त स्वयं में कुछ भी नहीं है जब तक कि उपयोगकर्ताओं द्वारा उनकी माँग न हो। अतः प्रलेखों को उपयोग के लिए उपलब्ध करवाना आवश्यक है। पुस्तकालय संग्रह पाठकों की माँग की पूर्ति के अनुसार

होना चाहिए। इस प्रकार इस सिद्धान्त के अनुसार पुस्तकालय को ऐसे प्रलेखों का चयन करना चाहिए जिनकी माँग हो जिससे उनकी उपयोगिता सिद्ध हो सके। साथ ही यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि माँग केवल तत्कालिक न होकर दीर्घकालीन हो। किसी भी पुस्तकालय को पाठकों की माँग के अनुरूप एक संतुलित संग्रह का विकास करना चाहिए।

4. रंगनाथन का सिद्धान्त (Ranganathan's Principle) – रंगनाथन की कृति 'Library Book Selection', द्वितीय संस्करण (पुनर्मुद्रण, 1989) पुस्तक चयन के परम्परागत सिद्धान्तों से सम्बन्धित एक विस्तृत रचना है। रंगनाथन ने पुस्तक चयन हेतु निम्नलिखित बातों का सुझाव दिया है—

(1) पुस्तकालय के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए पुस्तकों का चयन उनके मूल्यांकन के आधार पर किया जाना चाहिए।

(2) पाठकों की वास्तविक और संभावित माँग और आवश्यकता को ध्यान में रखकर चयन किया जाना चाहिए।

(3) पुस्तक चयन का कार्य पुस्तकालयाध्यक्ष और विषय से सम्बन्धित शिक्षकों का संयुक्त उत्तरदायित्व है।

(4) पुस्तक चयन कार्य एक बौद्धिक कार्य है अतः इस कार्य को हल्के रूप में और शीघ्रता में न करें, किसी भी पुस्तक को केवल देखकर ही अस्वीकार न करें क्योंकि शीघ्रता में चयन करने से उपयोगी और महत्वपूर्ण पुस्तक भी अस्वीकृत हो सकती है।

(5) प्रतिष्ठित प्रकाशकों की पुस्तकों का चयन करना चाहिए और चयन के लिए समय पूर्व निर्धारित कर देना चाहिए जिससे शिक्षकों एवं अन्य चयनकर्ताओं का समय नष्ट न हो।

डॉ. रंगनाथन द्वारा प्रतिपादित 'पुस्तकालय विज्ञान के पाँच सूत्रों में से प्रथम तीन सूत्र पुस्तक चयन हेतु आदर्श प्रस्तुत करते हैं। प्रथम सूत्र—"पुस्तकें/प्रलेख उपयोग के लिए हैं" के अनुसार केवल ऐसे ग्रन्थों/प्रलेखों का ही चयन किया जाना चाहिए जो उपयोगी हों। दूसरा सूत्र—"प्रत्येक पाठक को उसकी पुस्तक मिलें" यह अवगत कराता है कि पाठकों की रुचि, उसकी माँग और आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए चयन किया जाना चाहिए। तृतीय सूत्र—"प्रत्येक पुस्तक और उसका पाठक" यह आदर्श प्रस्तुत करता है कि चयन पूर्णतः पाठक की आवश्यकता और पुस्तक के महत्व को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए जिससे प्रत्येक पुस्तक का उपयोग निश्चित किया जा सके।

इस प्रकार विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रतिपादित पुस्तक/प्रलेख चयन के सिद्धान्तों के अध्ययन के पश्चात् हम इन निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि चयन प्रक्रिया को उपयोगी बनाने के लिए प्रत्येक पुस्तकालय द्वारा एक श्रेष्ठ पुस्तक/प्रलेख चयन नीति अपनानी चाहिए। पुस्तक चयन का लक्ष्य अधिकतम पाठकों को न्यूनतम मूल्य पर सर्वोत्तम अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराना होना चाहिए। इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु महत्वपूर्ण, उत्कृष्ठ, सर्वोपयोगी और पाठकों की माँग और आवश्यकता के अनुसार प्रलेखों का चयन किया जाना चाहिए।

5. प्रलेख चयन का उद्देश्य (Aims of Document Selection) – प्रलेख चयन का मुख्य उद्देश्य उपयुक्त पाठक को उपयुक्त समय पर उसकी माँग और आवश्यकता के अनुरूप

के अन्तर्गत ही विदेशी पुस्तकों एवं पत्रिकाओं में क्रय हेतु विशेष सतर्कता रखते हेतु केवल महत्वपूर्ण पुस्तकों एवं पत्रिकाओं को क्रय किया जाना चाहिए।

उपहार अथवा दान द्वारा (Gift or Donation) – कई व्यक्तिगत संस्थाएँ, संगठन अथवा व्यक्ति अपने संग्रह को समुचित उपयोग हेतु दान स्वरूप प्रदान करते हैं, कभी-कभी पुस्तकालय भी विशेष प्रकार के संकलन, जैसे—पाण्डुलिपियों, पत्र-पत्रिकाओं आदि को उपहार स्वरूप प्राप्त करने हेतु सम्बन्धित संस्थाओं अथवा व्यक्तियों से निवेदन करते हैं जिससे पुस्तकालय में एक विशिष्ट संग्रह का विकास हो सके। किसी विशेष अवसर पर किसी महान व्यक्ति का व्यक्तिगत संग्रह पुस्तकालय को उपलब्ध कराया जाता है जिसे पुस्तकालय को अलग से विशिष्ट संग्रह के रूप में व्यवस्थित करना होता है।

पुस्तकालय को इस प्रकार प्राप्त पुस्तकों अथवा प्रलेखों का मूल्यांकन करना चाहिए। यदि वे पाठकों के लिए उपयोगी हैं, तो उसे सहर्ष स्वीकार कर लेना चाहिए और यदि पाठकों के लिए अनुपयोगी है तथा केवल पुस्तकालय में स्थान घेरने के लिए ही है, तब इस प्रकार के संग्रह को स्वीकार नहीं करना चाहिए।

विनिमय द्वारा (Exchange) – विनिमय भी पुस्तक अर्जन का एक महत्वपूर्ण माध्यम है। इसके अन्तर्गत पुस्तकालय अथवा उसका पैतृक संगठन अपना कोई प्रकाशन करता है और वह अन्य संगठनों अथवा संस्थाओं को उसे भेजता है उसके विनिमय में वे संस्थाएँ अपने-अपने प्रकाशन उस पुस्तकालय को भेजते हैं। इस प्रकार विनिमय के माध्यम से अनेक संस्थाओं अथवा संगठनों के महत्वपूर्ण प्रकाशन पुस्तकालय में प्राप्त किए जा सकते हैं। शोध पुस्तकालय, विश्वविद्यालय एवं अन्य उच्च अध्ययन के संस्थान इस प्रकार से अध्ययन सामग्री प्राप्त करने को प्रमुखता देते हैं। वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित रिपोर्ट, शोध आलेख, प्रोजेक्ट रिपोर्टस आदि का प्रकाशन सीमित संख्या में पंजीकृत सदस्यों की संख्या के आधार पर ही किया जाता है। इस प्रकार की दुर्लभ सामग्री सामान्य वितरण अथवा विक्रय हेतु उपलब्ध नहीं होती। इस प्रकार के प्रलेखों को केवल विनिमय (Exchange) द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। किन्तु यह तभी सम्भव है जब पुस्तकालय का स्वयं का भी प्रकाशन हो जिसे दूसरे पुस्तकालय अथवा संस्था को उपलब्ध कराकर उसका प्रकाशन प्राप्त कर सकता है। अन्यथा इस प्रकार से सामग्री प्राप्त करना सम्भव नहीं है।

फलक संशोधन, प्रलेख प्रत्याहरण एवं संग्रह सत्यापन
(SHELF RECTIFICATION, WEEDING DOCUMENTS AND STOCK VERIFICATION)

प्रश्न—किसी शैक्षणिक पुस्तकालय के संग्रह विकास में फलक संशोधन तथा भंडार सत्यापन किस प्रकार सहायक है ? चर्चा करें।

Discuss how shelf rectification and stock verification help in collection development in an academic library.

अथवा (Or)

पुस्तकालय में प्रत्याहरण नीति से आप क्या समझते हैं ? इससे सम्बन्धित विभिन्न मुद्दों की चर्चा करें।

What is meant by weeding out policy of a library ? Discuss the issues involved in it.

अथवा (Or)

किसी शैक्षणिक पुस्तकालय की प्रत्याहरण नीति से आप क्या समझते हैं। पुस्तकालयी को प्रलेख प्रत्याहरण को निरूत्साहित करने वाले विभिन्न कारणों की चर्चा करें।

What do you understand by the weeding out policy in an academic library ? Discuss the various factors which discourage the librarian to need out the documents.

अथवा (Or)

शैक्षणिक पुस्तकालयों के भौतिक सत्यापन में आने वाली समस्याओं पर टिप्पणी लिखिए।

Write a note on problems in physical verification of academic library.

अथवा (Or)

संग्रह सत्याहन की विधियों एवं उपयोगिता की विवेचना कीजिए।

Discuss the methods and utility of stock verification.

अथवा (Or)

संग्रह सत्यापन के गुण एवं दोषों की विवेचना कीजिए।

Discuss the merits and demerits of stock verification.

उत्तर— ऐसे पुस्तकालयों में जहाँ मुक्त प्रवेश प्रणाली (Open Access System) को महत्व दिया जाता है वहाँ पाठकों को पुस्तक संग्रह कक्ष (Stack) में प्रवेश की पूर्ण स्वतन्त्रता रहती है और वे बिना किसी बाधा के पाठ्य सामग्री का अवलोकन, चयन और अपनी आवश्यकता का प्रलेख प्राप्त कर सकते हैं। किन्तु इस प्रकार की व्यवस्था के अन्तर्गत पाठकों द्वारा पुस्तकों को फलक से निकालकर उनका अवलोकन कर उनके निश्चित स्थान से इधर-उधर रख दिया जाता है, कभी-कभी स्वार्थी उपयोगकर्ता स्वयं अपने हित के लिए पाठ्य सामग्री को इधर-उधर छिपा देते हैं, जिंससे दूसरे पाठक उसका उपयोग न कर सकें। पाठ्यक्रम सामग्री का व्यवस्थापन तितर-बितर हो जाने पर पाठक द्वारा अपनी वांछित पुस्तक या अन्य प्रलेख खोजने में पर्याप्त समय लगता है या उसका समय नष्ट होता है और फिर भी वांछित प्रलेख प्राप्त नहीं हो पाता। कभी-कभी पुस्तकालय कर्मचारी भी अपने उत्तरदायित्व का समुचित निर्वाह न करते हुए पाठ्य सामग्री को व्यवस्थित क्रम में न लगाकर गलत क्रम में लगा देते हैं। यदि पुस्तकें एवं अन्य प्रलेख उचित सहायक क्रम में वर्गांक के अनुसार व्यवस्थित किए जायेंगे तब उनका उपयोग अधिकांश पाठकों द्वारा बिना किसी कठिनाई या रुकावट के सम्भव हो सकता है।

पुस्तकों एवं अन्य प्रलेखों के फलकों पर उचित क्रम में व्यवस्थापन के परीक्षण को 'फलक व्यवस्थापन' (Shelf tidying), 'फलक जाँच' (Shelf checking) और 'फलक पठन' (Shelf reading) कहा जाता है। डॉ. रंगनाथन ने पुस्तकों एवं अन्य प्रलेखों को पूर्व व्यवस्थित स्थिति में व्यवस्थित करने की प्रक्रिया के लिए 'फलन संशोधन' (Shelf Rectification) पद का प्रतिपादन किया है।

फलक संशोधन (Shelf Rectification) प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रत्येक फलक (Shelve) का सुनियोजित ढंग से परीक्षण किया जाता है और जो पुस्तकें अपने अनुकूल क्रम

से इधर-उधर फलकों में गलत स्थानों पर पाई जाती हैं उन्हें पुनः उनके पूर्व स्थान पर अनुकूल क्रम में व्यवस्थित किया जाता है।

फलक संशोधन प्रक्रिया (Shelf Rectification Process) के निम्नलिखित लाभ हैं—

(1) पुस्तकालय संग्रह कक्ष (Stack) में इधर उधर बिखरी पुस्तकें/प्रलेख अपने नियत स्थान पर व्यवस्थित कर दिए जाते हैं।

(2) संग्रह कक्ष के फलकों की सफाई और व्यवस्था चुस्त एवं दुरस्त हो जाती है।

(3) समस्त पुस्तकें अपने अनूकूल क्रम में पुनः व्यवस्थित हो जाती हैं।

(4) व्यवस्थित फलकों से पुस्तकों को प्राप्त करने में पाठकों को सहायता मिलती है।

(5) पाठकों के समय की बचत होती है।

(6) जिन पुस्तकों/प्रलेखों को तत्काल जिल्दबन्दी, मरम्मत और प्रत्याहरण करने की आवश्यकता होती है, उनके बारे में पुस्तकालय कर्मचारियों को जानकारी मिल जाती है।

(7) पुस्तकालय संग्रह में होने वाले अंतराल के सम्बन्ध में सुस्पष्ट जानकारी प्राप्त हो जाती है।

प्रलेख प्रत्याहरण

(Weeding Documents)

प्रलेख अथवा पुस्तकों के प्रत्याहरण से तात्पर्य ऐंसी पाठ्य-सामग्री के निष्कासन अथवा हटाने से है जो पाठकों के लिए उपयोगी नहीं है। पुरानी, अप्रचलित और जीर्ण-शीर्ण पुस्तकों को फलकों से हटाने की प्रक्रिया को ही प्रलेख-प्रत्याहरण कहते हैं। ऐसे प्रलेखों का विवरण प्रत्याहरण पंजी (Weeding Register) में अंकित कर दिया जाता है। प्रत्याहरण पंजी में इन शीर्षकों का होना आवश्यक है—(1) तिथि, (2) क्रम संख्या, (3) परिग्रहण संख्या, (4) पुस्तक की आख्या, (5) लेखक, (6) मूल्य, (7) प्रकाशक, (8) प्रत्याहरण का कारण, (9) अन्य विवरण।

समस्त प्रत्याहरित प्रलेखों को पुस्तकालय में किसी एक निश्चित स्थान पर रख दिया जाता है, अथवा किसी अन्य पुस्तकालय को दान स्वरूप दे दिया जाता है, जहाँ इनका उपयोग किया जा सके।

शैक्षणिक पुस्तकालय के अन्तर्गत प्रलेख-प्रत्याहरण से सम्बन्धित नीति का होना आवश्यक है। प्रत्याहरण नीति से यह सुनिश्चित हो जाता है कि—(1) किस प्रकार की सामग्री को प्रत्याहरित किया जाना है ? (2) कब किया जाना है ? (3) इस कार्य हेतु कौन उत्तरदायी है ? (4) प्रत्याहरण कार्य कैसे किया जाएगा ? और (5) प्रत्याहरित सामग्री की व्यवस्था किस प्रकार की जाएगी ?

प्रलेख-प्रत्याहरण की आवश्यकता

(Need of Weeding documents)

वर्तमान में ज्ञान एवं सूचना के विस्फोट के फलस्वरूप प्रलेखों का प्रकाशन वृहत संख्या में हो रहा है। प्रत्येक क्षेत्र में नवीन-नवीन विषयों का प्रादुर्भाव हो रहा है। पुराने विचार और विषय अप्रचलित होते जा रहे हैं। एक आधुनिक पुस्तकालय के समक्ष नवीन उपयोगी प्रलेखों को क्रय करके व्यवस्थित करने हेतु स्थानाभाव की समस्या आती है। स्थानाभाव के साथ-साथ

बहुत से प्रलेख निरन्तर उपयोग से जीर्ण-शीर्ण हो जाते हैं। कुछ प्रलेख समयानुसार अनुपयोगी हो जाते हैं। कुछ प्रलेखों की विषय-वस्तु अप्रचलित हो जाती है और कुछ प्रलेखों के नवीन विषय-वस्तु के साथ संशोधित संस्करण प्रकाशित होते रहते हैं। आधुनिक समय में मुद्रित प्रलेखों को अन्य अमुद्रित माध्यमों, यथा—माइक्रोफॉर्म, कम्प्यूटर टेप्स (Computer Tapes) और डिस्क आदि में रूपान्तरण भी किया जा रहा है। अतः जिन प्रलेखों का स्थानान्तरण उक्त अमुद्रित माध्यमों में पुस्तकालय द्वारा करा लिया जाता है उन प्रलेखों का भी प्रत्याहरण किया जा सकता है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) की पुस्तकालय समिति ने प्रलेख-प्रत्याहरण की आवश्यकता के सम्बन्ध में अपनी संस्तुति में कहा है कि—"अधिकांशत प्रलेखों का बीस-पच्चीस वर्षों के अन्तराल में महत्व समाप्त हो जाता है। समयानुसार उनकी विषय-वस्तु में परिवर्तन आ जाता है। अप्रचलित और अनुपयोगी प्रलेखों को संग्रहित करने से किसी भी पुस्तकालय का उद्देश्य पूर्ण नहीं होता और ऐसे प्रलेख व्यर्थ में पुस्तकालय में स्थान घेरते हैं। अतः नियमित रूप से एक निश्चित अन्तराल के पश्चात् प्रलेख-प्रतयाहरण का कार्य किया जाना चाहिए जिससे नवीन आने वाले प्रलेखों को स्थान मिल सके।"

इस प्रकार अनुपयोगी प्रलेखों/पुस्तकों को अल्मारियों से हटाकर उस स्थान पर नवीनतम उपयोगी प्रलेखों को सुसंगतरूप से व्यवस्थित करने की दृष्टि से प्रत्याहरण कार्य आवश्यक है। प्रलेख-प्रत्याहरण की आवश्यता के कुछ अन्य पक्ष निम्नलिखित हैं—

(1) उपयुक्त संग्रह नीति के अभाव में कभी-कभी असावधानी से ऐसे प्रलेख क्रय कर लिए जाते हैं, जिनसे लाभ के बजाय हानि की सम्भावना अधिक रहती है। अतः ऐसे प्रलेखों को प्रत्याहरित करना आवश्यक है।

(2) पुस्तकों के परिमार्जित, परिवर्धित एवं संशोधित संस्करण प्रकाशित होते रहते हैं। पुराने संस्करणों से विषय की अद्यतन (Up-to-date) जानकारी नहीं मिल सकती। अतः नवीनतम संस्करणों का क्रय और पुराने संस्करणों की प्रतियों का निष्कासन अनिवार्य है।

(3) पुस्तकालय विज्ञान के पंचम सूत्र 'पुस्तकालय एक वर्द्धनशील संस्था है' इस सूत्र के आधार पर पुस्तकालय में पाठ्य-सामग्री की संख्या में निरन्तर वृद्धि स्वाभाविक है। इस दृष्टिकोण से पुस्तकालय भवन के संग्रह कक्ष (Stack) में स्थानाभाव की समस्या से बचने के लिए प्रलेख-प्रत्याहरण आवश्यक है।

(4) अल्मारियों में अनुपयोगी, अनावश्यक और फटी-पुरानी पुस्तकों को संग्रहित करना और उनके सुरक्षात्मक उपायों पर व्यर्थ धन का अपव्यय करने की अपेक्षा ऐसी पुस्तकों का प्रत्याहरण किया जाना आवश्यक है।

(5) पुस्तक चयन का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है—"संतुलन बनाए रखना"। अनुपयोगी और अनावश्यक पुस्तकों का प्रत्याहरण नहीं होने से यह संतुलन बिगड़ जाता है। अतः प्रलेख-प्रत्याहरण आवश्यक है।

(6) सामयिक पुस्तकों की माँग बढ़ने पर उनकी कई-कई प्रतियाँ क्रय कर ली जाती हैं। एक समय पर ऐसी पुस्तकों का उपयोग होना कम हो जाता है और उपयोगहीन हो जाती हैं। ऐसी पुस्तकों की एक या दो प्रतियाँ छोड़कर अतिरिक्त प्रतियाँ हटा दी जानी चाहिए।

(7) सरकार द्वारा प्रतिबन्धित साहित्य का प्रत्याहरण आवश्यक है।

(8) पाठ्य-पुस्तकों तथा अस्थायी महत्व के प्रलेखों/पुस्तकों का प्रत्याहरण प्रत्येक पाँच वर्षों के बाद किया जाना आवश्यक है।

(9) अधिक उपयोग के कारण फटी हुई पुस्तकों जिनकी मरम्मत संभव न हो, प्रत्याहरण किया जाना आवश्यक है।

(10) संदर्भ ग्रन्थ जिनकी उपयोगिता सामयिक हो और वे अद्यतन न हों तथा जिनके नए संस्करण उपलब्ध हों, उनका प्रत्याहरण प्रति पाँच अथवा दस वर्ष के पश्चात् परिस्थितियों के अनुसार किया जा सकता है।

कुछ पुस्तकालयाध्यक्षों की धारणा है कि अनेक प्रलेख एवं पुस्तकें जितनी पुरानी होती है, उतनी ही दुर्लभ, उपयोगी और मूल्यवान होती हैं। ऐसी पुस्तकें शोधकर्ताओं के लिए ज्यादा लाभकारी प्रमाणित होती हैं। नई पुस्तकें तो पुस्तक विक्रेताओं के पास उपलब्ध हो जाती हैं, किन्तु पुरानी पुस्तकें कठिनाई से मिल पाती हैं अथवा नहीं ही मिलती। अतः प्रलेखों/पुस्तकों का प्रत्याहरण नहीं होना चाहिए।

निरूत्साहित करने वाले कारक (Discouraging Factors) – यद्यपि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की पुस्तकालय समिति ने संस्तुति की है कि अनुपयोगी और अप्रचलित प्रलेखों का प्रत्याहरण कर पुस्तकालय संग्रह से उन्हें परित्यक्त (Discard) कर देना चाहिए। किन्तु देखने में यह आया है कि अधिकांशतः पुस्तकालयाध्यक्ष प्रत्याहरण प्रक्रिया को व्यावहारिक रूप से अपनाने में संकोच करते हैं। पुस्तकालयाध्यक्षों द्वारा प्रत्याहरण प्रक्रिया को क्रियान्वित न करने, इस कार्य के प्रति उदासीन रहने और उन्हें निरूत्साहित करने वाले अग्रलिखित कारण हैं—

प्रलेखों/पुस्तकों की अधिक संख्या को महत्व देना—आज भी यह माना जाता है कि पुस्तकालय संग्रह में जितनी अधिक संख्या में पुस्तकें एवं अन्य पाठ्य सामग्री होगी वह पुस्तकालय उतना ही महत्वपूर्ण माना जाएगा। आधुनिक पुस्तकालयाध्यक्ष इस बात का अनुभव करते हैं कि पुस्तकालय में अध्ययन सामग्री की अधिक संख्या की अपेक्षा पुस्तकालय द्वारा पाठकों को उपलब्ध कराई जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता अधिक महत्वपूर्ण होती है। फिर भी अपनी परम्परागत विचारधारा को पुस्तकालयाध्यक्ष नहीं छोड़ पाते और वे अनुपयोगी तथा अप्रचलित पुस्तकों को परित्यक्त करने में संकोच करते हैं। इसके पीछे यह भी कारण है कि उन्हें प्रत्येक वर्ष पुस्तकालय प्रतिवेदन प्रस्तुत करने हेतु पुस्तकों की संख्या को अधिक महत्व देना पड़ता है। अतः वे इस प्रक्रिया के प्रति उदासीन रहते हैं।

संग्रह सत्यापन : विधियाँ तथा उपयोगिता
(Stock Verification : Methods and Utility)

संग्रह सत्यापन (Stock Verification) का तात्पर्य प्रत्येक प्रकार की उन वस्तुओं का वास्तविक सत्यापन अथवा जाँच (Physical Checking) करना है जिनका उल्लेख आवश्यक अभिलेखों में किया गया है। संग्रह सत्यापन अथवा जाँच की परम्परा प्रायः सभी राजकीय विभागों, संस्थाओं तथा औद्योगिक संगठनों में प्रचलित है जिसके आधार पर लाभ और हानि का मूल्यांकन किया जाता है।

किसी शैक्षणिक पुस्तकालय की सम्पदा उसकी पाठ्य-सामग्रियाँ—पुस्तकें, पत्र-पत्रिकाएँ (Periodicals or Journals) तथा अन्य ज्ञान सामग्रियाँ जो अपुस्तकीय श्रेणी में आती हैं,

होती हैं। इनका संग्रह पाठकों के उपयोग हेतु किया जाता है। यह स्वाभाविक है कि उपयोक्ताओं को जिन वस्तुओं का प्रयोग करने के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता है उन वस्तुओं का क्षीण होना, नष्ट होना तथा लुप्त हो जाना असम्भव नहीं है। पुस्तकालयों में पाठ्य-सामग्रियों का प्रयोग करने के लिए पाठकों को पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। मुक्त प्रवेश (Open access) की व्यवस्था की सुविधा उपलब्ध होने के कारण पाठकों को पुस्तकालय के किसी भाग में जाकर पाठ्य-सामग्रियों का अवलोकन करने तथा उनका चयन करने की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है। पर्याप्त पाठक नित्य-प्रति पुस्तकों को लेने-लौटाने आते हैं। पुस्तकालय के अनेक विभागों—जैसे अध्ययनकक्ष (Reading room), पत्र-पत्रिका विभाग (Periodical section) एवं संदर्भ विभाग में पुस्तकों का प्रयोग करते हैं। परिणामतः यह पाठ्य-सामग्रियों की क्षति तथा उनका गायब होना, सतर्कता बर्तने पर भी, कोई आश्चर्य की बात नहीं है। कुछ अवांछनीय पाठक जान-बूझ कर पाठ्य सामग्रियों को गायब कर देते हैं और पन्नों आदि को भी काट लेते हैं। अतः पुस्तकालयों को इस प्रकार की हानियों से पूर्णतः मुक्त रखना सरल कार्य नहीं है। परन्तु ऐसा समझकर पुस्तकालयों की सेवा पर प्रतिबन्ध लगाना तथा पाठकों की निष्ठा पर सन्देह करना आजकल उतना श्रेयस्कर नहीं माना जाता है। भौतिक विज्ञान के क्वान्टम मेकेनिक्स (Quantum Mechanics) का यह नियम है कि जब किसी शक्ति (Energy) को किसी दूसरी शक्ति में स्थानान्तरित किया जाता है तो इस प्रक्रिया में कुछ शक्ति नष्ट हो जाती है। ठीक इसी प्रकार पुस्तकालयों के प्रति भी लोगों की यही धारणा होनी चाहिए। पुस्तकालय में संग्रहित पाठ्य-सामग्रियाँ प्रयोग के लिए हैं और उनके उपयोग किए जाने की प्रक्रिया में कुछ क्षति और पुस्तकों का गायब होना स्वाभाविक है। यद्यपि कुछ लोग ऐसा मानते हैं कि पुस्तकालय से पुस्तकें चोरी नहीं जानी चाहिए, उनके पन्ने नहीं फटने चाहिए। परन्तु यह सम्भव नहीं है। जहाँ अगम्य व्यवस्था (closed system) होता है, पुस्तकें आलमारियों में बन्द रहती हैं, पाठकों को अन्दर जाने पर रोक होती है, वहाँ भी पुस्तकें गायब होती हैं, पुस्तकें अनेक कारणों से क्षतिग्रस्त होती हैं। पुस्तकालय में संग्रहित पाठ्य सामग्री के भौतिक सत्यापन द्वारा संकलन की वास्तविक स्थिति की जानकारी हो जाती है। यदि पुस्तकों का गायब होना नगण्य है, तो यह शोचनीय नहीं है। परन्तु पुस्तकें इतनी संख्या में गायब हो रही हैं कि संग्रह को पूर्ण क्षति होने की आशंका है तो समुचित कदम अवश्य उठाना चाहिए जिससे पुस्तकालय को इस क्षति से बचाया जा सके। पाश्चात्य देशों में जहाँ पाठक अधिक प्रबुद्ध एवं उच्च नैतिक मानसिक विचारधारा के होते हैं वहाँ संग्रह सत्यापन को महत्व नहीं दिया जाता क्योंकि क्षति उतनी नहीं होती जितना कि व्यय संग्रह सत्यापन कार्य के लिए होता है।

पुस्तकालय में पुस्तकों एवं अन्य प्रलेखों को क्षति पहुँचाने अथवा उन्हें चोरी करने आदि में ऐसे पाठकों का हाथ होता है जो कुत्सित मनोवृत्ति के होते हैं।

निम्न प्रकार की मनोवृत्ति पाठकों में पायी जाती हैं—

(1) कुछ ऐसे सभ्य पाठक भी होते हैं जिन्हें पुस्तकों की चोरी करने के लिए पर्याप्त सुविधा, सुअवसर तथा स्थिति प्राप्त होने पर भी कीमती से कीमती तथा आवश्यक एवं मनमोहक पुस्तकों की चोरी किसी भी स्थिति में नहीं करेंगे।

(2) कुछ ऐसे पाठक होते हैं जो पुस्तकों को गायब करने में बड़े ही कलाकार होते हैं, वे असुविधा की स्थिति में, अवसर न मिलने पर भी, पर्याप्त सतर्कता की स्थिति में भी पुस्तकों की चोरी करने में नहीं चूकेंगे। वे निरन्तर ऐसा अवसर ढूँढ़ते हैं। इनके द्वारा पुस्तकालय को

काफी क्षति पहुँचती है। ऐसे लोगों में कुछ विद्वान, प्रबुद्ध, तीव्र बुद्धियुक्त और अध्ययनशील लोग भी सम्मिलित होते हैं।

(3) कुछ पाठक ऐसे होते हैं जिनकी मनोवृत्ति चोरी करने की नहीं होती है परन्तु अवसर पाने पर चोरी करने की उनके मन में भावना जागृत हो जाती है।

(4) पुस्तकों की अलभ्यता तथा उपयोग का अवसर न मिलने के कारण भी कुछ पाठक चोरी करने के लिए तत्पर हो जाते हैं।

(5) कुछ पाठकों में एक मानसिक रोग होता है जिसे बिब्लियोमनिया (Bibliomania) कहते हैं। ऐसे लोगों को पुस्तक चुराने का लालच होता है। अवसर मिलने पर ऐसे लोग इस मानसिक रोग से ग्रस्त होने के कारण पुस्तकें चुराते हैं।

इन मानवीय मनोवृत्तियों के कारण पुस्तकें गायब होती हैं जिनका पता करना और रोकथाम की विधि अपनाने के लिए ही संग्रह सत्यापन आवश्यक प्रतीत होता है।

वार्षिक सत्यापन से लाभ

(1) संग्रह का निरीक्षण एवं सत्यापन करने से कितनी पुस्तकें वस्तुतः चोरी चली गयीं हैं उनका विवरण एवं संख्या ज्ञात हो जाती है।

(2) सत्यापन के पश्चात् जिन पुस्तकों की अधिक माँग होती है अथवा जो आवश्यक एवं अधिक उपयोगी होती हैं उनको पुनः क्रय करके सुलभ कर दिया जाता है।

(3) पुस्तकों के बाहुल्य तथा आकलन की असावधानी के कारण प्रायः पुस्तकें अपने उपयुक्त स्थान से विचलित हो जाती हैं और अनुपयुक्त स्थान पर रख दी जाती हैं। ऐसी पुस्तकों को ढूँढ़ निकालना सरल नहीं होता और पाठक भटकते फिरते हैं। अतः सत्यापन से उन पुस्तकों को उनके उपयुक्त स्थान पर निधानियों में पहुँचा दिया जाता है।

(4) पुस्तकालय स्टाफ को पुस्तकों का पूर्ण ज्ञान सत्यापन करने से हो जाता है अतः पाठकों को संदर्भ सेवा प्रदान करने में सुविधा होती है।

(5) सत्यापन से उन पुस्तकों का सर्वेक्षण करने का अवसर मिल जाता है जो किसी कारणवश नष्ट हो रही हैं अथवा जिनकी जिल्द कमजोर हो गयी है अथवा जिनके पन्ने निकल रहे हैं। अतः उनकी जिल्दसाजी करके पुनः उपयोग के योग्य बनाने में सुविधा होती हैं और उन्हें क्षतिग्रस्त होने से बचाया जा सकता है। कुछ ऐसी पुस्तकें भी इस कार्य के दौरान मिलती हैं जिनका प्रयोग नहीं होता है और अनावश्यक स्थान घेरती हैं और सुरक्षा तथा स्थान की समस्या पैदा करती हैं, उनका प्रत्याहरण करने में आसानी होती हैं।

(6) समय-समय पर सत्यापन एवं परीक्षण करने से पुस्तकों की सफाई भी हो जाती है जिससे पुस्तकों को नष्ट करने वाले कीड़ों तथा धूल की जमावट से क्षति पहुँचने से रोका जा सकता है।

(7) इससे पुस्तकालय प्रबन्धकों को पुस्तकालय की लोकप्रियता का आभास हो जाता है क्योंकि जो पुस्तकें अधिक प्रयोग में आती हैं एवं उपयोगी होती हैं उन्हीं की चोरी अधिक होती है।

(8) इससे यह निश्चित करने का अवसर मिलता है कि पुस्तकों के खोने के लिए कहाँ तक स्टाफ की असावधानी रही अथवा उनकी किन कठिनाइयों के कारण पुस्तकें गायब होती हैं जिससे उसे रोकने के लिए समुचित व्यवस्था की जा सके।

(9) पुस्तकों की क्रामक संख्या की अशुद्धियों तथा लेबलों (Lables) आदि की कमियों को पूरा करने का अवसर मिल जाता है।

दोष (Disadvantages) – सत्यापन से कुछ लाभ हैं वहाँ इससे कुछ असुविधाएँ भी उत्पन्न होती हैं, जो निम्नं हैं—

(1) इससे पुस्तकालय के नियमित सेवा कार्य में रुकावट पैदा होने लगती है। यद्यपि आधुनिक सत्यापन पद्धति के अनुसार सत्यापन के दौरान पाठकों की सेवा में व्यवधान नहीं होना चाहिए। फिर भी कहीं-कही कुछ सेवाओं को स्थगित करना पड़ता है।

(2) अधिक सतर्कता की स्थिति में भी पुस्तकों का पूर्णरूप से गायब होना नहीं रोका जा सकता, अतः सत्यापन करने में स्टाफ का पर्याप्त समय नष्ट होता है। यदि खोई हुई पुस्तकों की कुल कीमत किसी एक साधारण कर्मचारी के वेतन से अधिक नहीं है, तो यह कार्य उतना लाभदायक नहीं है।

(3) पुस्तकों की संख्या जिन पुस्तकालयों में अधिक होती है उनका सत्यापन करना सरल कार्य नहीं होता क्योंकि इस कार्य में अधिक समय तथा स्टाफ की आवश्यकता पड़ती है।

(4) पर्याप्त पुस्तकें पाठकों के पास होती हैं अतः सत्यापन के समय उन्हें वापस मंगवाना पड़ता है। इससे काम और बढ़ता है और पाठकों को असुविधा होती है। परन्तु इनका निर्गम अभिलेख के सत्यापन किया जा सकता है।

(5) अनुपयुक्त स्थान पर रख दी गयी पुस्तकों को उनकी माँग होने पर ढूँढ़ लिया जाता है। अतः इस कार्य में व्यर्थ का समय नष्ट होता है।

(6) सावधानीपूर्वक सत्यापन करने से भी कभी-कभी कुछ पुस्तकें छूट जाती हैं। अतः अनेक खोई हुई पुस्तकों की स्थिति का ज्ञान नहीं हो पाता।

इस कार्य में अधिक समय एवं धनराशि का अपव्यय होने के कारण अमेरिकन, ब्रिटिश तथा अन्य यूरोपीय पुस्तकालयों में संग्रह सत्यापन को महत्व नहीं दिया जाता और यह प्रणाली अब वहाँ खत्म हो गयी है। क्योंकि खोई हुई पुस्तकों को निश्चित करने में उनकी कीमत से अधिक व्यय इस कार्य में करना पड़ता है।

संग्रह सत्यापन की विधियाँ (Methods of Stock Verification)

संग्रह सत्यापन की निम्नलिखित विधियाँ प्रचलित हैं—

1. निर्बन्ध पत्रक पर परिग्रहण संख्या मुद्रित अथवा अंकित विधि (Loose Sheets with Accession Numbers Method),
2. परिग्रहण रजिस्टर विधि (Accession Register Method),
3. शैल्फ पत्रक विधि (Shelf Card Method),
4. पृथक मुद्रित परिग्रहण संख्या रजिस्टर विधि (Separate Register with printed Accession Numbers Method),
5. गणना विधि (Counting Method),
6. निदर्शन विधि (Sampling Method)।

संग्रह के भौतिक सत्यापन के बाद के क्रिया-कलाप—संग्रह सत्यापन के पश्चात निम्नलिखित कार्य किए जाते हैं—

(1) सत्यापन से ज्ञात समस्त खोई गई पुस्तकों की सूची तैयार करना,

(2) खोई हुई पुस्तकों की सूची को पुस्तकालय समिति के समक्ष आवश्यक कार्यवाही हेतु प्रेषित करना,

(3) समिति द्वारा ऐसी पुस्तकों को पुस्तकालय अभिलेखों से हटाने हेतु पुस्तकालय प्राधिकरण को अपनी संस्तुति भेजना,

(4) पुस्तकालय प्राधिकरण/कुलपति/प्रबन्ध समिति/प्राचार्य द्वारा अनुमोदन प्रदान करना,

(5) खोई गई पुस्तकों को पुस्तकालय अभिलेखों से हटाए जाने का अनुमोदन प्राप्त होने पर ऐसी पुस्तकों के समक्ष परिग्रहण रजिस्टर में 'निरस्त किया गया' (Written off) लिख दिया जाता है,

(6) पुस्तकालय सूची से खोई हुई पुस्तकों के पत्रक (Cards) निकाल दिए जाते हैं,

(7) खोई हुई पुस्तकों के लिए एक अलग से पंजिका तैयार की जाती है जिसमें लेखक, पुस्तक का नाम, मूल्य और खोने का वर्ष अंकित किया जाता है।

खोई हुई पुस्तकों के सम्बन्ध में प्रावधान—भारत सरकार द्वारा गठित पुस्तकालय परामर्श समिति (Library Advisory Committee, 1959) के अध्यक्ष डॉ. के. पी. सिन्हा ने खाई हुई पुस्तकों का मूल्य पुस्तकालयाध्यक्ष अथवा अन्य कर्मचारियों से वसूल करने की नीति अथवा कार्य को अनुचित बताया है। डॉ. सिन्हा का कथन है कि जब तक यह औचित्य सिद्ध नहीं हो जाता है कि इस कार्य में पुस्तकालयाध्यक्ष अथवा किसी कर्मचारी का हाथ है अथवा उनके क्रिया-कलाप इस प्रकार के रहे हैं अथवा उनका आचरण संदिग्ध है, तब तक उन्हें किसी प्रकार का दण्ड अथवा आर्थिक दण्ड देना उचित नहीं है। इस समिति की संस्तुति के आधार पर देश के कई महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों ने अपने पुस्तकालयों में प्रति एक हजार पुस्तकों के आदान-प्रदान पर तीन पुस्तकों तक के खो जाने को एक सामान्य क्षति मानकर उन्हें संग्रह से हटाने (Write off) का आदेश पारित कर दिया है। विश्व के सभी उन्नत देशों में पुस्तकालय कर्मचारियों को कभी भी दण्डित किये जाने का प्रावधान नहीं है। भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय ने मॉडल पब्लिक लाइब्रेरी बिल (Model Public Library Bill) में भी ऐसा प्रावधान किया है जिससे राज्य सरकारों को भी अवगत करा दिया गया है।

भौतिक सत्यापन हेतु भारत सरकार के वित्त मंत्रालय द्वारा निर्धारित नियम (Rules for Stock Verification by Finance Ministry, Government of India) – सन् 1984 से पूर्व भारत सरकार पुस्तकों और विभिन्न विषयों से सम्बन्धित सामयिकी प्रकाशनों (Journals) को संचय अथवा भण्डारण की वस्तु मानती थी। अतः जिस प्रकार भण्डार (Store) में संग्रहित अन्य सामग्री का भौतिक सत्यापन किया जाता है, उसी प्रकार संग्रहित अध्ययन सामग्री के सत्यापन को भी आवश्यक मानती थी। परन्तु अब भारत सरकार के निम्नलिखित आदेश जिसके अन्तर्गत पुस्तकों एवं पत्रिकाओं आदि को संचयन अथवा भण्डारण की सामग्री नहीं माना गया है। इनके सत्यापन से सम्बन्धित अलग से नियम निर्धारित किए हैं।

भारत सरकार ने अपने विभिन्न विभागों से सम्बद्ध पुस्तकालयों में पुस्तकों एवं सामयिकी प्रकाशनों के क्रय, प्रत्याहरण, निरस्तीकरण और भौतिक सत्यापन के सम्बन्ध में निम्नलिखित नियम निर्धारित किए हैं—

(1) केन्द्रीय सरकार के विभिन्न विभागों में कार्यरत ऐसे पुस्तकालयाध्यक्ष जो विभाग के उप-सचिव की श्रेणी से नीचे के नहीं हैं वे किसी भी ख्याति प्राप्त और प्रतिष्ठित प्रकाशक अथवा पुस्तक विक्रेता से निर्धारित शर्तों पर पुस्तकों एवं अन्य पाठ्य सामग्री का क्रय कर सकते हैं। इस कार्य के लिए निविदा (Tender) आदि आमन्त्रित करने की आवश्यकता नहीं है।

(2) एक वर्ष के अन्तराल में पुस्तकालय से प्रति एक हजार पुस्तकों के आदान-प्रदान में तीन पुस्तकों तक के खो जाने या गुम हो जाने पर उनके लिए पुस्तकालयाध्यक्ष को लापरवाह अथवा बेईमान के रूप में आरोपित नहीं किया जा सकता। इसे एक सामान्य क्षति माना जाएगा। 200 रु. से अधिक मूल्य की पुस्तक, विशिष्ट प्रकृति की दुर्लभ पुस्तक यदि गुम हो जाती हैं, तो उस स्थिति में उसकी जाँच की जानी चाहिए और प्रभावी कदम उठाया जाना चाहिए। इस प्रकार सामान्य हानि के अन्तर्गत यदि किसी का दोष नहीं पाया जाता उस तो स्थिति में ऐसी पुस्तकों को किसी सक्षम अधिकारी द्वारा प्रत्याहरित (Written off) किया जा सकता है।

(3) ऐसे पुस्तकालयाध्यक्ष जिनका स्तर विभाग के उप-सचिव से निम्न नहीं है, वे उपयुक्त सीमा के अन्तर्गत खोई हुई पुस्तकों को निरस्त अथवा प्रत्याहरित कर सकते हैं।

(4) यदि पुस्तकालयाध्यक्ष द्वारा पुस्तकालय के हित में अनुपयोगी, अप्रचलित, गतावधिक (Outdated), जीर्ण-शीर्ण, फटी हुई पाठ्य सामग्री को संग्रह से हटा दिया जाता है, उसमें कोई आपत्ति नहीं है किन्तु इस कार्य हेतु तीन सदस्यीय समिति का गठन मंत्रालय/विभाग द्वारा किया जाएगा। यह समिति ही यह निर्णय लेने में सक्षम होगी कि ये अप्रचलित अथवा जीर्ण-शीर्ण पुस्तकें भविष्य के उपयोग हेतु महत्वपूर्ण नहीं हैं।

(5) जिन पुस्तकालयों के संग्रह में 20,000 से अधिक पुस्तकें नहीं हैं, वहाँ पुस्तकों का भौतिक सत्यापन प्रतिवर्ष किया जाना चाहिए। ये भौतिक सत्यापन पुस्तकालय के दो प्रशिक्षित कर्मचारियों की देखरेख में होना चाहिए।

(6) जिन पुस्तकालयों के संग्रह में 20,000 से अधिक और 50,000 से कम पुस्तकें हैं, वहाँ सम्पूर्ण भौतिक सत्यापन तीन वर्षों के अन्तराल से किया जाना चाहिए।

(7) जिन पुस्तकालयों के संग्रह में ग्रन्थों की संख्या 50,000 से अधिक हैं, उनमें निर्दशन विधि (Sampling Method) से पाँच वर्षों के अन्तराल से किया जाना चाहिए। यदि इस प्रकार के सत्यापन से पुस्तकों की असामान्य और अनुचित हानि या कमी निकलती है, तब उस स्थिति में पूर्णरूप से पुस्तकों का भौतिक सत्यापन किया जाना चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि शैक्षणिक पुस्तकालयों में संग्रह सत्यापन (Stock Verification) कार्य प्रत्येक पुस्तकालय में संग्रहित पुस्तकों/प्रलेखों की संख्या के आधार पर किया जाना आवश्यक है। इस कार्य के लिए विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय पुस्तकालय वित्त मंत्रालय, भारत सरकार की उपर्युक्त अनुशंसाओं का अनुसरण कर सकते हैं।

शैक्षणिक पुस्तकालयों में कार्मिक प्रबन्धन
(PERSONNEL MANAGEMENT IN ACADEMIC LIBRARIES)

प्रश्न–विश्वविद्यालय एवं कॉलेज पुस्तकालयों के लिए विभिन्न श्रेणियों में कार्मिकों की आवश्यकता की चर्चा कीजिए।

Explain the different categories of staff required for university and college libraries.

अथवा (Or)

व्यावसायिक विकास शब्द से आप क्या समझते हैं ? अपने व्यावसायिक कर्मियों के विकास के लिए एक शैक्षणिक पुस्तकालय को जिन विभिन्न कार्यक्रमों का नियोजन करना चाहिए उसके बारे में विस्तार से लिखिए।

What do you understand by professional development. Discuss the various programmes which an academic library can initiate for development of its professional staff.

अथवा (Or)

एक शैक्षिक पुस्तकालय की समुचित कार्य व्यवस्था के संचालन में कार्मिक नियम पुस्तिका की उपयोगिता को समझाइए। उन कारकों की चर्चा कीजिए, जिन्हें इस नियम पुस्तिका के निर्माण हेतु उपयोग में लाना चाहिए।

Discuss the utility of a staff manual in the proper functioning of a academic library. Explain the factors that should be taken into account while preparing such a manual.

अथवा (Or)

एस. आर. रंगनाथन द्वारा प्रतिपादित सामान्य कर्मचारी सूत्र की विवेचना कीजिए।

Describe the general staff formula formulated by S.R. Ranganathan.

अथवा (Or)

शैक्षिक पुस्तकालयों में विभिन्न प्रकार के कर्मचारी प्रतिमानों तथा मानदण्डों की व्याख्या कीजिए।

Explain the different norms and patterns for staffing academic libraries.

अथवा (Or)

किसी शैक्षिक पुस्तकालय के लिए कार्मिक नीति की महत्ता का परीक्षण कीजिए।

Examine the significance of a staffing policy for an academic library.

अथवा (Or)

निम्नलिखित प्रश्नों का लघु उत्तर दें।

Write short answer of the following questions :

(i) कार्मिक प्रबन्धन की आवश्यकता एवं उद्देश्य

Need and objectives of personnel management.

(ii) कार्मिक प्रबन्धन के सिद्धान्त।

Principles of Personnel Management.

(iii) पुस्तकाय कर्मचारियों की चयन प्रक्रिया।

Selection process of Library Personnels.

(iv) श्रेष्ठ कार्मिक नीति।

Best Personnel Policy.

(v) पुस्तकालयों में अभिप्रेरणा।

Motivation in Libraries.

(vi) कार्य सन्तुष्टि एवं कार्य विश्लेषण।

Job satisfaction and Job analysis.

(vii) कार्य मूल्यांकन।

Job Evaluation.

(viii) कार्य विवरण

Job Description.

उत्तर—किसी भी संस्था की योजना को मूर्तरूप देने के लिए कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ती है तथा संस्था की प्रभावी कार्यक्षमता पूर्ण रूप से उसके कर्मचारियों एवम् उनके चयन एवं नियुक्ति की नीति पर आधारित होती है। कोई भी कर्मचारी नियुक्त किया जाय उसमें कार्य करने की अभिरुचि, क्षमता तथा दक्षता होनी चाहिए। इसके साथ ही कर्मचारियों में निष्ठा, उत्साह, सद्भावना तथा पारस्परिक सहयोग की भावना भी होना आवश्यक है। कर्मचारियों में यदि उपर्युक्त विशेषताएँ हों तो संस्था में कार्य करने का एक उत्तम वातावरण विकसित हो सकता है।

किसी भी अन्य संस्था की भाँति पुस्तकालय में भी कार्य करने के लिए कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ती है। पुस्तकालय की कल्पना तीन तत्वों से होती है—कर्मचारी, पाठ्य-सामग्री तथा पाठक। इनमें से यदि पुस्तकालय में एक की भी व्यवस्था उचित एवं व्यवस्थित ढंग से न की जाय तो पुस्तकालय का अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है। इन तीनों तत्वों में पुस्तकालय के कर्मचारियों का महत्व सर्वाधिक होता है क्योंकि पुस्तकालय में निहित पाठ्य-सामग्री की उपयोगिता को बढ़ाने में कर्मचारियों का ही योगदान सबसे अधिक होता है। किसी भी पुस्तकालय में प्रदत्त सेवाओं को पाठकों के अनुकूल, लोकप्रिय एवं सक्षम बनाने हेतु पुस्तकालय कर्मचारियों की निष्ठा, कर्मठता तथा कर्तव्यपरायणता ही आवश्यक होती है। पुस्तकालय में अत्यन्त उपयोगी, उत्तम एवं दुर्लभ पाठ्य-सामग्री उपलब्ध हो किन्तु यदि पुस्तकालय के कर्मचारी अयोग्य, अशिष्ट, अकर्मण्य तथा निष्ठाहीन हैं तो ऐसी स्थिति में क्या वह पुस्तकालय के पाठकों को उपयुक्त, उत्तम एवं समुचित सेवा प्रदान करने में सफल हो सकता है कभी नहीं। इसके विपरीत पाठकों की संख्या में निरन्तर कमी होती चली जायेगी तथा पुस्तकालय की ख्याति में भी गिरावट आयेगी। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि किसी भी पुस्तकालय की सफलता उसके कर्मचारियों पर ही सर्वाधिक निर्भर करती है। चूँकि कर्मचारी ही पाठक तथा पाठ्य-सामग्री का सम्बन्ध स्थापित करते हैं इसलिए यह आवश्यक है कि पुस्तकालय में शिक्षित, प्रशिक्षित, योग्य, कर्मठ, कर्त्तव्यपरायण, निष्ठावान एवं समर्पित

कर्मचारियों का चयन किया जाना चाहिए तथा पुस्तकालयों में उनका प्रबन्ध इस तरह युक्तिपूर्ण ढंग से किया जाना चाहिए कि पुस्तकालय में अल्पतम प्रयासों के द्वारा पाठकों को अधिकतम एवं उपयोगी सेवा प्रदान की जा सके जिससे पुस्तकालय के कर्मचारियों में—

(1) उनकी कार्यक्षमता का अधिकतम उपयोग हो सके।

(2) उनमें संयुक्त रूप से कार्य करने की भावना जागृत हो।

(3) उनके सम्बन्धों में स्थायी जागरूकता उत्पन्न हो।

(4) और वे अधिकतम पुस्तकालय सेवा प्रदान करने में सफल हो सकें।

किसी भी प्रकार के पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष में शैक्षणिक एवं व्यावहारिक योग्यताएँ निहित होने के साथ ही एक सफल एवं सक्षम पुस्तकालयाध्यक्ष सिद्ध होने के लिए अनुसंधान में अभिरुचि भी होनी चाहिए तथा शोधकर्त्ताओं को प्रोत्साहित करने के लिए पुस्तकालय की विभिन्न प्रकार की सामग्रियों तथा उनके उपकरणों से भली-भाँति परिचित होना चाहिए। अन्य कर्मचारियों एवं सहायकों की नियुक्ति उनकी योग्यता, पुस्तकालय कार्य प्रणाली में अभिरुचि के आधार पर की जानी चाहिए। पाठकों के प्रति उदारता तथा सहृदयता की भावना स्टाफ के प्रत्येक सदस्य में अवश्य होनी चाहिए। साथ ही पुस्तकालयाध्यक्ष में नेतृत्व का गुण भी होना चाहिए जो पुस्तकालयाध्यक्ष के लिए अत्यन्त आवश्यक है। पुस्तकालयाध्यक्ष को पाठकों तथा पाठ्य-सामग्रियों के मध्य एक जनसम्पर्क अधिकारी की भाँति कार्य करना चाहिए जिससे दोनों को सन्निकट लाया जा सके।

कार्मिक प्रबन्धन
(Personnel Management)

कार्मिक से अर्थ कार्य करने वाले व्यक्तियों से होता है। किसी भी शैक्षणिक पुस्तकालय में विविध कार्यों हेतु कर्मचारियों की व्यवस्था करना ही **कार्मिक प्रबन्धन** कहलाता है। पुस्तकालय में कार्मिक प्रबन्धन से आशय प्रबन्ध के उस विज्ञान से है जिसमें व्यक्तियों के अनुप्रयोग का समुचित अध्ययन किया जाता है। कर्मचारी प्रबन्धन में वे सभी प्रबन्धकीय विधियाँ आती हैं जिनका प्रयोग पुस्तकालय में कर्मचारियों की समस्याओं को व्यक्तिगत रूप से हल करने के लिए किया जाता है। कर्मचारी प्रबन्धन का विस्तृत अर्थ में आशय प्रबन्धन के उस क्षेत्र से होता है जो कर्मचारियों के लिए बनाई गई नीतियों, कार्यक्रमों, उनके चयन, प्रशिक्षण, वेतन एवं भत्ते, सेवाशर्तों, निरीक्षण, प्रोत्साहन तथा अभिप्रेरण आदि क्रियाओं से सम्बन्धित होता है। पुस्तकालय की सेवाओं में नियुक्त कर्मचारियों की सम्पूर्ण व्यवस्था ही पुस्तकालय में **कार्मिक प्रबन्धन** के नाम से जानी जाती है, आजकल कार्मिक प्रबन्धन को कई नामों से जाना जाता है; जैसे—कर्मचारी प्रबन्धन, कर्मी प्रबन्धन, सेवीवर्गीय प्रबन्धन आदि।

अत: **कार्मिक प्रबन्धन** (Personnel Management) का अर्थ पुस्तकालय में विभिन्न कार्यों के निष्पादन हेतु कर्मचारियों का प्रबन्धन करना है। विशेष सन्दर्भ में हम कह सकते हैं कि कर्मचारी प्रबन्धन का अर्थ पुस्तकालय में कर्मचारियों का ऐसी युक्ति के साथ प्रबन्ध करना है जिससे कि पुस्तकालयों में कम से कम प्रयासों से सबसे अधिक एवं उत्तम सेवा प्रदान की जा सके।

कार्मिक प्रबन्धन शैक्षणिक पुस्तकालय का वह अंग होता है जिसके द्वारा पुस्तकालय में कार्यरत प्रत्येक कर्मचारी के कार्यों, सेवाओं एवं क्रिया-कलापों का संचालन किया जाता है।

सिद्धान्तों एवं आधारों को निर्धारित करना होगा आदि। इस प्रकार इस चरण के अन्तर्गत उन सभी आवश्यक आधारभूत तथ्यों को एकत्रित करना होता है जिनकी सहायता से योजना तैयार की जाती है।

(4) **वैकल्पिक कार्य विधियों का ज्ञान करना (Indentfication of Alternative Action Procedures)** – योजना के आवश्यक आधारों को निश्चित करने के उपरान्त यह ज्ञात करना होता है कि निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किन-किन विधियों को प्रयोग में लाया जाता था। यह ज्ञात करना अति आवश्यक होता है। व्यवहार में हम यह देखते हैं कि किसी भी कार्य को हम भिन्न-भिन्न तरीकों से सम्पन्न कर सकते हैं। अतः निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भी यह देखना होता है कि उन्हें अब किन-किन विधियों से प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार वैकल्पिक कार्य-विधियों का पता लगाना पुस्तकालय नियोजन का अगला चरण है।

(5) **वैकल्पिक कार्य विधियों का मूल्यांकल (Evaluation of Alternative W ork Procedures)** – सम्भावित कार्य विधियों का पता लगाने के बाद उनका सापेक्ष अर्थात् एक-दूसरे की तुलना के रूप में मूल्यांकन करना होता है। इसके लिए उन सभी विधियों का गुण-दोषों के आधार पर विवेचन करना होता है। यह करते समय पुस्तकालय योजना के उद्देश्य को ध्यान में रखना अति आवश्यक होता है। यह कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है तथा साथ ही इस कार्य में निष्पक्ष रहने की आवश्यकता होती है।

(6) **सर्वोत्तम कार्य विधियों का चयन (Choice of the Best Procedures of Action)** – इसके पश्चात् पुस्तकालय के नियोजन का अगला चरण निर्णय लेना होता है कि योजना के निश्चित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु कौन सी कार्य विधि सर्वोत्तम रहेगी। चयन करने का यह निर्णय अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। यदि इस कार्य में कोई गलती या चूक हो जाय तो वान्छित सफलता नहीं प्राप्त हो सकती है। यह कार्य आसान कार्य नही है क्योंकि सर्वोत्तम कार्य विधि का निर्णय करते समय एक विधि दूसरी उत्तम विधि से अधिक एवं श्रेष्ठ दिखाई देती है परन्तु दोबारा ध्यान देने पर ऐसा लगता है कि दूसरी विधि ही अधिक श्रेष्ठ है। ऐसी स्थिति में पुस्तकालय के निर्णायक तत्वों को ध्यान में रखकर ही कोई निर्णय लेना चाहिए।

(7) **विस्तृत योजना की तैयारी (Preparation of the Plan)** – कार्यविधि का चयन कर लेने के बाद पुस्तकालय के सभी साधनों को ध्यान में रखते हुए विस्तृत एवं स्पष्ट योजना का निर्माण करना होता है। इसके अन्तर्गत पुस्तकालय के विभिन्न विभागों की अलग-अलग योजना तैयार करनी पड़ती है। योजना निर्माण करते समय सम्भावित सभी कठिनाइयों, समस्याओं तथा सीमाओं का ध्यान भी रखना होता है।

प्रश्न—पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन को परिभाषित कीजिए। इसकी उन विशेषताओं और कारकों की व्याख्या कीजिए जो गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं।

Define Total Quality Management (TQM). Explain qualities and factors that affect quality.

अथवा (Or)

समग्र गुणवत्ता प्रबन्धन की क्या आवश्यकता है ? सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन में आने वाले अवरोधों की विस्तार से चर्चा कीजिए।

What is the need for Total Quality Management (TQM) ? Elaborate the barriers for TQM.

अथवा (Or)

आप पूर्ण गुण प्रबन्धन से क्या समझते हैं ? भारत में किन तरीकों द्वारा टी. क्यू. एम. को पुस्तकालयों/सूचना केन्द्रों में स्थापित किया जा सकता है ?

What do you understand by Total Quality Management (TQM) ? In which ways can TQM be established in libraries/information centres in India.

अथवा (Or)

पूर्ण गुणवत्ता उपागम से आप क्या समझते हैं ? पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों में पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन (टी. क्यू. एम.) के नियमों के औचित्यपूर्ण अनुप्रयोग की चर्चा कीजिए।

What do you understand by Total Quality Approach ? Discuss the suitablity of application of Total Quality Management (TQM) principles in libraries and information centres.

उत्तर—

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन
(Total Quality Management – TQM)

सर्वप्रथम गुणवत्ता नियन्त्रण (Quality Control) अवधारणा का उद्‌भव सन् 1920 के अन्तर्गत अमेरिका में औद्योगिक उत्पादों की गुणवत्ता को निर्धरित करने हेतु हुआ था जिससे वस्तुओं के निर्माण में सुधार हो सके और यह विश्वास हो जाए कि वह वस्तु निश्चय ही दोष-मुक्त होकर उपयुक्त सिद्ध होगी। यह अवधारणा अमेरिका में अधिक प्रचलित नहीं हो सकी परन्तु द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् जापान ने इसे अपना लिया और विश्व में उत्पादनों की गुणवत्ता के क्षेत्र में अपना प्रमुख स्थान बना लिया। इसी के स्थान पर सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन (Total Quality Management – TQM) की अवधारणा का विकास 1980 के प्रारम्भिक काल में अमेरिका में पुनः हुआ और यह गुणवत्ता क्रान्ति (Quality Revolution) अमेरिका में प्रत्येक क्षेत्र में निरन्तर विकसित हो रही है।

सम्पूर्ण गुणवत्ता का विचार प्रबन्धन प्रणाली के अन्तर्गत एक क्रान्तिकारी विचार है। प्रबन्धन की इस नई प्रणाली में वैज्ञानिक प्रबन्धन तथा भागीदारी प्रबन्धन के सभी महत्वपूर्ण एवं उपयोगी तत्वों को एक साथ संयुक्त कर दिया गया है। अमेरिका के साथ-साथ जापान में अधिकांशतः औद्योगिक प्रतिष्ठानों में इस नई प्रणाली को प्रयोग में लाया जा रहा है, क्योंकि जापान ने वैज्ञानिक प्रबन्धन की कमियों को देखते हुए अपने औद्योगिक प्रतिष्ठानों के पुनर्निर्माण के लिए इस प्रणाली को अपनाया है।

प्रबन्धन की इस नवीन विचारधारा में गुणवत्ता अत्यन्त महत्वपूर्ण पद है। गुणवत्ता को किसी वस्तु अथवा व्यक्ति की विशेषता के रूप में देखा जाता है जिससे उस वस्तु अथवा व्यक्ति के गुण, स्वभाव एवं व्यवहार का निर्धारण किया जाता है। गुणवत्ता को विशेषता, गुण और उपयोगिता का पर्यायवाची माना जाता है। प्रबन्धन में गुणवत्ता का तात्पर्य उत्पाद अथवा सेवाओं में विशिष्टता प्रदान करने से है। जब आधुनिक प्रबन्धन में गुणवत्ता की बात की जाती है, तब इसका तात्पर्य होता है कि उपभोक्ता की दृष्टि से संगठन/संस्था द्वारा किया जाने वाला

कार्य अथवा सेवा ऐसी हो जिसके आधार पर उपभोक्ता संगठन विशेष एवं उसके कार्यों, सेवाओं और उत्पादों को सर्वश्रेष्ठ मान सके।

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन से तात्पर्य—किसी भी संगठन के अन्तर्गत गुणवत्ता और उपभोक्ता सुविधा के प्रति किए गए समस्त प्रयासों का एकीकरण सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन है। किसी संगठन की सम्पूर्ण गुणवत्ता उसके उपभोक्ताओं की संतुष्टि पर जोर देती है। उत्पादन में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि उपयोगकर्ताओं को संतुष्ट करने वाले सभी बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाए। टेनर एवं डे टोरो (Tener and De Toro) के अनुसार, सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन (TQM) निम्न बातों पर आधारित होता है—

(i) एक उद्देश्य : निरन्तर सुधार;

(ii) तीन सिद्धान्त : उपभोक्ता पर ध्यान, प्रक्रियात्मक सुधार, और सम्पूर्ण लग्न;

(iii) छह सहायक तत्व : नेतृत्व, शिक्षण एवं प्रशिक्षण, सहयोगी संरचना, संचार, पुरस्कार एवं मान्यता तथा मूल्यांकन।

अन्तर्राष्ट्रीय मानक संगठन के अनुसार, "सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन किसी संगठन के प्रबन्धन की वह प्रक्रिया है जो गुणवत्ता पर केन्द्रित, सभी सदस्यों के सामूहिक प्रयासों पर आधारित और जिसका उद्देश्य उपभोक्ताओं की संस्तुष्टि, समाज और संगठन के सभी सदस्यों को लाभ उपलब्ध कराते हुए दीर्घकालीन सफलता प्राप्त करना है।" इस प्रबन्धन प्रक्रिया में कोई भी कर्मचारी वरिष्ठ अथवा कनिष्ठ नहीं होता बल्कि सभी सामूहिक भावना से संगठन के हित में कार्य करते हैं।

इस प्रकार सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का मूल उद्देश्य उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार और वृद्धि करना तथा उपभोक्ताओं को उसकी माँग, आवश्यकता एवं अपेक्षा के अनुरूप सन्तुष्ट करना है।

सम्पूर्ण गुणवत्ता के विभिन्न पक्ष—किसी भी संगठन में गुणवत्ता किसी उत्पाद अथवा सेवा के कुछ पक्षों तक ही सीमित नहीं की जा सकती बल्कि इसे समग्रता के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। गुणवत्ता के महत्वपूर्ण पक्ष निम्नलिखित हैं जिन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए—

(1) उत्पाद अथवा सेवा की उपयोगिता,

(2) उत्पाद का स्थायित्व,

(3) उत्पाद के प्रति उपभोक्ता की विश्वसनीयता,

(4) उत्पाद का स्वरूप,

(5) उत्पादों की बिक्री के पश्चात् उपभोक्ता को सेवा एवं सहयोग,

(6) उत्पादों तथा सेवाओं की विविधता,

(7) सेवा की गति एवं क्षेत्र,

(8) संगठन/संस्था की प्रतिष्ठा,

(9) सेवा प्रदान करने में कुशलता एवं दक्षता,

(10) निर्देशानुसार अनुकूलता।

इन सभी पक्षों को गुणवत्ता के अन्तर्गत समाहित किया जा सकता है अतः उत्पाद में इन पक्षों को समाहित करके उसमें उच्च स्तरीय गुणवत्ता लगना सम्भव है और इससे विक्रय वृद्धि में सहायता मिलती है साथ ही उपभोक्ता को सन्तुष्टि प्राप्त होती है।

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन के उद्देश्य—इसके निम्नलिखित उद्देश्य हैं :

(1) उपभोक्ता अथवा उपयोक्ता को उत्पादों अथवा सेवाओं द्वारा पूर्णरूप से संतुष्ट करना।

(2) संगठन द्वारा उत्पादों एवं सेवाओं को उपभोक्ता की माँग एवं आवश्यकता के अनुरूप होना,

(3) संगठन/संस्था का निरन्तर विकास एवं प्रगति जो अन्य संगठनों के साथ प्रतिस्पर्धा में उनका मुकाबला कर सके,

(4) उच्च गुणवत्तापरक उत्पादों का उत्पादन एवं निरन्तर उनमें गुणात्मक सुधार के प्रयास,

(5) संगठन के सभी कर्मचारियों की पूर्ण सहभागिता।

उपर्युक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि संगठन को समय-समय पर अन्य संगठनों के उत्पादों की गुणवत्ता का अध्ययन, अवलोकन और निरीक्षण करते रहना चाहिए। उत्पादों की गुणवत्ता में वृद्धि करने हेतु उस क्षेत्र के विशेषज्ञों एवं वैज्ञानिकों से भी राय लेनी चाहिए। गुणवत्ता विकास एवं प्रगति से सम्बन्धित राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की सूचनाओं को भी प्राप्त करना चाहिए और उनका उपयोग करके उत्पाद की गुणवत्ता में वृद्धि करनी चाहिए। मूल्यों में कमी एवं गुणवत्ता में सुधार समग्र गुणवत्ता प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। यद्यपि यह एक-दूसरे के विपरीत दिखते हैं किन्तु प्रतिस्पर्धा के युग में इनमें सामंजस्य होना आवश्यक है। मानव एवं व्यावहारिक पक्ष सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की महत्वपूर्ण विशेषता है अतः सभी स्तर के प्रत्येक अधिकारियों एवं कर्मचारियों को संगठन के विकास और प्रगति में अपने-अपने कार्यक्षेत्र के अन्तर्गत सर्वोत्तम योगदान देने का प्रयत्न करना चाहिए।

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की उपयोगिता—किसी भी संगठन के अन्तर्गत सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन में सभी कार्मिकों की सहभागिता द्वारा एक नवीन प्रकार की कार्य संस्कृति का निर्माण किया जाता है। इस परिवर्तित वातावरण में कर्मचारी अपने-अपने कार्यक्षेत्र में रुचिपूर्वक कार्य सम्पन्न करते हैं जिससे संगठन अथवा संस्था को अपने उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त करना सरल हो जाता है। इस प्रकार सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन की निम्नलिखित उपयोगिताएँ हैं—

(1) संगठन में कार्य करना रुचिकर हो जाता है क्योंकि सभी स्तर के कर्मचारी एक-दूसरे के साथ सामूहिक रूप से मिलकर नवीन कार्य वातावरण में कार्य करते हैं,

(2) उत्पाद में गुणवत्ता के साथ उत्पादन में वृद्धि होती है,

(3) कर्मचारियों की कार्य-क्षमता बढ़ती है और कार्य सम्पादन में संतुष्टि मिलती है,

(4) कर्मचारियों में सामूहिक भावना का विकास होता है,

(5) उत्पादों और सेवाओं की गुणवत्ता में वृद्धि एवं उत्पाद के मूल्यों में कमी आती है।

शैक्षणिक पुस्तकालयों में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन
(Total Quality Management in Academic Libraries)

प्रारंभिक समय में पुस्तकालय से तात्पर्य एक ऐसे केन्द्रीय स्थान से था जहाँ पुस्तकों को संरक्षित करके रखा जाता है। डॉ. रंगनाथन के प्रयास से पुस्तकालयों के स्वरूप में परिवर्तन आया और इन्हें उपयोग की वस्तु माना गया और पाठकों द्वारा इनका उपयोग किया जाने लगा। जैसे-जैसे समय परिवर्तित हुआ शिक्षा के क्षेत्र में जागृति आई अतः शिक्षण एवं प्रशिक्षण कार्य हेतु पुस्तकालयों का महत्व भी बढ़ता गया। शिक्षा और अनुसन्धान के लिए पुस्तकालयों को शैक्षणिक संस्थान का हृदय कहा गया। वर्तमान में नवीन सूचना प्रौद्योगिकी के आविष्कार और उसके अनुप्रयोग ने पुस्तकालयों के पूरे परिदृश्य को परिवर्तित कर दिया। आज पुस्तकालय केवल ज्ञान और सूचना का संग्रह एवं संरक्षण ही नहीं करते बल्कि उसका उत्पादन और उपयोगकर्ता की माँग और आवश्यकतानुसार उसका सम्प्रेषण भी करते हैं। वर्तमान में पुस्तकालयों का उद्देश्य उचित उपयोक्ता को उचित समय पर उसकी आवश्यकता और माँग के अनुसार उचित सूचना उपलब्ध कराना आवश्यक है। अतः पुस्तकालय ज्ञान और सूचना का उत्पादन, विनिमय और उपयोग कराने वाली एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्था है।

यद्यपि उच्च शिक्षा से सम्बन्धित पुस्तकालयों के प्रबन्धन में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन (TQM) एक नवीन अवधारणा है, परन्तु यह अन्य व्यावसायिक एवं औद्योगिक संगठनों के समान ही पुस्तकालय जैसे सेवा संगठनों के लिए भी उतनी ही महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है। सन् 1990 के प्रारम्भ में कुछ पुस्तकालयों एवं सूचना केंद्रों ने यह अनुभव किया कि वर्तमान समय में उपयोक्ताओं को उनके अध्ययन एवं अनुसंधानिक कार्यों के लिए नवीनतम सूचना सामग्रियों को शीघ्रातिशीघ्र उपलब्ध कराना आवश्यक है तब इस संदर्भ में उन्होंने सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन प्रणाली को अपनाने पर विचार किया। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्र अपने प्रबन्धन में सम्पूर्ण गुणवत्ता के मानकों को अपनाकर अपनी सेवाओं में अधिक गुणवत्ता प्राप्त कर सकते हैं तथा सूचना उत्पादों एवं सेवाओं पर आने वाले व्यय को भी कम कर सकते हैं।

आवश्यकता एवं महत्व—आधुनिक युग में औद्योगिक क्रान्ति के पश्चात् इलेक्ट्रॉनिक सूचना माध्यमों तथा कम्प्यूटर ने सूचना क्रान्ति का सूत्रपात कर दिया है। इसके फलस्वरूप पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों की कार्य-प्रणाली में आमूलचूल परिवर्तन हो गया है। अब सूचना प्राप्त करने के लिए न केवल पुस्तकें, पत्रिकाएँ, मोनोग्राफ, पैम्फलेट एवं शोधग्रन्थ ही पुस्तकालय में सूचना माध्यमों का कार्य करते हैं वरन् टेलीविजन, विडियोफिल्म, सीडी-रोम आदि भी सूचना माध्यमों का कार्य करते हैं। इनके अतिरिक्त अब सूचना प्राप्त करने में कम्प्यूटर एवं इन्टरनेट सेवाओं ने विभिन्न क्षेत्रों में द्रुतगति से परिवर्तन ला दिया है जिसका प्रभाव पुस्तकालय कार्यों एवं सेवाओं पर भी पड़ा है। पुस्तकालयों में जो सामग्री लिखित प्रलेखों के रूप में होती थी, वह अब इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों, जैसे—फ्लॉपी, सीडी-रोम, माइक्रोफिल्म आदि स्वरूपों में उपलब्ध होने लगी है।

वर्तमान परिवर्तित परिवेश में यदि पुस्तकालय सम्पूर्ण गुणवत्ता के अभियान को नहीं अपनायेंगे तो अपने लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर सकेंगे जिनके लिए इनकी स्थापना की गई है। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों द्वारा उपलब्ध सूचना उत्पादों एवं सेवाओं में यदि गुणवत्ता नहीं है तो इनका कोई महत्व नहीं रह जाएगा। पुस्तकालय एवं सूचना सेवा उपलब्ध कराने के लिए

एवं उनकी अधिकतम संतुष्टि के लिए समग्र गुणवत्ता अभिगम का अपनाया जाना आवश्यक है। सूचना एवं सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हो रहे नित नए परिवर्तनों का सामना करने के लिए सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन एक महत्वूपर्ण उपकरण प्रमाणित हो सकता है। शैक्षणिक पुस्तकालयों एवं सूचना केन्द्रों के विभिन्न श्रेणी के उपयोगकर्ताओं की विभिन्न सूचना माँगों को पुस्तकालय के कर्मचारियों के सम्मिलित प्रयास से ही पूरा किया जा सकता है। इसमें सूचना प्रौद्योगिकी का समुचित उपयोग भी सम्मिलित है। पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों के प्रबन्धन में सभी वर्ग एवं स्तर के कर्मचारियों को सम्मिलित कर उनको उचित सुविधा एवं सम्मान प्रदान कर भविष्य के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सकता है। अतः पुस्तकालय के कार्यों एवं सेवाओं में पुस्तकालय के उद्देश्य की प्राप्ति में सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन का विशेष महत्व एवं आवश्यकता है।

सम्पूर्ण गुणवत्ता प्रबन्धन (TQM) पुस्तकालय में निम्न कार्यों में सहायक है—

(i) अच्छे उत्पाद अभिकल्पन में,

(ii) पुस्तकालय में उपलब्ध प्रलेखों की सूची विकसित करने में,

(iii) पुस्तकालय की समस्त सामग्रियों और अभिलेखों का डेटाबेस विकसित करने में,

(iv) आधुनिक विभिन्न उपकरणों के माध्यम से सार्वभौमिक प्रकाशन के क्षेत्र में सुविधा उपलब्ध कराने में,

(v) सूचना विश्लेषण एवं उत्पाद समेकन की गुणवत्ता सुधार में,

(vi) सूचना प्रणाली एवं सेवाओं का समुचित उपयोग करने हेतु उपयोक्ताओं के कौशल एवं दक्षता में सुधार करने में,

(vii) पुस्तकालय संसाधनों को सेवा संसाधनों के रूप में उपयोगकर्ताओं हेतु समग्र कर उनकी नेटवर्किंग करने में,

(viii) अच्छा वातावरण और कर्मचारियों के मध्य मधुर सहभागी सम्बन्ध स्थापित करने में,

(ix) उपयोक्ताओं में विश्वास कायम करने में।

प्रश्न—पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के सम्बन्ध में मानकीकरण के इतिहास की संक्षिप्त व्याख्या कीजिए।

Give a brief history of Standandization in relation to Library and Information Science.

अथवा (Or)

पुस्तकालय एव सूचना विज्ञान से सम्बन्धित मानक स्थापित करने में भारतीय मानक ब्यूरो की भूमिका की विवेचना कीजिए।

Discuss the role played by Bureau of Indian Standards in establishing Standards that have bearing on Library and Information Science.

उत्तर—

मानक (Standard)

औद्योगिक, व्यावसायिक, शैक्षिक संस्थाओं, अथवा शैक्षिक कार्यों की प्रक्रिया, कार्यविधि, परिमाप तथा शब्दावली सम्बन्धी एकरूपता (Uniformity) प्राप्त करने हेतु बनाए

3

कर्मचारी प्रबन्ध : प्रकृति एवं संरचना

(Personnel Management : Nature and Structure)

प्रश्न 1. कर्मचारी प्रबन्ध से क्या समझते हैं ? इसकी प्रकृति एवं संरचना की स्पष्ट व्याख्या कीजिए।

What do you understand by Personnel Management ? Describe its nature and structure in detail.

उत्तर—

कर्मचारी प्रबन्ध
(PERSONNEL MANAGEMENT)

किसी भी संस्था में योजना एवं उद्देश्यों को मूर्त्त रूप प्रदान करने में कर्मचारियों की आवश्यकता होती है। पुस्तकालयों में सेवायें प्रदान करने के लिये कर्मचारियों का प्रबन्ध कुशलतापूर्वक किया जाना चाहिए, जिससे कि आधुनिक युग में पाठकों की बदलती हुयी रुचि एवं आवश्यकताओं तथा पुस्तकालय अपने उद्देश्यों की पूर्ति की दिशा में अग्रसर हो सकें। पुस्तकालय में पुस्तकालयाध्यक्ष ही सर्वोच्च प्रबन्धक होता है अत: उसे कुशल प्रबन्ध की तकनीकों का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक है।

कर्मचारी प्रबन्ध अंग्रेजी के दो शब्द Personnel एवं Management से मिलकर बना है, जिसका विश्लेषण निम्न प्रकार किया जा सकता है—

Personnel = कर्मचारी अथवा पुस्तकालय में कार्य करने वाले व्यक्ति
Management = प्रबन्ध

कर्मचारी प्रबन्ध का आशय प्रबन्ध के उस क्षेत्र से होता है, जोकि संस्था में कर्मचारियों के लिये बनाई गई नीतियों, कार्यक्रम, चयन, प्रशिक्षण, वेतन, भत्ते, सेवा-शर्तों, निरीक्षण, अभिप्रेरणा एवं प्रोत्साहन से सम्बन्धित होता है।

भारतीय राष्ट्रीय कर्मचारी प्रबन्ध संस्थान (National Institute of Personnel Management of India) के अनुसार, "कर्मचारी प्रबन्ध, प्रबन्ध विज्ञान की ही एक शाखा है जिसमें किसी संस्था में कार्यरत कर्मचाारियों के कार्य एवं उनके आपसी सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। इसके अन्तर्गत सभी स्त्री एवं पुरुष संस्था के द्वारा रखे गये उद्देश्य एवं लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये व्यक्तिगत एवं सामूहिक प्रयास करते हैं।"

जूसियस (Jucius) के अनुसार, "प्रबन्ध का वह क्षेत्र जिसमें नियोजन, संगठन एवं नियंत्रण मानव संसाधनों का अधिकतम उपयोग करने के लिये किया जाता है, कर्मचारी प्रबन्ध कहलाता है।"

अत: उपरोक्त परिभाषाओं के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि पुस्तकालय के विभिन्न कार्यों के निष्पादन के लिये कर्मचारियों की उचित व्यवस्था करना ही कर्मचारी प्रबन्ध

हैं। यह एक ऐसा प्रयास होता है जिसमें पुस्तकालयों के कम से कम प्रयासों द्वारा अधिकतम एवं उत्तम सेवा (Minimum Input and Maximum Output) प्राप्त की जा सके।

पुस्तकालय कर्मचारियों की प्रकृति
(NATURE OF PERSONNEL OF LIBRARY)

पुस्तकालय व्यवस्था एक जटिल एवं चुनौतीपूर्ण कार्य है, जिसके लिये विशिष्ट ज्ञान की आवश्यकता होती है। पुस्तकालयों में विभिन्न प्रकार के कार्य सम्पन्न किये जाते हैं। इन कार्यों को पूरा करने के लिये अनेक कर्मचारियों की आवश्यकता होती है। पुस्तकालयों में कार्य के अनुसार कर्मचारियों को निम्न श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है—

(1) प्रशासनिक अधिकारी (Administrative Officers)

(2) तकनीकी कर्मचारी (Technical Staff)

(3) लिपिकीय कर्मचारी (Clerical Staff)

(4) कुशल कर्मचारी (Skilled Staff)

(5) सहायक कर्मचारी (Supportive Staff)

प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा पुस्तकालय में निरीक्षणात्मक कार्य का सम्पादन किया जाता है एवं तकनीकी कर्मचारी पुस्तकालय के विभिन्न व्यावसायिक कार्यों को सम्पन्न करते हैं। पुस्तकालय के अन्य कर्मचारी गैर-व्यावसायिक होते हैं एवं विभिन्न दैनिक कार्यों का सम्पादन करते हैं।

पुस्तकालयों में कार्यरत कर्मचारी सवैतनिक होते हैं अर्थात् उन्हें अपनी सेवा-कार्य के बदले पैतृक संस्था अथवा सरकार द्वारा वेतन एवं भत्ते प्रदान किये जाते हैं। पुस्तकालय कर्मचारियों को विभिन्न देशों में अलग-अलग स्तरों में विभाजित किया गया है—

संयुक्त गणराज्य (UK) में पुस्तकालय कर्मचारियों को निम्न तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया है—

(i) उच्च श्रेणी (Higher Class)

(ii) मध्यम श्रेणी (Middle Class)

(iii) निम्न श्रेणी (Lower Class)

ब्रिटेन में उच्च अधिकारियों की श्रेणी में पुस्तकालयाध्यक्ष एवं उप-पुस्तकालयाध्यक्ष को रखा जाता है। मध्यम श्रेणी में पुस्तकालय के विभिन्न विभागाध्यक्ष एवं प्रभारी तथा दैनिक कार्यों से सम्बन्धित कर्मचारियों को निम्न श्रेणी में रखा गया है।

संयुक्त राज्य अमेरिका (USA) में पुस्तकालय कर्मचारियों की निम्न चार श्रेणियाँ प्रचलित हैं—

(i) प्रशासनिक अधिकारी (Administrative Officer)

(ii) शोध अधिकारी (Research Officer)

(iii) निर्देशात्मक कर्मचारी (Directing Staff)

(iv) तकनीकी कर्मचारी (Technical Staff)

प्रशासनिक अधिकारियों की श्रेणी में पुस्तकालयाध्यक्ष, उप-पुस्तकालयाध्यक्ष, कार्मिक अधिकारी आदि को रखा जाता है। शोध अधिकारी के अन्तर्गत सन्दर्भ ग्रन्थालयी, प्रलेखन अधिकारी आदि को स्थान दिया गया है। निर्देशात्मक कर्मचारियों के अन्तर्गत विभिन्न विभागों के प्रभारी तथा तकनीकी कर्मचारियों की श्रेणी में कैटालोगर, क्लासीफायर, बुक सलेक्शन ऑफीसर, सूचना सहायक आदि को रखा गया है।

भारत के सन्दर्भ में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) द्वारा पुस्तकालय कर्मचारियों की निम्न श्रेणियों का प्रारूप तैयार किया गया है—

(1) वरिष्ठ व्यावसायिक (Professional Senior)
(2) कनिष्ठ व्यावसायिक (Professional Junior)
(3) व्यावसायिक सहायक (Professional Assistants)
(4) अर्द्ध-व्यावसायिक सहायक (Semi-professional Assistants)
(5) गैर-व्यावसायिक (Non-professional)

यू. जी. सी. पुस्तकालय समिति द्वारा वरिष्ठ व्यावसायिक कर्मचारियों के अन्तर्गत पुस्तकालयाध्यक्ष, उप-पुस्तकालयाध्यक्ष, प्रलेखन अधिकारी, सूचना वैज्ञानिक, सन्दर्भ पुस्तकालयाध्यक्ष, प्रमुख सूचीकार, वर्गीकार को स्थान दिया गया है। कनिष्ठ व्यावसायिक कर्मचारियों के अन्तर्गत सहायक पुस्तकालयाध्यक्ष, सहायक वर्गीकार एवं सहायक सूचीकार पदों को रखा गया है। व्यावसायिक सहायक के पदों के अन्तर्गत वरिष्ठ एवं कनिष्ठ पुस्तकालय सहायक एवं अर्द्ध-व्यावसायिक सहायक पदों के अन्तर्गत पुस्तकालय सहायक, बुकलिफ्टर आदि को रखा जाता है। लिपिकीय वर्ग, चपरासी, चौकीदार आदि को गैर-व्यावसायिक कर्मचारियों की श्रेणी में रखा जाता है।

पुस्तकालय कर्मचारियों की संरचना
(STRUCTURE OF LIBRARY PERSONNEL)

किसी पुस्तकालय में कर्मचारियों की संख्या का निर्धारण पुस्तकालय की प्रकृति, पुस्तकालय द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं तथा पाठकों की संख्या के आधार पर की जाती है। इसके अतिरिक्त वित्तीय स्थिति, विभागों की संख्या, शाखायें, आदान-प्रदान एवं सन्दर्भ सेवा, पुस्तकालय खुलने का समय आदि कारकों को ध्यान में रखकर संख्या का निर्धारण किया जाता है।

पुस्तकालय में कर्मचारियों की संख्या का निर्धारण उक्त कारकों के आधार पर किया जाता है, इन कारकों में आवश्यकतानुसार संसोधन एवं परिवर्तनों के साथ पुस्तकालय में लागू किया जाता है।

इन्हीं तत्वों के आधार पर कर्मचारियों की संख्या का निर्धारण करने के लिये निम्नलिखित सूत्रों का प्रतिपादन किया गया है—

(A) रंगनाथन कर्मचारी सूत्र (Ranganathan's Staff Formula)—प्रतिष्ठित पुस्तकालय विज्ञान वैज्ञानिक **डॉ. एस. आर. रंगनाथन** ने गहन शोध एवं अध्ययन के उपरान्त पुस्तकालय कर्मचारियों की संख्या निर्धारण करने के लिये एक कर्मचारी सूत्र (Staff Formula) का प्रतिपादन किया। इस सूत्र को आवश्यकतानुसार संशोधन करके पुस्तकालयों में प्रयोग किया जा सकता है।

(1) $SB = \frac{A}{6000}$ (Book Section) — (पुस्तकालय में प्रतिवर्ष 6,000 नवीन पुस्तकों के पंजीकरण हेतु एक व्यक्ति)

(2) $SC = \frac{G}{1500}$ (Circulation Section) — (पुस्तकालय का परिसंचरण विभाग प्रति 1,500 घंटे खुला होने पर एक व्यक्ति)

(3) $SL = \frac{HW}{1500}$ (Librarian and His Deputy) — (प्रतिवर्ष 1,500 घण्टों के लिये एक व्यक्ति)

(4) $SM = \frac{A}{3000}$ (Maintenance Section) — (पुस्तकालय में प्रतिवर्ष 3,000 पुस्तकों के व्यवस्थापन एवं मरम्मत हेतु एक व्यक्ति)

(5) $SP = \frac{P}{500}$ (Periodical Section) — (प्रतिवर्ष 500 पत्र-पत्रिकाओं की प्राप्ति एवं अभिलेखन क लिये एक व्यक्ति)

(6) $SR = \frac{R}{50} \times \frac{W}{250}$ (Reference Section) — (प्रतिदिन 50 पाठकों के लिये एक व्यक्ति)

(7) $ST = \frac{A + 40D}{200}$ (Technical Section) — (प्रति 8 पुस्तकों/लेखों को वर्गीकृत एवं सूचीकरण हेतु एक व्यक्ति एक दिन के औसत से प्रतिवर्ष)

कुल तकनीकी कर्मचारियों के लिये सूत्र—

$SB + SC + SL + SM + SP + SR + ST$

$= [3(A + 20D) + 2(G + 3P) + 2W(H + 6)] [R/100]/3000$

अकुशल कर्मचारियों के लिये सूत्र—

$SB/4 + SC/2 + SL + SM/G + SP/2 + SR/8 + A/20000 + D/500 + B/6000 + (S/100)/4 + V/30000 - 27A + 2(B + 120D) + 40(G + 3P) + 30000$

$= S/100 + GV + 200(40A + 3) [R/50]/12000$

जहाँ पर—

A = एक वर्ष में अधिग्रहीत पुस्तकें
B = वार्षिक बजट
D = पत्र-पत्रिकाओं की संख्या
G = पुस्तकालय का मुख्य द्वार खुले रहने का समय
H = प्रतिवर्ष पुस्तकालय खुले रहने के घण्टे
P = वर्तमान वर्ष में क्रय किये गये पत्र-पत्रिकाओं की संख्या
R = प्रतिदिन पाठकों की संख्या
S = वाचनालय में बैठने के स्थान की क्षमता
V = पुस्तकालय में उपलब्ध कुल पुस्तकों की संख्या
W = वर्ष के समस्त कार्यकारी दिवसों की संख्या

(B) यू. जी. सी. सूत्र (U.G.C. Formula)—विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा भी कर्मचारियों की संख्या का निर्धारण करने के उद्देश्य से एक सूत्र प्रतिपादित किया गया। इस सम्बन्ध में सन् 1966 में यू. जी. सी. एवं इन्सडॉक ने 'विश्वविद्यालय पुस्तकालय कार्य-संचालन' विषय पर एक संगोष्ठी का आयोजन किया। इस संगोष्ठी में पुस्तकालय कर्मचारियों के सम्बन्ध में कुछ मानक स्थापित किये गये, जो निम्नलिखित है—

(1) अधिग्रहण (Accessioning) — प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 40 पुस्तकें
(2) वर्गीकरण (Classification) — प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 12 से 25 पुस्तकें
(3) सूचीकरण (Cataloging) — प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 12 पुस्तकें
(4) कार्ड व्यवस्थापन (Filing of Cards) — प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 250 कार्ड

उपर्युक्त दोनों पुस्तकालयों में कर्मचारियों की संख्या का निर्धारण पुस्तकालय द्वारा दी जाने वाली सेवाओं एवं विभागों की संख्या के आधार पर निर्भर करता है। **पुस्तकालय के सफलतापूर्वक संचालन के लिये एवं कर्मचारियों की आवश्यकता जानने के लिये कर्मचारी** सूत्र महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं।

00

(5) अधीनस्थों को कार्य एवं आवश्यकताओं के अनुरूप पूर्ण अधिकारों का अन्तरण किया जाना चाहिए।

(6) कर्मचारियों की योग्यता एवं कर्त्तव्य-परायणता की जाँच के उपरान्त ही अधिकार-अन्तरण किया जाना चाहिए। इसके पश्चात् उन पर पूर्ण विश्वास रखना चाहिए, गलती होने पर अत्यधिक कठोर रुख न अपनाकर सुधारात्मक कदम उठाने चाहिए।

प्रश्न 2. ''स्टाफिंग पुस्तकालयों में एक महत्वपूर्ण प्रबन्धकीय कार्य है।'' इस कथन की व्याख्या कीजिए।

"Staffing is an Important Managerial Function of the Libraries." Explain this statement in detail.

उत्तर—एक बार जब पुस्तकालय स्थापित कर दिया जाता है तथा तदनुरूप एक उपयुक्त संगठन-रचना विकसित कर ली जाती है तो प्रबन्ध का अगला कार्य स्टाफिंग या नियुक्तियाँ करना होता है। प्रारम्भ में स्टाफिंग संगठन-संरचना कार्य में सम्मिलित की जाती थी परन्तु अब यह प्रबन्ध का एक पृथक् कार्य माना जाने लगा है। वास्तव में पुस्तकालयों के बढ़ते हुये आकार, टेक्नोलोजी के विकास एवं मानवीय व्यवहार में बढ़ती हुई जटिलताओं ने स्टाफिंग कार्य को प्रबन्ध का एक महत्वपूर्ण कार्य बना दिया है।

स्टाफिंग की परिभाषा
(DEFINITION OF STAFFING)

कूण्ट्ज एवं ओ' डोनेल के अनुसार, "स्टाफिंग से आशय संगठन-संरचना के ऐसे प्रबन्ध से है जिसमें कर्मचारियों के उपयुक्त एवं प्रभावी चयन, मूल्यांकन तथा विकास द्वारा उन्हें संगठन में उचित भूमिकायें निभाने योग्य बनाया जाता है।"

थियो हैमन के अनुसार, "स्टाफिंग अधीनस्थ प्रबन्धकों की भर्ती, चयन, विकास, प्रशिक्षण एवं क्षतिपूर्ति से सम्बन्ध रखता है।"

गैरी डैसलर के अनुसार, "स्टाफिंग के अन्तर्गत कर्मचारी की भर्ती, चयन, प्रशिक्षण, मूल्यांकन एवं विकास सम्मिलित किये जाते हैं तथा यह प्रबन्ध का एक अति महत्वपूर्ण कार्य है।

स्टाफिंग की प्रकृति
(NATURE OF STAFFING)

स्टाफिंग का कार्य प्रबन्ध का एक स्वतंत्र एवं महत्वपूर्ण कार्य है, इस सम्बन्ध में निम्न तर्क दिये जा सकते हैं—

(1) संगठन के अन्तर्गत विभिन्न प्रबन्धकों की भूमिका की सरंचना प्रस्तुत की जाती है, परन्तु स्टाफिंग के अन्तर्गत आवश्कतानुसार विभिन्न भूमिकायें योग्यतम व्यक्तियों को सौंपी जाती हैं तथा उन्हें संगठन में उपयुक्त पदनाम (Position) प्रदान किया जाता है।

(2) स्टाफिंग कार्य को संगठन से भिन्नता प्रदान करके कर्मचारी के चयन, मूल्यांकन तथा प्रबन्धकीय विकास आदि में मानवीय तत्वों तथा मूल्यों पर अधिक जोर देना सम्भव होता है।

(3) स्टाफिंग के क्षेत्र में हुए शोध कार्य द्वारा इसके नवीन सिद्धान्त विकसित हो रहे हैं, तथा ज्ञान एवं अनुभव में भी वृद्धि हो रही है।

(4) स्टाफिंग कार्य को संगठन से पृथक् किये जाने पर ही प्रबन्धक अब अपने विभागों में कुशल कर्मचारियों की नियुक्ति कर विभिन्न पदों को भरना अपनी जिम्मेदारी मानने लगे हैं।

इस प्रकार आधुनिक पुस्तकालयों में स्टाफिंग कार्य संगठन से भिन्न प्रबन्धकीय कार्य माना जाने लगा है। परन्तु यह संगठन से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ समझा जाता है, जिसमें संगठन-संरचना में निर्धारित विभिन्न पदों पर योग्य प्रबन्धकों को उपयुक्त भूमिकायें निभाने के लिये नियुक्त किया जाता है एवं आवश्यकतानुसार प्रशिक्षण एवं पारिश्रमिक प्रदान किया जा सकता है।

स्टाफिंग के कार्य अथवा प्रक्रिया
(FUNCTIONS OR PROCESS OF STAFFING)

स्टाफिंग प्रक्रिया के अन्तर्गत निम्न क्रमिक कदम उठाये जाते हैं, जिन्हें स्टाफिंग के कार्य कहा जाता है। चूँकि ये कदम एक के बाद एक उठाये जाते हैं, अतः इसे स्टाफिंग प्रक्रिया के रूप में भी जाना जाता है—

(1) मानव शक्ति नियोजन (Man Power Planning)—पुस्तकालय द्वारा अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा में सर्वप्रथम आवश्यकता मानव शक्ति नियोजन की होती है। इस चरण में यह पूर्वानुमान लगाया जाता है कि आने वाले समय में पुस्तकालय के किस विभाग में कितने एवं किस योग्यता वाले कर्मचारियों की आवश्यकता होगी। इससे पुस्तकालय के शीर्ष प्रबन्ध अधिकारियों को भविष्य में कर्मचारियों की कमी या आधिक्य का आभास हो जाता है एवं पुस्तकालय को कर्मचारियों की उपलब्धता की समस्या से छुटकारा मिल जाता है।

(2) कार्य विश्लेषण (Job Analysis)—कार्य विश्लेषण स्टाफिंग प्रक्रिया का दूसरा कदम है। मानव शक्ति का अनुमान लगाने के बाद विभिन्न कार्यों (Jobs) की प्रकृति का विश्लेषण करना तथा उन्हें पूरा करने के लिये कर्मचारियों की योग्यता का निर्धारण किया जाना स्टाफिंग प्रक्रिया की महत्वपूर्ण गतिविधि है। कार्य विश्लेषण के दो प्रमुख तत्व होते हैं—

(a) कार्य विवरण (Job Description)—पुस्तकालयों में कार्य विवरण के अन्तर्गत निम्न बातों का उल्लेख किया जाता है—

(i) कार्य जो करने होंगे
(ii) पर्यवेक्षण का प्रकार
(iii) अन्य कार्यों से सम्बन्ध
(iv) उपकरण एवं अन्य तकनीकी विधियाँ जिनकी आवश्यकता होगी
(v) भौतिक कार्य की दशायें आदि

इस प्रकार कार्य विवरण के अन्तर्गत मुख्य रूप से कर्मचारी के कर्त्तव्य एवं दायित्वों का उल्लेख किया जाता है।

(b) कार्य विनिर्देश (Job Specification)—पुस्तकालय में विभिन्न कार्य को पूरा करने के लिये न्यूनतम स्वीकार्य मानवीय गुणों का वर्णन कार्य विनिर्देश कहलाता है। कार्य विनिर्देश द्वारा कार्य के लिये आवश्यक तत्वों को स्पष्ट किया जाता है। जैसे—

(i) शैक्षिक स्तर (ii) अनुभव
(iii) व्यक्तित्व (iv) शारीरिक योग्यतायें

अतः कार्य विनिर्देश वे मानक (Standards) हैं, जिन पर आवेदनकर्त्ता का नियुक्ति पूर्व परीक्षण किया जाता है।

(3) भर्ती एवं चयन (Recruitment and Selection)—भर्ती एवं चयन स्टाफिंग प्रक्रिया का तृतीय चरण होता है। भर्ती के अन्तर्गत निर्धारित जॉब के लिये योग्य व्यक्तियों की उपलब्धता सुनिश्चित की जाती है। ऐसे योग्य व्यक्तियों की उपलब्धता पुस्तकालय में कार्यरत कर्मचारियों में से (आन्तरिक स्रोत) तथा अन्य पुस्तकालयों व शिक्षा संस्थाओं आदि से (बाह्य स्रोत) सुनिश्चित की जाती है। इस प्रकार के व्यक्ति ही विभिन्न रिक्तियों (Vacancies) के लिये आवेदन-पत्र संस्था के उच्च अधिकारियों को सौंपते हैं।

इसके पश्चात् आवेदनकर्त्ताओं की लिखित परीक्षा व साक्षात्कार करके विभिन्न रिक्त पदों पर योग्यतम व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है।

(4) प्रशिक्षण एवं विकास (Training and Development)—विभिन्न जॉब के लिये योग्यतम व्यक्तियों का चयन एवं नियुक्ति कर लिये जाने के बाद उन्हें प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है एवं चहुँमुखी विकास का अवसर प्रदान किया जाता है, जिससे वे अपने कार्य को भलीभाँति सम्पन्न करने हेतु दक्षता प्राप्त कर सकें तथा कुशलताओं (Skills) से परिपूर्ण हो सकें। यह स्टाफिंग प्रक्रिया का चतुर्थ चरण है।

(5) निष्पादन मूल्यांकन एवं व्यावसायिक विकास (Performance Appraisal and Professional Development)—यह स्टाफिंग का पंचम व अंतिम चरण है, जिसके अन्तर्गत कर्मचारियों का निष्पादन मूल्यांकन किया जाता है तथा आंकलन किया जाता है कि एक कर्मचारी की व्यावसायिक प्राथमिकताओं एवं पुस्तकालय की आवश्यकताओं में कितना सामंजस्य है तथा यह व्यक्ति जॉब के लिये उपयुक्त बना रहेगा या नहीं।

उपर्युक्त स्टाफिंग की प्रक्रिया को निम्न चार्ट द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है—

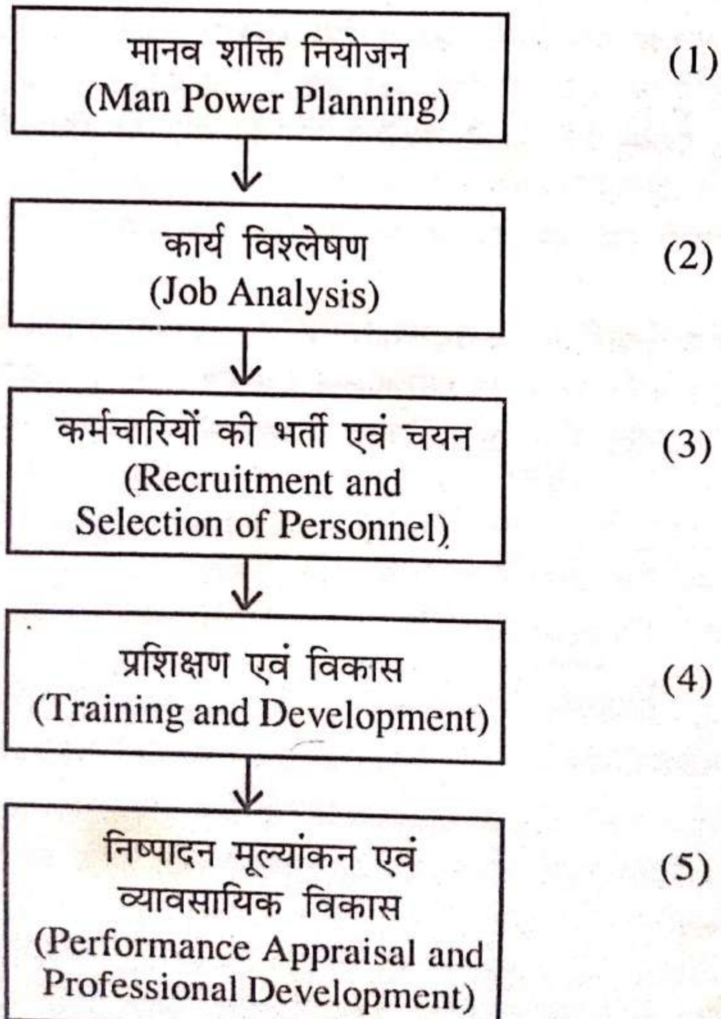

स्टाफिंग प्रक्रिया

स्टाफिंग का महत्व एवं लाभ
(SIGNIFICANCE AND MERITS OF STAFFING)

स्टाफिंग प्रबन्धकीय कार्यों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य होता है। यदि पुस्तकालयों में स्टाफिंग दोषपूर्ण होती है तो इस स्थिति में पुस्तकालय अपने उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं कर पाता है, अतः कुशल स्टाफिंग के लिये प्रत्येक कार्य के लिये उपयुक्त व्यक्ति का चुनाव एवं अभिप्रेरणा अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है।

चूँकि स्टाफिंग पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों को मानव शक्ति प्रदान करती है, अतः प्रभावी स्टाफिंग के निम्न लाभ हैं—

(1) योग्य कर्मचारियों की उपलब्धता (Availability of Competent Personnel)—स्टाफिंग कार्य विभिन्न आन्तरिक तथा बाह्य स्रोतों से उपक्रम पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों को आवश्यक कर्मचारियों की उपलब्धता को सुनिश्चित करता है, इसे भर्ती के नाम से जाना जाता है।

(2) सही कार्य पर सही व्यक्ति (Right Person on the Right Job)—स्टाफिंग कार्य वैज्ञानिक प्रणाली द्वारा किया जाता है, अतः पुस्तकालय के प्रत्येक कार्य-स्थल पर योग्यतम एवं कुशल व्यक्ति के चयन तथा नियुक्ति में सहायक होता है।

(3) मानवीय संसाधनों का सर्वोत्तम प्रयोग (Best Utilisation of Human Resources)—पुस्तकालय के वित्तीय संसाधन सीमित होते हैं, अतः स्टाफिंग प्रक्रिया द्वारा मानवीय संसाधनों का सर्वोत्तम प्रयोग किया जा सकता है।

(4) आधुनिक तकनीकी का प्रयोग सम्भव (Use of Modern Technology Possible)—आधुनिक युग तकनीकी का युग है। आजकल पुस्तकालयों का स्वचालीकरण (Automation) किया जा रहा है, जिससे पुस्तकालयों की सेवाओं को अद्यतन (Up-to-date) एवं कुशल बनाया जा सके। आधुनिक समय में साहित्यिक विस्फोट को दृष्टिगत रखते हुये स्टाफिंग प्रक्रिया द्वारा पुस्तकालयों में आधुनिक एवं नवीन तकनीकियों का प्रयोग सम्भव हो सका है।

(5) उच्च कर्मचारी मनोबल (High Employee Morale)—स्टाफिंग प्रक्रिया में कार्य विश्लेषण के द्वारा कर्मचारियों का पारिश्रमिक एवं निष्पादन मूल्यांकन सम्भव होता है जिससे कर्मचारियों का मनोबल ऊँचा रहता है तथा वे अधिक कार्यकुशल बनते हैं।

8

उद्देश्य द्वारा प्रबन्ध

(Management by Objectives)

प्रश्न 1. उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध की अवधारणा, विशेषतायें एवं प्रक्रिया के चरणों का संक्षेप में वर्णन कीजिए। एक प्रबन्धक द्वारा किसी संस्था में इसका कैसे सहयोग किया जाता है ?

Describe in brief the concept, characteristics and basic steps of Management by Objective procedure. How it is used by a manager in an Organisation ?

उत्तर—

उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध
(MANAGEMENT BY OBJECTIVE OR MANAGEMENT BY GOALS)

प्रत्येक मानवीय क्रिया का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। इन उद्देश्यों को हम विभिन्न नामों, जैसे—उद्देश्य (Objectives), निमित्त (Ends), प्रयोजन (Purpose), मिशन (Mission), लक्ष्य (Target) आदि से जानते हैं अथवा पुकारते हैं। किसी भी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व उद्देश्यों का निर्धारण उतना ही आवश्यक होता है जितना कि यात्रा प्रारम्भ करने से पहले गन्तव्य (Destination) का निर्धारण किया जाना। पुस्तकालय में प्रबन्ध का एक निश्चित उद्देश्य होता है जिसके सफलतम संचालन के लिये विभिन्न प्रबन्धन की तकनीकों का उपयोग किया जाता है। पूर्व में प्रबन्ध की सामान्य तकनीकों द्वारा ही पुस्तकालयों का संचालन उचित प्रकार से हो जाता था परन्तु जैसे-जैसे पुस्तकालयों का क्षेत्र विस्तृत होता गया, पुस्तकालय में प्रबन्धन की समस्या भी बढ़ती गई; जैसे—अत्यधिक मात्रा में साहित्य उत्पादन, पाठकों की बढ़ती हुयी संख्या, पुस्तकालय कर्मचारियों की बढ़ती हुयी संख्या, पाठकों की सूचना आवश्यकतायें, नवीन प्रणालियों का प्रयोग आदि। इस सभी समस्याओं पर नियन्त्रण पाने के लिये प्रबन्धशास्त्रियों ने विभिन्न तकनीकियों का विकास एवं प्रयोग किया। प्रबन्ध के क्षेत्र में प्रयोग में आने वाली आधुनिकतम तकनीकियों में से एक तकनीक है—उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध। इस तकनीक को एम. बी. ओ. के नाम से भी जाना जाता है।

उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध : अर्थ एवं परिभाषायें
(MANAGEMENT BY OBJECTIVES : MEANING AND DEFINITIONS)

उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध की तकनीक के विकास का जनक **पीटर एफ. ड्रकर** को माना जाता है। बाद में इस अवधारणा को विकसित करने में **जॉर्ज एस. ओडिओर्न** का महत्वपूर्ण योगदान रहा।

पीटर एफ. ड्रकर के द्वारा अपनी पुस्तक (Practice of Management) में उद्देश्य निहित प्रबन्ध को स्पष्ट करते हुआ लिखा है कि "प्रत्येक व्यावसायिक उपक्रम को एक ही समूह (True Team) का गठन करना चाहिए और वैयक्तिक प्रयासों को सामूहिक प्रयासों से

जोड़ देना चाहिए। उपक्रम के प्रत्येक सदस्य का योगदान भिन्न-भिन्न हो सकता है परन्तु उन सभी का योगदान सामान्य लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में ही होना चाहिए।" इस सम्बन्ध में ड्रकर द्वारा वर्णित पत्थर काटने वाले तीन व्यक्तियों की कहानी बड़ी ही सटीक प्रतीत होती है—

"एक गिरजाघर के निर्माण में तीन व्यक्ति पत्थर काटने का कार्य कर रहे थे। जब उनसे यह प्रश्न पूछा गया कि क्या कर रहे हैं तो पहले ने उत्तर दिया कि मैं रोजी-रोटी कमा रहा हूँ; दूसरे ने कहा कि मैं पत्थर काटने का सर्वोत्तम कार्य कर रहा हूँ तथा तीसरे ने उत्तर दिया कि मैं गिरजाघर का निर्माण कर रहा हूँ।" वास्तव में तीसरा व्यक्ति उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध की मूल भावना का प्रतीक है, जो अपने कार्य में संस्था के लक्ष्यों को देखता है।

पीटर एफ. ड्रकर के अनुसार, "उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध एक प्रणाली है, जिसमें प्रबन्धक एवं सम्पूर्ण प्रतिष्ठान, दोनों की कार्यकुशलता में सुधार के लिये विभाग तथा प्रत्येक व्यक्तिगत प्रबन्धक के स्तर पर उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है।"

हेरोल्ड कूण्ट्ज के अनुसार, "उद्देश्य द्वारा प्रबन्ध साधारण रूप में ऐसा सामान्य विवेक है, जो स्वयं को प्रबन्धित करने के उद्देश्य के रूप में प्रतिबिम्बित होता है।"

उपरोक्त परिभाषाओं से निष्कर्ष प्राप्त होता है कि उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध ऐसी प्रबन्ध प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत किसी संस्था में कार्यरत प्रबन्धक एवं अधीनस्थ दोनों मिलकर सामान्य उद्देश्यों के अनुरूप विभिन्न क्रियाओं के उद्देश्यों का निर्धारण करते हैं और तत्पश्चात् उनकी प्राप्ति हेतु प्रबन्ध क्रियाओं का संचालन करते हैं ताकि समस्त उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सके।

उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध की विशेषतायें अथवा लक्षण
(CHARACTERISTICS OF MANAGEMENT BY OBJECTIVES OR MANAGEMENT BY OBJECTIVES)

उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध की निम्नलिखित विशेषतायें अथवा लक्षण होते हैं—

(1) निष्पादन स्तर (Performance Standard)—प्रत्येक संस्था के प्रमुख का निष्पादन स्तर इस प्रकार से निश्चित किया जाता है कि वह संस्था के मूल उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक है।

(2) निष्पादन मूल्यांकन (Performance Appraisal)—इसमें प्रत्येक प्रबन्धक के निष्पादन का मूल्यांकन उसके लिये निर्धारित लक्ष्यों के सन्दर्भ में किया जाता है।

(3) वांछित उद्देश्य अथवा परिणाम (Desired Objectives or Result)—संस्था के द्वारा प्रबन्धक एवं प्रत्येक कर्मचारी दोनों के उद्देश्यों का निर्धारण कर दिया जाता है तथा उनकी एक विस्तृत परिभाषा दी जाती है।

(4) नियन्त्रण सूचना (Control Information)—नियन्त्रण की सूचना प्रत्येक संस्था के प्रमुख के पास सही एवं उचित समय पर पहुँचती रहनी चाहिए, ताकि वह अपने निर्णयों में सुधार करने का निरन्तर प्रयत्न करता रहे। इस कार्य के लिये स्वस्थ संदेशवाहन की प्रणाली का होना आवश्यक है।

(5) टीम की भावना (Team Spirit)—संस्था के लक्ष्यों को टीम भावना के तहत प्राप्त किया जाता है। यह सहयोग, सहकारी प्रयास एवं टीम की भावना पर बल देता है। एम. बी. ओ. का प्रमुख उद्देश्य कर्मचारी अपेक्षाओं एवं प्रबन्धकीय व्यवहारों के मध्य विद्यमान खाई को पाटकर समन्वय स्थापित करता है।

(6) अभिप्रेरणा (Motivation)—पुस्तकालय कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने के उद्देश्य से यह तकनीक अति उत्तम है। इस प्रकार से यह तकनीक सामूहिक प्रयासों से लक्ष्य-प्राप्ति की ओर अभिप्रेरित करता है।

उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध की प्रक्रिया के चरण अथवा सोपान (PROCEDURE OR STEPS IN MANAGEMENT BY OBJECTIVES APPROACH)

पुस्तकालयों की दृष्टि से उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध के विभिन्न रूप हो सकते हैं, यह एक सामान्य प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत निम्नलिखित चरण सम्मिलित किये जाते हैं—

(1) पुस्तकालय के कुल लक्ष्यों को परिभाषित एवं निर्धारित करना (To Define and Setting the Overall Corporate Objectives of Library)—पुस्तकालयों में उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध पद्धति के अन्तर्गत उठाया जाने वाला यह पहला कदम है। इसमें पुस्तकालयों के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को व्यापक रूप से परिभाषित किया जाता है। ये सभी उद्देश्य एवं लक्ष्य व्यापक, सामान्य, दीर्घकालिक एवं अल्पकालीन होने चाहिए। अतः पुस्तकालय के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को स्पष्ट रूप से निर्धारित किया जाना चाहिए; जैसे—

(i) पुस्तकालय किस प्रकार के उपयोगकर्त्ताओं (Users) की सेवायें प्रदान करेगा,
(ii) पुस्तकालय द्वारा कौन-कौन-सी सेवायें उपलब्ध कराई जायेंगी,
(iii) पैतृक संस्था के उद्देश्यों का निर्धारण उच्च प्रबन्ध द्वारा किया जाता है। लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का निर्धारण करने के पश्चात् इनकी जानकारी तुरन्त संगठन के प्रत्येक सदस्य को करा दी जानी चाहिए।

उपरोक्त लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का निर्धारण उच्च प्रबन्धन द्वारा किया जाता है। लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का निर्धारण करने के पश्चात् इनकी जानकारी तुरन्त संगठन के प्रत्येक सदस्य को करा दी जानी चाहिए।

(2) प्रत्येक इकाई के लिये उपलक्ष्य (Sub-goals for Each Unit)—संस्था के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के निर्धारण के पश्चात् उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध विधि के अन्तर्गत उठाया जाने वाला दूसरा कदम है। इसके अन्तर्गत संस्था की प्रत्येक इकाई एवं उप-इकाई के लिये अल्पकालीन लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है, जिससे प्रत्येक खण्ड (Division) एवं विभाग (Department) से यह ज्ञात हो जाता है कि उक्त निर्धारित अवधि में क्या प्राप्त किया जाना है। इन उपलक्ष्यों का निर्धारण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि वे संस्था के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध हो सकें। उदाहरण के लिये—

(i) एक वर्ष में कितने शोधार्थियों को सन्दर्भ-सेवा प्रदान की जानी है,
(ii) परिसंचरण विभाग (Circulation Department) द्वारा कितनी पुस्तकें एक माह या तीन माह में उधार (Lend) की जानी हैं,
(iii) कितने शोधार्थियों, विषय विशेषज्ञों एवं वैज्ञानिकों को एक सप्ताह में CAS एवं SDI सेवायें प्रदान की जानी हैं।

(3) वैयक्तिक निष्पादन मानदण्डों का निर्धारण (Establishment of Performance Standard for Individuals)—उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध में इसे कार्य-योजना (Action Planning) के नाम से भी जाना जाता है। यह इस पद्धति का तीसरा कदम है। चालू वर्ष में विभागीय लक्ष्य निर्धारित किये जाने के पश्चात् विभाग के विभिन्न व्यक्तियों के लिये उनकी परामर्श एवं सहमति से पृथक्-पृथक् लक्ष्यों का निर्धारण किया जाता है।

ये लक्ष्य स्पष्ट एवं संक्षिप्त होने चाहिए। कर्मचारियों की सामर्थ्य के अनुसार ही लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का निर्धारण किया जाना चाहिए, साथ ही लक्ष्य ऐसे होने चाहिए जोकि रुचिकर एवं चुनौतीपूर्ण हों और व्यक्तियों को कार्य करने के लिये अभिप्रेरित कर सकें। उदाहरणार्थ—

सन्दर्भ विभाग के एक कर्मचारी द्वारा एक वर्ष में कितने आगन्तुकों को उपयोगकर्त्ता शिक्षण (User Education) प्रदान की जानी है। यह कार्य रुचिकर एवं चुनौतीपूर्ण भी है।

(4) प्राप्त परिणामों का मूल्यांकन (Appraisal of Result Achieved)—प्राप्त परिणामों का मूल्यांकन करना उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध प्रक्रिया का चौथा चरण है। इसके अन्तर्गत स्थापित उद्देश्यों एवं निष्पादन मापदण्डों (Performance Standards) से प्राप्त परिणामों की तुलना एवं मूल्यांकन कार्य किया जाता है कि लक्ष्यों के प्रत्येक स्तर पर संस्था को किस सीमा तक सफलता प्राप्त हुई है।

यह मूल्यांकन कार्य वर्ष के मध्य में कई बार अथवा एक निश्चित समय (तिमाही, छमाही आदि) बाद भी किया जा सकता है। इसके लिये सामयिक सभाओं (Periodic Meetings) का आयोजन किया जाता है। इस प्रक्रिया में लक्ष्यों एवं मापदण्डों में आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन भी किया जा सकता है।

(5) पुनरीक्षण एवं नियन्त्रण (Reviews and Control)—पुनरीक्षण एवं नियंत्रण कार्य एम. बी. ओ. पद्धति का पाँचवाँ एवं अंतिम चरण है। इस चरण के अन्तर्गत सर्वोच्च प्रबन्ध विभिन्न विभागों से प्राप्त परिणामों के आधार पर कार्यक्रम का पुनरीक्षण करता है, एवं जिन विभागों के परिणाम असंतोषजनक रहे हैं, उनके लिये सुधारात्मक कदम उठाया जाता है। इस कार्य में पुस्तकालय कर्मचारियों को उपयुक्त प्रशिक्षण प्रदान करना, कर्मचारियों का कार्य परिवर्तन करना तथा संगठनात्मक परिवर्तन करना सम्मिलित है।

ल्यूथांस (Luthans) ने अपनी पुस्तक Organisation Behaviour में उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध (M.B.O.) के विभिन्न चरणों को निम्न रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित किया है—

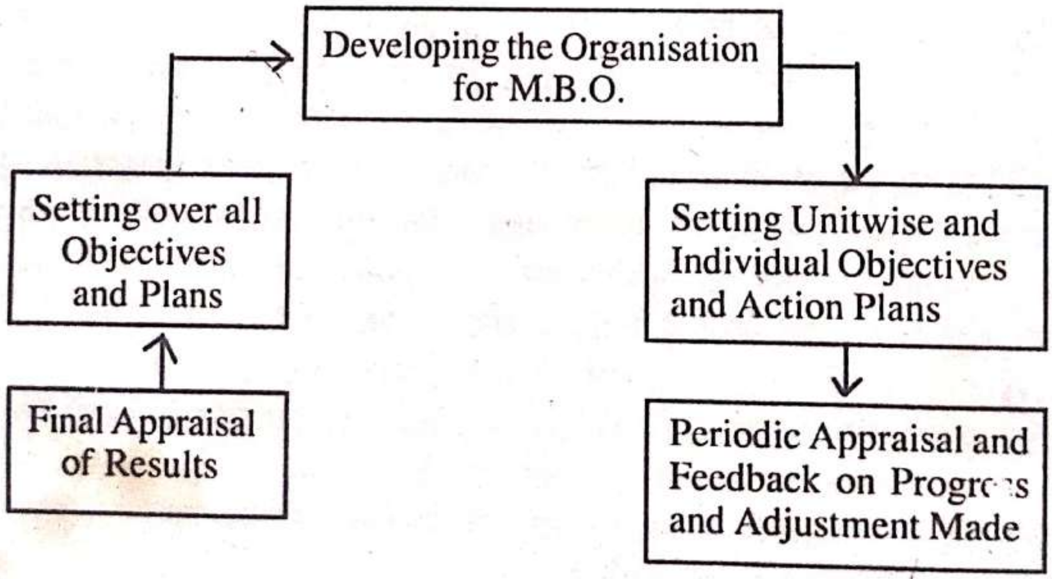

उद्देश्य द्वारा प्रबन्ध के लाभ अथवा महत्व
(BENEFITS OR IMPORTANCE OF MANAGEMENT BY OBJECTIVES)

आधुनिक पुस्तकालयों में एम. बी. ओ. का तेजी से प्रचलन इस बात को सिद्ध करता है कि पुस्तकालयों के लिये इसकी उपयोगिता अत्यन्त महत्वपूर्ण है, जिसे निम्न रूपों में देखा जा सकता है—

(1) कुशल निष्पादन (Efficient Performance)—इस विधि के उपयोग किये जाने से पुस्तकालयों में प्रबन्धकीय निष्पादन में सुधार होता है, जिससे उनकी समस्त क्रियायें लक्ष्यों एवं उद्देश्यों पर आधारित होती हैं।

(2) उच्च मनोबल (High Marale)—उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध विधि पुस्तकालय अधिकारियों एवं कर्मचारियों के मनोबल को ऊँचा उठाती है तथा उनमें उद्देश्यों के प्रति समझ उत्पन्न करती है।

(3) मानवीय संसाधनों का सदुपयोग (Better Utilisation of Human Resources)—इस पद्धति का उपयोग संस्था द्वारा किये जाने से मानवीय संसाधनों का अपेक्षाकृत अच्छा उपयोग सम्भव होता है, क्योंकि प्रत्येक कर्मचारी अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये प्रयासरत रहता है।

(4) अभिप्रेरणा (Motivation)—पुस्तकालय कर्मचारियों को कार्य के प्रति अभिप्रेरित करने से उनकी कार्यकुशलता एवं कार्यक्षमता बढ़ती है क्योंकि कार्य करने की अभिप्रेरणा प्रबन्धकों से मिलती रहती है।

(5) समन्वय (Co-ordination)—M.B.O. पद्धति पुस्तकालयों में लागू करने से पुस्तकालय अधिकारियों एवं कर्मचारियों के मध्य समन्वय की भावना का विकास होता है, जिसके फलस्वरूप पुस्तकालय पाठकों को उत्तम सेवायें प्रदान करने में समर्थ होता है एवं उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है।

(6) नियन्त्रण (Control)—उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध विधि के अन्तर्गत वास्तविक निष्पादन की तुलना पूर्व निर्धारित उद्देश्यों से की जाती है, जिसके परिणामस्वरूप नियन्त्रण का कार्य सरल हो जाता है। उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध बाहरी नियन्त्रण की तुलना में स्वतः नियन्त्रण को अधिक महत्व प्रदान करता है। **पीटर एफ. ड्रकर** के अनुसार स्वतः नियन्त्रण (Self-control) उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध दर्शन का एक अनिवार्य अंग है।

उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध की सीमायें/आलोचनायें
(LIMITATIONS/CRITICISM OF MANAGEMENT BY OBJECTIVES)

यद्यपि पुस्तकालयों में उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध अवधारणा लागू करने के विभिन्न लाभ हैं तथापि यह आलोचनाओं से परे नहीं हैं, जो इस कार्यक्रम को असफल बनाती हैं—

(1) जब सर्वोच्च प्रबन्ध द्वारा इस कार्य में अनेक कारणों से कोई सहयोग प्राप्त नहीं होता है तो इसकी उपयोगिता तथा क्रियान्वयन में कठिनाई उत्पन्न होने लगती है।

(2) कभी-कभी एम. बी. ओ. कार्यक्रम को लागू करते समय विभागों एवं कर्मचारियों पर लक्ष्य थोप दिये जाते हैं। यह स्थिति उस समय उत्पन्न होती है जब विभागाध्यक्षों एवं कर्मचारियों से परामर्श एवं सहमति से लक्ष्यों का निर्धारण नहीं किया जाता है।

(3) कभी-कभी जल्दबाजी में लक्ष्यों का निर्धारण करना, मूल्यांकन कार्य उचित ढंग से न किया जाना, मीटिंग जल्दी-जल्दी न करना आदि भी इस कार्यक्रम को असफल बना देते हैं।

(4) कर्मचारियों द्वारा सफलतापूर्वक परिणाम प्राप्त कर लेने के पश्चात् उनके अनुरूप प्रतिफल या पुरस्कार न दिया जाना भी कार्यक्रम को असफल बनाता है।

(5) कर्मचारियों के मध्य प्रशिक्षण की कमी से भी M.B.O. को संस्था में लागू करना काफी कठिनाई भरा कार्य होता है।

उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध को प्रभावी बनाने के लिये सुझाव
(SUGGESTION FOR MAKING MANAGEMENT BY OBJECTIVES EFFECTIVE)

उद्देश्यों द्वारा प्रबन्ध को अधिक प्रभावी बनाने के लिये निम्नलिखित सुझाव कार्यकारी सिद्ध हो सकते हैं—

(1) उद्देश्य सरल एवं स्पष्ट रूप से परिभाषित होने चाहिए।
(2) उद्देश्य वास्तविक एवं उपलब्ध करने योग्य होने चाहिए।
(3) प्रत्येक उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उचित समय अवधि का निर्धारण किया जाना चाहिए।
(4) उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का निर्धारण पुस्तकालय अधीनस्थों एवं विभागाध्यक्षों के मध्य संयुक्त परामर्श द्वारा निर्धारित किये जाने आवश्यक हैं।
(5) उद्देश्यों का निर्धारण वर्तमान परिस्थितियों, कर्मचारी की कार्यक्षमता एवं योग्यता देखकर किया जाना आवश्यक है।
(6) उद्देश्य प्रेरणात्मक एवं रुचिकर होने चाहिए।
(7) संस्था के प्रत्येक कर्मचारी का कार्य अलग-अलग होना चाहिए।
(8) प्रशासनिक अधिकारियों का अधिकांश समय कार्यवाही उन्मुख कार्यों में लगाना चाहिए न कि उद्देश्योन्मुख कार्यों में।
(9) सर्वोच्च प्रबन्ध का सहयोग सुनिश्चित एवं समय-समय पर प्राप्त होना आवश्यक है।
(10) परिस्थितियों के अनुसार लक्ष्यों में परिवर्तन किया जाना चाहिए।

प्रश्न 2. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये—
(अ) अपवाद द्वारा प्रबन्ध,
(ब) प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्व।
Write short notes on the following—
(a) Management by Exceptions (M.B.E.)
(b) Social Responsibility of Management.

उत्तर—

(अ) अपवाद द्वारा प्रबन्ध
(MANAGEMENT BY EXCEPTIONS)

अपवाद द्वारा प्रबन्ध (M.B.E.) अवधारणा को उद्देश्य द्वारा प्रबन्ध (M.B.O.) अवधारणा के पूरक के रूप में प्रयोग किया जा सकता है क्योंकि जहाँ 'उद्देश्य द्वारा प्रबन्ध' में प्रबन्धकों का मुख्य ध्यान उद्देश्यों की प्राप्ति पर केन्द्रित रहता है वहीं दूसरी ओर 'अपवाद द्वारा प्रबन्ध' उच्च प्रबन्धकों के मूल्यवान समय को उपक्रम की अपवादस्वरूप प्रमुख समस्याओं के समाधान में लगाया जाता है।

अपवाद द्वारा प्रबन्ध इस बात पर जोर देता है कि पुस्तकालयों में पुनरावृत्ति वाले निर्णय साधारणतया प्रथम स्तरीय अधिकारियों के द्वारा लिये जाते हैं। प्रत्येक अधिकारी अपने अधीनस्थों पर एक निश्चित सीमा तक भारार्पित कर सकता है जहाँ तक उसको अधिकार सौंपे गये हैं। पुस्तकालय के उच्च अधिकारियों (मुख्य पुस्तकालयाध्यक्ष, पुस्तकालय प्रभारी) के पास समय का अभाव होता है अत: उनके समय का सदुपयोग होना आवश्यक है। अत: मध्यम एवं उच्च-स्तरीय प्रबन्धकों को केवल वे कार्य एवं निर्णय सौंपे जाने चाहिए जो अपवादस्वरूप हैं, अर्थात् असाधारण प्रकृति के हैं। इस प्रकार जब पुस्तकालयों में कार्य लक्ष्यों के अनुरूप चल रहा हो या उसमें थोड़ा-सा ही विचलन है तब तक प्रथम-स्तरीय प्रबन्ध ही निर्णय ले सकता है। मध्यम-स्तरीय या उच्च-स्तरीय प्रबन्ध का समय और ध्यान उस ओर तभी आकर्षित करना चाहिए जब परिणाम लक्ष्यों से काफी पीछे रह गये हों तथा तुरन्त कारगर उपायों की आवश्यकता हो।

अत: अपवाद द्वारा प्रबन्ध सिद्धान्त यह बताता है कि मानक से काफी विचलन हो जाने अथवा मानक के अपवाद उत्पन्न हो जाने पर ही पुस्तकालय के शीर्ष प्रबन्धकों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाना चाहिए अन्यथा नहीं। उदाहरण के लिये, पुस्तकालय के सन्दर्भ विभाग के लिये यह मानक निर्धारित किया गया कि एक माह में 50 उपयोगकर्त्ताओं (Users) को सन्दर्भ सेवायें प्रदान की जानी चाहिए जिसमें 5 इकाई का विचलन हो सकता है। यदि सन्दर्भ विभाग द्वारा 6 इकाई तक विचलन हो रहा है तो सम्बन्धित उपायों की खोज प्रथम-स्तरीय प्रबन्ध तंत्र को करनी चाहिये परन्तु उपयोगकर्त्ताओं की संख्या में 7 से अधिक की कमी हो रही हो तो उस स्थिति में शीर्ष प्रबन्ध तंत्र का ध्यान आकर्षित किया जाना आवश्यक है। इससे उच्च प्रबन्ध अपना समय महत्वपूर्ण मामलों को सुलझाने पर लगा सकता है। यह सिद्धान्त इस बात पर जोर देता है कि जब तक निष्पादन निर्धारित मानकों की परिधि में है तब तक नियंत्रण प्रतिवेदन एवं चार्ट भी उच्च प्रबन्ध के सम्मुख रखे जाने की आवश्यकता नहीं है, ताकि शीर्ष प्रबन्ध अपना ध्यान अन्य विचारणीय मामलों पर केन्द्रित कर सके।

(ब) प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्व (SOCIAL RESPONSIBILITY OF MANAGEMENT)

आधुनिक युग में प्रबन्ध न केवल अपने स्वामी के लिये उत्तरदायी है बल्कि समूचे समाज के प्रति उत्तरदायी है। पुस्तकालय समाज की वृद्धि एवं विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। इस उद्देश्य से पुस्तकालय की प्रबन्ध गतिविधियों का समाज के प्रति उत्तरदायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है। पुस्तकालय राष्ट्र, समाज, उपयोगकर्त्ता एवं कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायी होता है अत: पुस्तकालय में प्रबन्ध को इस प्रकार लागू किया जाता है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को इसका अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके।

पीटर एफ. ड्रकर के अनुसार, ''प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्व उपक्रम जिसका कि वह अंग है, और समाज जिसका कि उपक्रम अंग है, दोनों के प्रति होता है।'' पुस्तकालय विज्ञान के सन्दर्भ में उपक्रम का अर्थ पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों से लगाया जाता है तो प्रबन्ध का यह सार्वजनिक उत्तरदायित्व है कि वह उन्हीं कार्यों को करे जो समाज के हित में हों। ऐसा करने से वह स्वयं के हित में कार्य करेगा।

पुस्तकालयों के सन्दर्भ में प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्वों का निम्नलिखित प्रकार से वर्णन किया जा सकता है—

(1) समाज के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards the Society)

(2) उपयोगकर्त्ताओं के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Users)

(3) पुस्तकालय कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Library Personnel)

(4) पुस्तकालय का स्वयं के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व (Social Responsibility Towards Themselves)

(5) सरकारों के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Governments)

(1) समाज के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards the Society)—पुस्तकालय सामाजिक संस्था होते हैं जिनका प्रमुख उद्देश्य समाज की सूचना आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है। नागरिकों को उत्तम पुस्तकालय सेवायें प्रदान करने के लिये पुस्तकालयों का प्रबन्धन कुशलतापूर्वक किया जाना चाहिए। पुस्तकालयों की गुणवत्तापूर्ण सेवायें संस्था के उच्च प्रबन्ध पर निर्भर करती हैं। अत: पुस्तकालयों में सेवायें प्रदान करने के

लिये प्रबन्ध इस प्रकार का होना चाहिए जिससे पुस्तकालय समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह भलीभाँति कर सके।

(2) उपयोगकर्त्ता के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Users)—पुस्तकालय में विभिन्न आयु वर्ग के उपयोगकर्त्ता अपने ज्ञान की आवश्यकता की पूर्ति के लिये आते हैं। इन उपयोगकर्त्ताओं में विद्यार्थी, अध्यापक, वकील, डॉक्टर, व्यवसायी, श्रमिक, महिलायें, बच्चे आदि अपनी रुचि के अनुसार पाठ्य-सामग्री की माँग करते हैं। कुछ पाठक अपनी माँग विषयानुसार, लेखक, पुस्तक के शीर्षक अथवा विभिन्न घटनाओं के अनुसार करते हैं, पुस्तकालय में पाठक की इन अभिगमों (Approaches) की पूर्ति वर्गीकरण एवं सूचीकरण पद्धतियों से की जाती है। यदि पुस्तकालय में उत्तम प्रबन्ध द्वारा कार्यों को सम्पन्न किया जा रहा है तो पाठकों को त्वरित एवं कुशलतापूर्वक सेवायें प्रदान की जा सकती हैं। इसके विपरीत अकुशल प्रबन्ध गतिविधियों की दशा में पुस्तकालय की सेवाओं का स्तर काफी निम्न हो जाता है। अत: कहा जा सकता है कि प्रबन्ध का उपयोगकर्त्ता के प्रति भी महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है।

(3) पुस्तकालय कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Library Personnel)—कुशल प्रबन्ध कर्मचारियों की कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है। पाठकों को उत्तम पुस्तकालयीन सेवा उपलब्ध कराने में कर्मचारियों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। कुशल प्रबन्ध के द्वारा कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने में सहायता प्राप्त होती है, अत: प्रबन्ध द्वारा पुस्तकालय कर्मचारियों के प्रति महत्वपूर्ण उत्तरदायित्वों का निर्वाह किया जाता है।

(4) पुस्तकालय का स्वयं के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व (Social Responsibility Towards Themselves)—पुस्तकालय लाभ कमाने वाली संस्थायें नहीं होती हैं। पुस्तकालयों के लाभ की गणना उसके द्वारा दी जाने वाली सेवाओं एवं पाठकों की संतुष्टि से की जाती है। पुस्तकालयों का स्वयं के प्रति यह उत्तरदायित्व होता है कि वह उन सभी उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता रहे जिसकी प्राप्ति के लिये उसे स्थापित किया गया है। प्रबन्ध की अच्छी नीति अपनाये जाने पर पुस्तकालय अपने स्वयं के प्रति उत्तरदायित्वों का पालन सफलतापूर्वक करने में सक्षम होते हैं।

(5) सरकारों के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Governments)—पुस्तकालयों को केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, विभिन्न पैतृक संस्थाओं आदि से पुस्तकालय के सफलतापूर्वक व्यवस्थापन एवं संचालन के लिये आर्थिक सहायता प्राप्त होती हैं। पुस्तकालय में इस वित्त को खर्च करने के लिये उच्च प्रबन्ध तकनीक का चुनाव किया जाता है, जिससे प्राप्त संसाधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है। अत: प्रबन्ध की उन सभी विधियों एवं तकनीकियों का उपयोग पुस्तकालय के संचालन में किया जाना चाहिए जिससे पुस्तकालय अपने को वित्तीय सहायता प्रदान करने वाली संस्थाओं के प्रति उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सके।

अत: संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रबन्ध के सामाजिक उत्तरदायित्वों में दिन-प्रतिदिन बढ़ोतरी होती जा रही है, इस सन्दर्भ में पुस्तकालयों में प्रबन्ध विधियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

अत: अपवाद द्वारा प्रबन्ध सिद्धान्त यह बताता है कि मानक से काफी विचलन हो जाने अथवा मानक के अपवाद उत्पन्न हो जाने पर ही पुस्तकालय के शीर्ष प्रबन्धकों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाना चाहिए अन्यथा नहीं। उदाहरण के लिये, पुस्तकालय के सन्दर्भ विभाग के लिये यह मानक निर्धारित किया गया कि एक माह में 50 उपयोगकर्त्ताओं (Users) को सन्दर्भ सेवायें प्रदान की ज़ानी चाहिए जिसमें 5 इकाई का विचलन हो सकता है। यदि सन्दर्भ विभाग द्वारा 6 इकाई तक विचलन हो रहा है तो सम्बन्धित उपायों की खोज प्रथम-स्तरीय प्रबन्ध तंत्र को करनी चाहिये परन्तु उपयोगकर्त्ताओं की संख्या में 7 से अधिक की कमी हो रही हो तो उस स्थिति में शीर्ष प्रबन्ध तंत्र का ध्यान आकर्षित किया जाना आवश्यक है। इससे उच्च प्रबन्ध अपना समय महत्वपूर्ण मामलों को सुलझाने पर लगा सकता है। यह सिद्धान्त इस बात पर जोर देता है कि जब तक निष्पादन निर्धारित मानकों की परिधि में है तब तक नियंत्रण प्रतिवेदन एवं चार्ट भी उच्च प्रबन्ध के सम्मुख रखे जाने की आवश्यकता नहीं है, ताकि शीर्ष प्रबन्ध अपना ध्यान अन्य विचारणीय मामलों पर केन्द्रित कर सके।

(ब) प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्व
(SOCIAL RESPONSIBILITY OF MANAGEMENT)

आधुनिक युग में प्रबन्ध न केवल अपने स्वामी के लिये उत्तरदायी है बल्कि समूचे समाज के प्रति उत्तरदायी है। पुस्तकालय समाज की वृद्धि एवं विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। इस उद्देश्य से पुस्तकालय की प्रबन्ध गतिविधियों का समाज के प्रति उत्तरदायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है। पुस्तकालय राष्ट्र, समाज, उपयोगकर्त्ता एवं कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायी होता है अत: पुस्तकालय में प्रबन्ध को इस प्रकार लागू किया जाता है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को इसका अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके।

पीटर एफ. ड्रकर के अनुसार, ''प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्व उपक्रम जिसका कि वह अंग है, और समाज जिसका कि उपक्रम अंग है, दोनों के प्रति होता है।'' पुस्तकालय विज्ञान के सन्दर्भ में उपक्रम का अर्थ पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों से लगाया जाता है तो प्रबन्ध का यह सार्वजनिक उत्तरदायित्व है कि वह उन्हीं कार्यों को करे जो समाज के हित में हों। ऐसा करने से वह स्वयं के हित में कार्य करेगा।

पुस्तकालयों के सन्दर्भ में प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्वों का निम्नलिखित प्रकार से वर्णन किया जा सकता है—

(1) समाज के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards the Society)

(2) उपयोगकर्त्ताओं के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Users)

(3) पुस्तकालय कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Library Personnel)

(4) पुस्तकालय का स्वयं के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व (Social Responsibility Towards Themselves)

(5) सरकारों के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Governments)

(1) समाज के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards the Society)—पुस्तकालय सामाजिक संस्था होते हैं जिनका प्रमुख उद्देश्य समाज की सूचना आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है। नागरिकों को उत्तम पुस्तकालय सेवायें प्रदान करने के लिये पुस्तकालयों का प्रबन्धन कुशलतापूर्वक किया जाना चाहिए। पुस्तकालयों की गुणवत्तापूर्ण सेवायें संस्था के उच्च प्रबन्ध पर निर्भर करती हैं। अत: पुस्तकालयों में सेवायें प्रदान करने के

(1) उद्देश्य सरल एवं स्पष्ट रूप से परिभाषित होने चाहिए।
(2) उद्देश्य वास्तविक एवं उपलब्ध करने योग्य होने चाहिए।
(3) प्रत्येक उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उचित समय अवधि का निर्धारण किया जाना चाहिए।
(4) उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का निर्धारण पुस्तकालय अधीनस्थों एवं विभागाध्यक्षों के मध्य संयुक्त परामर्श द्वारा निर्धारित किये जाने आवश्यक हैं।
(5) उद्देश्यों का निर्धारण वर्तमान परिस्थितियों, कर्मचारी की कार्यक्षमता एवं योग्यता देखकर किया जाना आवश्यक है।
(6) उद्देश्य प्रेरणात्मक एवं रुचिकर होने चाहिए।
(7) संस्था के प्रत्येक कर्मचारी का कार्य अलग-अलग होना चाहिए।
(8) प्रशासनिक अधिकारियों का अधिकांश समय कार्यवाही उन्मुख कार्यों में लगाना चाहिए न कि उद्देश्योन्मुख कार्यों में।
(9) सर्वोच्च प्रबन्ध का सहयोग सुनिश्चित एवं समय-समय पर प्राप्त होना आवश्यक है।
(10) परिस्थितियों के अनुसार लक्ष्यों में परिवर्तन किया जाना चाहिए।

प्रश्न 2. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये—
(अ) अपवाद द्वारा प्रबन्ध,
(ब) प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्व।
Write short notes on the following—
(a) Management by Exceptions (M.B.E.)
(b) Social Responsibility of Management.

उत्तर—

(अ) अपवाद द्वारा प्रबन्ध
(MANAGEMENT BY EXCEPTIONS)

अपवाद द्वारा प्रबन्ध (M.B.E.) अवधारणा को उद्देश्य द्वारा प्रबन्ध (M.B.O.) अवधारणा के पूरक के रूप में प्रयोग किया जा सकता है क्योंकि जहाँ 'उद्देश्य द्वारा प्रबन्ध' में प्रबन्धकों का मुख्य ध्यान उद्देश्यों की प्राप्ति पर केन्द्रित रहता है वहीं दूसरी ओर 'अपवाद द्वारा प्रबन्ध' उच्च प्रबन्धकों के मूल्यवान समय को उपक्रम की अपवादस्वरूप प्रमुख समस्याओं के समाधान में लगाया जाता है।

अपवाद द्वारा प्रबन्ध इस बात पर जोर देता है कि पुस्तकालयों में पुनरावृत्ति वाले निर्णय साधारणतया प्रथम स्तरीय अधिकारियों के द्वारा लिये जाते हैं। प्रत्येक अधिकारी अपने अधीनस्थों पर एक निश्चित सीमा तक भारार्पित कर सकता है जहाँ तक उसको अधिकार सौंपे गये हैं। पुस्तकालय के उच्च अधिकारियों (मुख्य पुस्तकालयाध्यक्ष, पुस्तकालय प्रभारी) के पास समय का अभाव होता है अतः उनके समय का सदुपयोग होना आवश्यक है। अतः मध्यम एवं उच्च-स्तरीय प्रबन्धकों को केवल वे कार्य एवं निर्णय सौंपे जाने चाहिए जो अपवादस्वरूप हैं, अर्थात् असाधारण प्रकृति के हैं। इस प्रकार जब पुस्तकालयों में कार्य लक्ष्यों के अनुरूप चल रहा हो या उसमें थोड़ा-सा ही विचलन है तब तक प्रथम-स्तरीय प्रबन्ध ही निर्णय ले सकता है। मध्यम-स्तरीय या उच्च-स्तरीय प्रबन्ध का समय और ध्यान उस ओर तभी आकर्षित करना चाहिए जब परिणाम लक्ष्यों से काफी पीछे रह गये हों तथा तुरन्त कारगर उपायों की आवश्यकता हो।

अतः अपवाद द्वारा प्रबन्ध सिद्धान्त यह बताता है कि मानक से काफी विचलन हो जाने अथवा मानक के अपवाद उत्पन्न हो जाने पर ही पुस्तकालय के शीर्ष प्रबन्धकों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया जाना चाहिए अन्यथा नहीं। उदाहरण के लिये, पुस्तकालय के सन्दर्भ विभाग के लिये यह मानक निर्धारित किया गया कि एक माह में 50 उपयोगकर्त्ताओं (Users) को सन्दर्भ सेवायें प्रदान की जानी चाहिए जिसमें 5 इकाई का विचलन हो सकता है। यदि सन्दर्भ विभाग द्वारा 6 इकाई तक विचलन हो रहा है तो सम्बन्धित उपायों की खोज प्रथम-स्तरीय प्रबन्ध तंत्र को करनी चाहिये परन्तु उपयोगकर्त्ताओं की संख्या में 7 से अधिक की कमी हो रही हो तो उस स्थिति में शीर्ष प्रबन्ध तंत्र का ध्यान आकर्षित किया जाना आवश्यक है। इससे उच्च प्रबन्ध अपना समय महत्वपूर्ण मामलों को सुलझाने पर लगा सकता है। यह सिद्धान्त इस बात पर जोर देता है कि जब तक निष्पादन निर्धारित मानकों की परिधि में है तब तक नियंत्रण प्रतिवेदन एवं चार्ट भी उच्च प्रबन्ध के सम्मुख रखे जाने की आवश्यकता नहीं है, ताकि शीर्ष प्रबन्ध अपना ध्यान अन्य विचारणीय मामलों पर केन्द्रित कर सके।

(ब) प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्व
(SOCIAL RESPONSIBILITY OF MANAGEMENT)

आधुनिक युग में प्रबन्ध न केवल अपने स्वामी के लिये उत्तरदायी है बल्कि समूचे समाज के प्रति उत्तरदायी है। पुस्तकालय समाज की वृद्धि एवं विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। इस उद्देश्य से पुस्तकालय की प्रबन्ध गतिविधियों का समाज के प्रति उत्तरदायित्व और भी अधिक बढ़ जाता है। पुस्तकालय राष्ट्र, समाज, उपयोगकर्त्ता एवं कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायी होता है अतः पुस्तकालय में प्रबन्ध को इस प्रकार लागू किया जाता है कि समाज के प्रत्येक व्यक्ति को इसका अधिकतम लाभ प्राप्त हो सके।

पीटर एफ. ड्रकर के अनुसार, "प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्व उपक्रम जिसका कि वह अंग है, और समाज जिसका कि उपक्रम अंग है, दोनों के प्रति होता है।" पुस्तकालय विज्ञान के सन्दर्भ में उपक्रम का अर्थ पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों से लगाया जाता है तो प्रबन्ध का यह सार्वजनिक उत्तरदायित्व है कि वह उन्हीं कार्यों को करे जो समाज के हित में हों। ऐसा करने से वह स्वयं के हित में कार्य करेगा।

पुस्तकालयों के सन्दर्भ में प्रबन्ध का सामाजिक उत्तरदायित्वों का निम्नलिखित प्रकार से वर्णन किया जा सकता है—

(1) समाज के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards the Society)

(2) उपयोगकर्त्ताओं के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Users)

(3) पुस्तकालय कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Library Personnel)

(4) पुस्तकालय का स्वयं के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व (Social Responsibility Towards Themselves)

(5) सरकारों के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards Governments)

(1) समाज के प्रति उत्तरदायित्व (Responsibility Towards the Society)—पुस्तकालय सामाजिक संस्था होते हैं जिनका प्रमुख उद्देश्य समाज की सूचना आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है। नागरिकों को उत्तम पुस्तकालय सेवायें प्रदान करने के लिये पुस्तकालयों का प्रबन्धन कुशलतापूर्वक किया जाना चाहिए। पुस्तकालयों की गुणवत्तापूर्ण सेवायें संस्था के उच्च प्रबन्ध पर निर्भर करती हैं। अतः पुस्तकालयों में सेवायें प्रदान करने के

लियें प्रबन्ध इस प्रकार का होना चाहिए जिससे पुस्तकालय समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह भलीभाँति कर सके।

(2) **उपयोगकर्त्ता के प्रति उत्तरदायित्व** (Responsibility Towards Users)—पुस्तकालय में विभिन्न आयु वर्ग के उपयोगकर्त्ता अपने ज्ञान की आवश्यकता की पूर्ति के लिये आते हैं। इन उपयोगकर्त्ताओं में विद्यार्थी, अध्यापक, वकील, डॉक्टर, व्यवसायी, श्रमिक, महिलायें, बच्चे आदि अपनी रुचि के अनुसार पाठ्य-सामग्री की माँग करते हैं। कुछ पाठक अपनी माँग विषयानुसार, लेखक, पुस्तक के शीर्षक अथवा विभिन्न घटनाओं के अनुसार करते हैं, पुस्तकालय में पाठक की इन अभिगमों (Approaches) की पूर्ति वर्गीकरण एवं सूचीकरण पद्धतियों से की जाती है। यदि पुस्तकालय में उत्तम प्रबन्ध द्वारा कार्यों को सम्पन्न किया जा रहा है तो पाठकों को त्वरित एवं कुशलतापूर्वक सेवायें प्रदान की जा सकती हैं। इसके विपरीत अकुशल प्रबन्ध गतिविधियों की दशा में पुस्तकालय की सेवाओं का स्तर काफी निम्न हो जाता है। अतः कहा जा सकता है कि प्रबन्ध का उपयोगकर्त्ता के प्रति भी महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है।

(3) **पुस्तकालय कर्मचारियों के प्रति उत्तरदायित्व** (Responsibility Towards Library Personnel)—कुशल प्रबन्ध कर्मचारियों की कार्यक्षमता एवं कार्यकुशलता को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है। पाठकों को उत्तम पुस्तकालयीन सेवा उपलब्ध कराने में कर्मचारियों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। कुशल प्रबन्ध के द्वारा कर्मचारियों को अभिप्रेरित करने में सहायता प्राप्त होती है, अतः प्रबन्ध द्वारा पुस्तकालय कर्मचारियों के प्रति महत्वपूर्ण उत्तरदायित्वों का निर्वाह किया जाता है।

(4) **पुस्तकालय का स्वयं के प्रति सामाजिक उत्तरदायित्व** (Social Responsibility Towards Themselves)—पुस्तकालय लाभ कमाने वाली संस्थायें नहीं होती हैं। पुस्तकालयों के लाभ की गणना उसके द्वारा दी जाने वाली सेवाओं एवं पाठकों की संतुष्टि से की जाती है। पुस्तकालयों का स्वयं के प्रति यह उत्तरदायित्व होता है कि वह उन सभी उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करता रहे जिसकी प्राप्ति के लिये उसे स्थापित किया गया है। प्रबन्ध की अच्छी नीति अपनाये जाने पर पुस्तकालय अपने स्वयं के प्रति उत्तरदायित्वों का पालन सफलतापूर्वक करने में सक्षम होते हैं।

(5) **सरकारों के प्रति उत्तरदायित्व** (Responsibility Towards Governments)—पुस्तकालयों को केन्द्र सरकार, राज्य सरकार, विभिन्न पैतृक संस्थाओं आदि से पुस्तकालय के सफलतापूर्वक व्यवस्थापन एवं संचालन के लिये आर्थिक सहायता प्राप्त होती हैं। पुस्तकालय में इस वित्त को खर्च करने के लिये उच्च प्रबन्ध तकनीक का चुनाव किया जाता है, जिससे प्राप्त संसाधनों का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है। अतः प्रबन्ध की उन सभी विधियों एवं तकनीकियों का उपयोग पुस्तकालय के संचालन में किया जाना चाहिए जिससे पुस्तकालय अपने को वित्तीय सहायता प्रदान करने वाली संस्थाओं के प्रति उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सके।

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्रबन्ध के सामाजिक उत्तरदायित्वों में दिन-प्रतिदिन बढ़ोतरी होती जा रही है, इस सन्दर्भ में पुस्तकालयों में प्रबन्ध विधियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

10

समन्वय

(Co-Ordination)

प्रश्न 1. समन्वय को परिभाषित कीजिए तथा समन्वय की प्रकृति एवं उद्देश्य बताइये ?

Define Co-ordination. Point out the nature and objectives of Co-ordination ?

उत्तर—

समन्वय
(CO-ORDINATION)

जहाँ कुछ प्रबन्धशास्त्री समन्वय को प्रबन्ध का कार्य मानते हैं, वहीं दूसरी ओर कुछ अन्य इसे प्रबन्ध का सार कहते हैं, परन्तु कहा जैसे भी जाय, यह निश्चित है कि समन्वय प्रबन्ध का अति महत्वपूर्ण भाग है। वास्तव में समन्वय पुस्तकालय के आंतरिक क्रियाकलापों में एकजुटता लाने की प्रक्रिया है। विभिन्न विद्वानों द्वारा समन्वय को निम्न प्रकार परिभाषित किया गया है—

कूण्ट्ज एवं ओ' डोनेल के अनुसार, ''समन्वय प्रबन्ध का सार है, जो निर्धारित समूह लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये व्यक्तिगत प्रयासों में सांमजस्य उत्पन्न करता है।''

हेनरी फेयोल के अनुसार, ''समन्वय एक संस्था की समस्त क्रियाओं में सामंजस्य स्थापित करता है ताकि संस्था का कार्य सुविधाजनक ढंग से एवं सफलतापूर्वक चलता रहे।''

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि समन्वय का आशय उस प्रक्रिया से है जिसके अन्तर्गत एक संस्था में कार्यरत विभिन्न क्रियाओं में आपसी सामंजस्य स्थापित किया जाता है।

समन्वय की प्रकृति तथा उद्देश्य
(NATURE AND PURPOSE OF CO-ORDINATION)

जब दो या दो से अधिक व्यक्ति, समूह या विभाग किसी उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्रयास करते हैं तो समन्वय की आवश्यकता उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिये, पुस्तकालयों में तकनीकी क्रियायें वर्गीकार (Classificationist) एवं सूचीकार (Cataloguer) दोनों के सहयोग से की जाती हैं। वर्गीकरण एवं सूचीकरण क्रियायें एक-दूसरे पर निर्भर करती हैं, अत: इन दोनों विभागों में सहयोग की भावना होना अत्यन्त आवश्यक है। इसी प्रकार पुस्तकालय की अन्य क्रियायें, जैसे—पुस्तक चयन एवं अधिग्रहण, सन्दर्भ विभाग एवं पत्र-पत्रिका विभाग आदि में समन्वय होना अति आवश्यक है।

समन्वय की आवश्यकता का स्तर भिन्न-भिन्न स्थितियों में भिन्न-भिन्न होता है। अत: समन्वय के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए, समन्वय की प्रकृति या विशेषताओं का निरूपण किया जा सकता है।

समन्वय की प्रकृति अथवा लक्षण
(NATURE OR CHARACTERISTICS OF CO-ORDINATION)

समन्वय के निम्न प्रमुख लक्षण कहे जा सकते हैं, जो उसकी प्रकृति का निरूपण करते हैं—

(1) प्रबन्ध का सार (Essence of Management)—समन्वय प्रबन्ध का एक विशिष्ट कार्य न होकर उसका 'सार' है। यह प्रबन्ध के सभी कार्यों में व्याप्त है।

(2) स्वैच्छिक कार्य (Willing Function)—समन्वय प्रबन्ध की स्वेच्छा का परिणाम है। यह अचानक या दबाव द्वारा सृजित नहीं किया जाता है।

(3) उद्देश्य की एकता (Unity of Purpose)—यदि पुस्तकालय एवं कर्मचारियों का उद्देश्य एक हो तो विभिन्न क्रियाओं एवं विभागों में समन्वय बनाना आसान हो जाता हैं।

(4) सतत प्रक्रिया (Continuous Process)—समन्वय एक सतत प्रक्रिया है, जो सम्पूर्ण संस्था में निरन्तर चलती रहती है।

(5) प्रणाली विचारधारा (System Concept)—समन्वय एक प्रणाली विचारधारा है। यह पुस्तकालयों के सामूहिक प्रयासों में समन्वय की प्रणाली को उत्पन्न करता है तथा संगठन संरचना में विभिन्न क्रियाओं के बीच अन्तर-आश्रितता तथा समूह प्रयासों को सुनिश्चित करता है।

समन्वय के सिद्धान्त
(PRINCIPLES OF CO-ORDINATION)

पुस्तकालयों के सन्दर्भ में समन्वय के निम्नलिखित सिद्धान्तों की व्याख्या की जा सकती है—

(1) नियम, लक्ष्य तथा उत्तराधिकार का सिद्धान्त (Principles of Rules, Targets and Hierarchy)—इस सिद्धान्त के अनुसार पुस्तकालय के शीर्ष अधिकारियों द्वारा तकनीक के रूप में नियमों, लक्ष्यों तथा सोपानों पर अत्यधिक जोर दिया जाना चाहिए। ये सभी समन्वय के आधारभूत तत्व हैं। जब इन तकनीकों से समन्वय को प्रभावपूर्ण प्राप्त करने में असुविधा हो तो अन्य तकनीकों को अपनाया जा सकता है।

(2) विभागीय अन्तर-आश्रितता का सिद्धान्त (Principle of Inter-dependence of Departmentalisation)—यह सिद्धान्त बताता है कि संगठनात्मक ढाँचे में अन्तर-आश्रितता जितनी अधिक होती है, समन्वय का कार्य उतना ही कठिन होता है। इसके लिये पुस्तकालय को विभिन्न कार्यों एवं विशिष्टताओं के आधार पर अलग-अलग विभागों में विभाजित कर दिया जाना चाहिए तथा प्रत्येक विभाग हेतु स्वतंत्र विभागाध्यक्ष या प्रमुख नियुक्त किया जाना आवश्यक है।

(3) निरन्तरता का सिद्धान्त (Principle of Continuity)—समन्वय कभी न समाप्त होने वाली प्रक्रिया है, अत: पुस्तकालय के प्रबन्ध अधिकारियों को समन्वय बनाये रखने हेतु सतत प्रयास जारी रखने चाहिए और ये प्रबन्ध के समस्त कार्य नियोजन से नियन्त्रण तक दिखाई देने चाहिए।

समन्वय की विधियाँ
(METHODS OF CO-ORDINATION)

पुस्तकालय में समन्वय प्राप्त करने के लिये पुस्तकालय के शीर्ष अधिकारियों द्वारा विभिन्न तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इनमें निम्न प्रमुख हैं—

(1) लक्ष्य के आधार पर समन्वय (Co-ordination by Targets or Goals)—अधिकांश पुस्तकालयों में अधीनस्थ कर्मचारियों के लिये लक्ष्य निर्धारित कर दिये जाते हैं, जब समस्त कर्मचारी अपने-अपने लक्ष्य प्राप्त करने में लग जाते हैं तब समन्वय की स्थिति उत्पन्न होती है। यदि पुस्तकालय द्वारा वर्षभर में 1,500 वैज्ञानिकों एवं शोध छात्रों को सूचना प्रदान करने का लक्ष्य रखा जाता है तो पत्र-पत्रिका विभाग एवं सन्दर्भ विभाग द्वारा लक्ष्य-प्राप्ति का ध्येय उनमें समन्वय उत्पन्न करना है।

(2) प्रबन्धकीय उत्तराधिकार द्वारा समन्वय (Co-ordination Through Managerial Hierarchy)—इस विधि के अनुसार प्रत्येक अधिकारी के अधीनस्थों की संख्या न्यूनतम होनी चाहिए जिससे उनके मध्य समन्वय बना रहता है। समन्वय की समस्या तब उत्पन्न होती है जब अधीनस्थों की संख्या अधिक हो और उनमें टकराव की स्थिति बन गई हो।

(3) विभागीकरण द्वारा समन्वय (Co-ordination by Departmentalisation)—यदि पुस्तकालयों में कार्यात्मक विभागीकरण प्रणाली अपनाई जाती है तो पुस्तकालय के विभिन्न विभागों जो एक-दूसरे पर अन्तर-आश्रित हैं, उनमें समन्वय बनाये रखना आसान हो जाता है।

(4) समिति द्वारा समन्वय (Co-ordination Through Committee)—बहुधा पुस्तकालयों में अन्तर-विभागीय समितियाँ बनाकर समन्वय का कार्य किया जाता है। इन समितियों में विभिन्न विभागों के प्रतिनिधि होते हैं, जो समय-समय पर विचार विमर्श करते हैं तथा समन्वय हेतु निर्णय लेते हैं।

(5) नियम व क्रियाविधि द्वारा समन्वय (Co-ordination by Rules and Procedure)—पुस्तकालयों में नैत्यिक (Routine) कार्यों के समन्वय के लिये नियम व क्रियाविधि भी उपयोग में लाई जाती है।

समन्वय का महत्व
(SIGNIFICANCE OF CO-ORDINATION)

पुस्तकालयों में समन्वय का अत्यधिक महत्व है जिसका वर्णन निम्न प्रकार से किया जा सकता है—

(1) समन्वय के कारण संस्था में अनेकता में एकता (Unity in Diversity) की भावना का विकास किया जाता है, जिसके द्वारा संगठन को अत्यधिक कार्यकुशल बनाया जाता है।

(2) समन्वय के कारण पुस्तकालयों में एकजुट कार्य (Team Work) भावना का विकास होता है। समन्वय समूह के सभी सदस्य सामान्य उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये एकजुट होकर कार्य करने का आह्वान करते हैं।

(3) इसके द्वारा विभिन्न विभागों के मध्य समन्वय स्थापित किया जाता है, जिससे कि वांछित परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं।

(4) पुस्तकालय दिन-प्रतिदिन विकसित होते जा रहे हैं जिससे कर्मचारियों तथा तकनीकी क्रियाकलापों में बेहताशा वृद्धि होती जा रही है। पुस्तकालयों का बढ़ता हुआ आकार जटिल संरचना एवं दोषपूर्ण सम्प्रेषण को जन्म देता है, ऐसी दशा में पुस्तकालयों के प्रभावपूर्ण कार्य-प्रणाली के लिए समन्वय की आवश्यकता और बढ़ जाती है।

(5) **सिनर्जी प्रभाव** (Synergy Effect)—जब समूह का मिला-जुला सामूहिक योगदान प्रत्येक सदस्य के पृथक्-पृथक् किये जाने वाले योगदान के योग से अधिक होता है तो इसे सिनर्जी लाभ कहा जाता है। समन्वय द्वारा पुस्तकालयों को सिनर्जी लाभ प्राप्त होना सम्भव होता है क्योंकि समन्वय द्वारा वैयक्तिक प्रयास समूह प्रयास में बदल दिये जाते हैं और संगठन की कार्यक्षमता बढ़ जाती है।

है। पृथक-पृथक केन्दों पर पुस्तकालयों की स्थापना करना एवं सभी संसाधन उपलब्ध करना भी एक समस्या है। इन समस्याओं को दृष्टिगत रखते हुए जहाँ तक सम्भव हो सके वहाँ तक संकलन में मुद्रित प्रलेखों के साथ-साथ आधुनिक प्रौद्योगिकी एवं कम्प्यूटर के द्वारा तैयार की गयी सामग्रियों एवं उपकरणों को सम्मिलित करने की आवश्यकता है जिससे मुक्त शिक्षा प्रणाली को प्रोत्साहन मिल सके।

संसाधन सहभागिता एवं नेटवर्किंग (RESOURCE SHARING AND NETWORKING)

प्रश्न—पुस्तकालय नेटवर्क क्या है ? ऐसे नेटवर्क द्वारा दी जाने वाली सेवाओं का विवरण दीजिए।

What is a library network ? Discuss the services provided by such network.

अथवा (Or)

इनाफ्लिबनेट पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

Write short note on INFLIBNET.

अथवा (Or)

इनाफ्लिबनेट और संसाधन सहभागिता की व्याख्या करें।

Discuss INFLIBNET and Resource Sharing.

अथवा (Or)

पुस्तकालयों के बीच संसाधनों की सहभागिता की व्यवस्था में निहित चरणों का वर्णन कीजिए।

State the steps involved in the organisation of resource sharing among libraries.

अथवा (Or)

विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के मध्य संसाधन सहभागिता के लाभों एवं दोषों की चर्चा करें।

Discuss the advantages and disadvantates of Resource sharing among university libraries.

अथवा (Or)

संसाधन सहभागिता के उद्देश्य क्या हैं ? भारत में विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के मध्य आप किस प्रकार से संसाधन सहभागिता का संगठन करेंगे।

What are the objectives of resource sharing ? How would you organize resource sharing among university libraries in India.

अथवा (Or)

पुस्तकालय नेटवर्क की आवश्यकता की चर्चा करें। भारत में मुख्य स्थानीय पुस्तकालय नेटवर्क की विवेचना करें।

Discuss the need for library networks. Describe the major city library networks in India.

अथवा (Or)

पुस्तकालय नेटवर्क द्वारा प्रदत्त सेवाओं की विवेचना कीजिए।

Discuss the services provided by Library Networks.

अथवा (Or)

आधुनिक समय के परिप्रेक्ष्य में संसाधन सहभागिता के महत्व, प्रभाव तथा समस्याओं की विवेचना संक्षेप में कीजिए।

Discuss in brief and to the point the imporatnce or resource sharing and its problem and prospect in modern time.

अथवा (Or)

निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए :

Write notes on the following :

(i) एडिनेट–ADINET,

(ii) बोनेट–BONET,

(iii) कैलिबनेट–CALIBNET,

(iv) डेलनेट–DELNET।

उत्तर—पुस्तकालय विज्ञान के क्षेत्र में संसाधन सहभागिता कोई नया प्रत्यय नहीं है। पूर्व में इसे सहकारिता अथवा पुस्तकालय सहयोग कहा जाता था। वस्तुतः पुस्तकालय सहयोग अथवा सहकारिता के परिवर्द्धित तथा परिमार्जित स्वरूप को ही संसाधन सहभागिता के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है और इस पद को पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान के क्षेत्र में व्यापक रूप से स्वीकार कर लिया गया है। वर्तमान में वित्तीय साधनों के अभाव तथा पुस्तकालयों के वित्तीय आवंटन में निरन्तर हो रही कटौती को दृष्टिगत रखते हुए पुस्तकालयों के लिए संसाधन सहभागिता एक अनिवार्य आवश्यकता प्रतीत हो रही है।

संसाधन सहभागिता का तात्पर्य एक ऐसी व्यवस्था से है, जिसमें प्रत्येक सहभागी सदस्य के पास ऐसा कुछ हो, जो दूसरे प्रतिभागी सदस्यों के लिए उपयोगी हो और प्रत्येक सदस्य अपने सदस्यों को अन्य सदस्यों की आवश्यकतानुसार उपलब्ध कराने की इच्छा शक्ति के साथ समर्पित हो। ऐलन केन्ट के अनुसार सहभागिता का अर्थ दूसरों को लाभान्वित करने के लिए अपनी किसी वस्तु को उपयोग हेतु सुलभ कराना है।

शैक्षणिक पुस्तकालय सेवा के परिप्रेक्ष्य में संसाधन सहभागिता का तात्पर्य शैक्षणिक पुस्तकालय द्वारा अपने संसाधनों को आवश्यकता होने पर अन्य समान पुस्तकालयों को उपलब्ध कराना है।

ज्ञान की अपार वृद्धि के कारण प्रकाशनों का संसार बहुत ही विशाल है, जो प्रकाशन की द्रुतगति के कारण विशालतम स्वरूप ग्रहण करता अत्यन्त दुरूह होता जा रहा है। इस परिस्थिति में किसी भी पुस्तकालय के लिए यह संभव नहीं है कि वह समस्त प्रकाशित साहित्य का संग्रह कर सके। उपर्युक्त परिस्थिति के कारण ही पुस्तकालयों के मध्य संसाधन सहभागिता अत्यन्त आवश्यक हो गई है।

परिभाषा (Definition)—एलेन केन्ट (Allen Kent) ने संसाधन सहभागिता से सम्बन्धित अवधारणाओं में से कुछ का वर्णन इन शब्दों में किया है :

पुस्तकालयों में संसाधन सहभागिता, कार्य करने का ऐसा तरीका है जिससे अनेक पुस्तकालय समान कार्यों में, अधिकतम सकारात्मक रूप में, सहभागिता कर सकें। संसाधन

सहभागिता में पारस्परिकता की आवश्यकता होती है और ऐसी भागीदारी को प्रयोग में लिया जाता है जिसमें प्रत्येक सदस्य अन्यों को कुछ न कुछ उपयोगी सहयोग दे सके और जिसमें हर सदस्य सहयोग देने का इच्छुक हो और जब भी आवश्यकता हो सहयोग उपलब्ध करा सके। 'संसाधन' शब्द का प्रयोग सभी सामग्रियों, कार्यों, सेवाओं तथा व्यावसायिक एवं गैर-व्यावसायिक कर्मचारियों को अभिव्यक्त करने के लिए किया जाता है। संसाधन में वह हर वस्तु, व्यक्ति अथवा कार्य शामिल होता है जो आवश्यकता के समय सहायता के निमित्त किसी के द्वारा माँगा जाए।

'सहभागिता' शब्द में बाँटना, आवंटित करना अथवा अपने संसाधनों को दूसरों के लाभार्थ उपलब्ध कराना शामिल है। इसका निहितार्थ है, 'परस्पर लाभ के लिए भागीदारी'।

पुस्तकालय संसाधन के दायरे में मुद्रित तथा अ-मुद्रित सामग्रियाँ और साथ ही मानव संसाधनों को शामिल किया जाता है जिनका ऐसे तरीकों से साझा किया जा सकता है जो सेवा की गुणवत्ता को बढ़ा सकें।

एलेन केन्ट द्वारा दी गई विस्तृत व्याख्या के आधार पर हर व्यक्ति के लिए 'संसाधन सहभागिता' की संकल्पना उसका अर्थ और उसकी महत्ता के बारे में जानना आसान होगा। प्रकटतः इसका अर्थ यह नहीं है कि भागीदार पुस्तकालयों के व्यक्तिगत अस्तित्व पर किसी प्रकार का असर होगा। वास्तव में संसाधन सहभागिता के लाभों को भागीदार पुस्तकालयों के उद्देश्यों अथवा रुचियों को प्रतिकूल रूप में प्रभावित किए बगैर प्राप्त करना चाहिए।

फिर भी, कुछ ऐसी स्थितियाँ हो सकती हैं जिनमें इनके संचालन की विधियों में थोड़ा बहुत समायोजन करना पड़ सकता है।

संसाधन सहभागिता के उद्देश्य—संसाधन सहभागिता के उद्देश्य बहुत ही आदर्शवादी हैं। इनका लक्ष्य पुस्तकालय उपयोक्ताओं को सुविधापूर्वक सूचना का अभिगम प्रदान करना होता है चाहे संसाधन कहीं भी अवस्थित हो। दूसरे शब्दों में, पुस्तकालय अपने संसाधनों से परे भी उपयोक्ता की आवश्यकताओं की पूर्ति करने का प्रयत्न करते हैं। यह अन्य पुस्तकालयों के संसाधनों में सहभागिता करके ही किया जाता है। इस क्रिया-कलाप के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं—

1. सकल लागत में कमी लाना,

2. सूचना संसाधनों और उनके प्रक्रियाकरण तथा उनके रख-रखाव की लागतों में अनावश्यक पुनरावृत्ति से बचना,

3. उपयोक्ताओं के विस्तृत वर्ग के लिए सूचना संसाधनों के अभिगम की व्यवस्था करना, और

4. संग्रह के विशेषीकृत क्षेत्रों का विकास करना, जिससे प्रत्येक पुस्तकालय अपने स्वयं से संबंधित क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित कर सके।

संसाधन सहभागिता के बुनियादी क्रिया-कलाप का लक्ष्य है, पुस्तकालय सामग्रियों और सेवाओं पर कम से कम खर्च द्वारा उनकी अधिकतम उपलब्धता को सुनिश्चित करना। इसमें सूचना स्रोतों के अभिगम पर अधिक बल दिया जाता है न कि ऐसे संसाधनों को रखने और उनके स्वामित्व पर, यद्यपि स्वामित्व को पूर्णतः अलग नहीं किया जा सकता है। आधारभ[ूत] धारणा यह है कि कोई भी पुस्तकालय संपूर्ण विश्व के साहित्य को अपने संग्रह में नहीं

सकता इसलिए उसे अपने पाठकों की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अन्य पुस्तकालयों पर निर्भर रहना ही पड़ता है।

संसाधन सहभागिता की आवश्यकता—पुस्तकालय सहयोग के व्यापक स्वरूप को ही संसाधन सहभागिता कहा जाता है जिसके अन्तर्गत सभी प्रकार के प्रलेखों का आदान-प्रदान, अर्जन, प्रक्रियाकरण एवं संग्रहरण सम्मिलित रहते हैं। पुस्तकालय के संसाधनों में पुस्तकालय सामग्री, पुस्तकालय के प्रशिक्षित कर्मचारी, पुस्तकालय के समस्त कार्य तथा पुस्तकालय में उपलब्ध सभी सेवाएँ सम्मिलित किए जाते हैं। अतः पुस्तकालय के संदर्भ में सहभागिता, पुस्तकालयों द्वारा आवश्यकतानुसार सहभागिता में सम्मिलित अन्य पुस्तकालयों को अपने संसाधन उपलब्ध कराना है। वर्तमान समय में निम्न कारणों से इसकी आवश्यकता है—

(i) असीमित संख्या में प्रकाशन—कम्प्यूटर के प्रयोग से प्रकाशन जगत में अभूतपूर्व विकास हो गया है जिसके परिणामस्वरूप कम समय में ही बहुसंख्यक ग्रन्थ सम्पूर्ण विश्व की विभिन्न भाषाओं में निरन्तर प्रकाशित हो रहे हैं। किसी भी विषय से सम्बन्धित प्रकाशनों की बहुलता ने पुस्तकालयों के सम्मुख चुनौतीपूर्ण समस्या खड़ी कर दी है क्योंकि पुस्तकालयों के वित्तीय साधन सीमित होते हैं तथा अल्प बजट में मूल्यवान एवं महत्वपूर्ण ग्रन्थों व पत्रिकाओं का अर्जन करना संभव नहीं हो सकता। विश्व के सर्वश्रेष्ठ पुस्तकालयों को भी ग्रन्थ चयन करके ही संग्रह संर्वधन करना पड़ता है। इस संदर्भ में विकासशील देश भारत का राष्ट्रीय पुस्तकालय विश्व में प्रकाशित पत्रिकाओं के 1/1000 भाग का भी क्रय नहीं कर पाता है।

(ii) प्रलेखों का मूल्य—जनसंख्या में वृद्धि तथा दैनिक उपयोग की सामग्रियों के मूल्यों में निरन्तर वृद्धि के परिणामस्वरूप प्रकाशन उद्योग में भी प्रलेखों के मूल्यों में निरन्तर वृद्धि देखी जा सकती है जिसके कारण बजट में 10 या 20 प्रतिशत की वृद्धि के पश्चात् भी अनेक पुस्तकालय अपनी आवश्यकतानुसार प्रलेखों को अधिक संख्या में नहीं क्रय कर पाते हैं। दूसरी ओर उपयोक्ताओं की संख्या में भी क्रमशः वृद्धि तथा विविध प्रकार की आवश्यकताओं के कारण पुस्तकालयों की प्रलेख क्रय क्षमता में ह्रास होता जा रहा है।

(iii) स्थान की कमी—यद्यपि पुस्तकालय की भवन योजना भविष्य के विस्तार तथा संग्रह क्षमता में उपयुक्त समायोजन पर आधारित होती है किन्तु पुस्तकालयों में नवीन सेवाओं को प्रारम्भ करने हेतु अनेक प्रकार के इलेक्ट्रानिक यंत्र, जैसे—फोटो-स्टेट मशीन व कम्प्यूटर आदि भी संग्रहित करने पड़ते हैं जिसके लिए भी स्थान की आवश्कता पड़ती है। साथ-साथ ग्रन्थ, पत्र-पत्रिकाएँ, कर्मचारी तथा अन्य पठनीय सामग्रियों की संख्या निरन्तर बढ़ती जाती है। इन कारणों से भविष्य में स्थान की कमी प्रतीत होती है।

(iv) उपयोक्ता की विविध आवश्यकताएँ—सूचना समाज के सदस्य के रूप में आज के उपयोक्ता की आवश्यकताएँ विविध प्रकार की होती हैं। ग्रन्थ, पत्र-पत्रिका के अतिरिक्त वह कम्प्यूटर पर आधारित डेटाबेसों, सीडी-रोम, इंटरनेट, ई-मेल आदि सेवाओं की अपेक्षा पुस्तकालय से करता है जिसके लिए पुस्तकालय को आधुनिकतम बनना पड़ सकता है। उपयोक्ता आकस्मिक रूप से भी किसी रिपोर्ट, प्रलेख या किसी विशिष्ट सामग्री की माँग कर सकता है जिसके लिए पुस्तकालय को अन्य किसी पुस्तकालय से सहायता लेनी पड़ सकती है।

(1) [illegible]

[illegible]

[illegible]

(i) [illegible]
(ii) [illegible]
(iii) [illegible]
(iv) [illegible]
(v) [illegible]
(vi) [illegible]

[illegible]

(i) [illegible]
(ii) [illegible]
(iii) [illegible]

(v) **पुस्तकालय का परिवर्तित स्वरूप**—पुस्तकालयों को उनके संग्रह के प्रकार तथा प्रयोक्ताओं की आवश्यकतानुसार विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जाता है किन्तु प्रयोक्ता की आवश्यकतानुसार प्रलेखों के विविध प्रकार को पुस्तकालय में संग्रहित करना पड़ता हैं तथा सामान्य पाठ्य-सामग्री का भी संग्रह करना पड़ता है। कदाचित पुस्तकालय अपने परम्परागत विषयों के अतिरिक्त अन्य विषयों से सम्बन्धित प्रलेखों को भी प्रयोक्ता की माँग पर अर्जन कर सकता है किन्तु सामान्य रूप से सभी पुस्तकालय ऐसा करने में सक्षम नहीं हो सकते हैं क्योंकि उनकी अपनी प्रशासनिक सीमाएँ होती हैं। कम्प्यूटर के अभिनव प्रयोग, इंटरनेट, सीडी-रोम, इंटरनेट आदि ने वर्तमान पुस्तकालयों के स्वरूप एवं सेवाओं में क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिए हैं।

संसाधन सहभागिता के व्यवस्थापन हेतु अपेक्षाएँ—एक महत्वपूर्ण पहलू, जिस पर ध्यान देना जरूरी है, यह है कि प्रत्येक भागीदार पुस्तकालय के उन संसाधनों के संबंध में स्पष्ट नीति होनी चाहिए जिनकी वह अन्य सदस्य पुस्तकालयों के साथ सहभागिता करने की स्थिति में है। दूसरे शब्दों में, पुस्तकालय में कुछ ऐसी पुस्तकें और पत्रिकाएँ हो सकती हैं जिनका उसके अपने उपयोक्ताओं द्वारा काफी उपयोग किया जाता है और जिन्हें परिसर से बाहर ले जाने के लिए जारी नहीं किया जा सकता। ऐसे प्रलेख संसाधन सहभागिता के दायरे में नहीं आते। इसलिए पुस्तकालयों में संसाधन सहभागिता को प्रभावी बनाने के लिए नीचे बताए गए कुछ मुद्दों पर सहमति होना महत्वपूर्ण है।

सहमति हेतु अनुबन्ध—भागीदार पुस्तकालयों के बीच निम्नलिखित बातों पर सहमति के स्वरूप अनुबंध होना चाहिए :

(i) सहभागिता पर उपलब्ध सामग्री की श्रेणी एवं प्रकार,

(ii) अधिग्रहण की नीति, जिसका उद्देश्य है, अपने संग्रह के सतत् विकास को सुनिश्चित करना और साथ ही ऐसे प्रलेखों के क्रय ही पुनरावृत्ति से बचना जिनका क्रय या अधिग्रहण सदस्य पुस्तकालयों द्वारा अनुत्पादक या फलहीन माना जाए,

(iiii) देय-आदेय की अवधि, नवीकरण की प्रक्रिया, लेन-देन के दौरान खो गई सामग्री के लिए अदायगी, इत्यादि,

(iv) इस कार्य के लिए विभिन्न उपकरणों को तैयार करना, जैसे—संघ सूचियाँ तैयार करना, जिनमें ग्रन्थात्मक नियंत्रक के लिए एकरूपता और मानकीकरण हो,

(v) सहकारी सूचीकरण अथवा साझा सूचीकरण,

(vi) अद्यतन सूचियों इत्यादि का रख-रखाव आदि।

उपर्युक्त पहलुओं के अतिरिक्त यह आवश्यक है कि :

(i) सामग्री को देने और उनकी समय पर वापसी के लिए, सकारात्मक प्रक्रियाएँ निर्धारित की जानी चाहिए,

(ii) अपने संग्रह में उपलब्ध सामग्री, या आदेशित, अथवा प्रक्रियाकरण के लिए प्रतीक्षित सामग्री का ग्रन्थात्मक अभिगम सुनिश्चित करना चाहिए, और

(iii) कम उपयोग में आने वाली या रद्द की गई सामग्री रख-रखाव, और आवश्यकता पड़ने पर उनके उपयोग के लिए सुविधाएँ उपलब्ध करानी चाहिए।

पुस्तकालय नेटवर्क
(Library Network)

नेटवर्क एक व्यापक शब्द है। पुस्तकालय जगत के लिए यह दो स्वरूपों में उपयोगी है। प्रथम स्वरूप के अन्तर्गत पुस्तकालय नेटवर्क का तात्पर्य ग्रन्थपरक नेटवर्क से है जिसमें सूचनाओं को भी सम्मिलित किया जा सकता है। कोई भी पाठक सूचना प्राप्ति के लिए तथा सेवाओं के लिए पुस्तकालय नेटवर्क का सदस्य बनकर इनका अभिगम कर सकता है। दूसरा नेटवर्क एक पुस्तकालय को दूसरे पुस्तकालय से संयुक्त करता है जिससे संसाधन सहभागिता एवं आवश्यक सूचनाओं का सम्प्रेषण किया जाता है। निम्नलिखित कारणों से पुस्तकालय नेटवर्क आवश्यक है—

(1) प्रलेखों के विविध प्रकार,
(2) प्रलेखों की संख्या में वृद्धि,
(3) वित्तीय संसाधनों की कमी,
(4) पुस्तकालय में संग्रह स्थान की कमी,
(5) पुस्तकालय स्वरूप एवं सेवाओं में विविधता।

शैक्षणिक (महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय) पुस्तकालयों के मध्य कम्प्यूटर अथवा सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से नेटवर्क स्थापित कर संसाधन सहभागिता आरम्भ की जा सकती है। सन् 1977 में अमेरिकन लाइब्रेरी एसोसिएशन द्वारा लाइब्रेरी नेटवर्क एवं सहकारिता पर आयोजित एक सैमीनार में लाइब्रेरी नेटवर्क को परिभाषित करते हुए कहा, "सभी प्रकार के पुस्तकालयों शैक्षणिक, विशिष्ट एवं सार्वजनिक के उस सहकारी स्वरूप को पुस्तकालय नेटवर्क कहते हैं, जब वे अपने संस्थागत अभिक्षेत्रों तथा राजनीतिक से बाहर जाकर किसी एक समान उद्देश्य की पूर्ति हेतु पारस्परिक रूप से सहयोग करते हैं।"

वर्तमान सूचना प्रौद्योगिकी युग में शैक्षणिक पुस्तकालय सेवाओं को उन्नत एवं प्रभावी बनाने हेतु तथा सूचना एवं ज्ञान सामग्रियों के संग्रहण एवं पुनर्प्राप्ति हेतु स्वचालीकरण (ऑटोमेशन) का उपयोग पुस्तकालय व्यवस्था एवं सूचना प्रसार के प्रत्येक क्रियाकलाप में आवश्यक होता जा रहा है। ऑटोमेशन में कम्प्यूटर की भूमिका अद्वितीय है। इसके माध्यम से ग्रन्थात्मक नेटवर्क की योजना अत्यन्त लोकप्रिय होती जा रही है, जिसके द्वारा किसी भी पुस्तकालय की अध्ययन सामग्रियों का उपयोग देश के किसी भी कोने में बैठकर किया जा सकता है। नेटवर्क के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सहायता प्राप्त करने हेतु सैटेलाइट का भी व्यापक उपयोग किए जाने पर बल दिया जा रहा है। भारत में एक ऐसी ही शैक्षणिक नेटवर्क की रूपरेखा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की योजना इनफ्लिबनेट में निहित है।

पुस्तकालय नेटवर्क के लिए पूर्व अपेक्षाएँ—किसी भी पारस्परिक सहयोग एवं साझेदारी के लिए कुछ नियमों की आवश्यकता होती है। पुस्तकालय नेटवर्क स्थापित किए जाने हेतु कुछ पूर्व अपेक्षाएँ सम्मिलित की जाती हैं, जो इस प्रकार हैं—

(i) सहयोग के कार्यान्वयन के लिए अनुबन्ध,
(ii) निरन्तर उपयोगी संग्रह संवर्धन के लिए अधिग्रहण नियमों का निर्माण,
(iii) उपयोगकर्ताओं तक शीघ्रता से प्रलेख सम्प्रेषण के उपाय,

(iv) आवश्यक संसाधनों की व्यवस्था जिसमें मानव यंत्र, वित्त तथा प्रलेख सम्मिलित हो सकते हैं,

(v) कम्प्यूटर एवं नेटवर्क प्रणाली की स्थापना,

(vi) सहभागी पुस्तकालयों के एक समान विषय क्षेत्र,

(vii) संस्थागत सहयोग,

(viii) टेलीफोन, फैक्स, ई-मेल से सम्प्रेषण संयोजन,

(ix) ऑन लाइन डेटाबेसों के नियन्त्रण के लिए उपयुक्त मानक के साफ्टवेयर,

(x) प्रशिक्षित कर्मचारी।

भारत में पुस्तकालय नेटवर्किंग

संसाधन सहभागिता के उद्देश्य से भारत में पुस्तकालयों की नेटवर्किंग की आवश्यकता 1980 के दशक में तब अनुभव की गई थी जब इस दिशा में विकसित देशों द्वारा की गई भारी प्रगति देखी गई। पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान पर योजना आयोग के एक 'कार्यदल', जिसके अध्यक्ष डॉ. एन. शेषागिरी (Dr. N. Seshagiri) थे, ने पुस्तकालय सेवाओं के आधुनिकीकरण के लिए और सातवीं योजना काल (1985-90) में पुस्तकालय प्रणालियों को परस्पर जोड़ने की सिफारिश की थी।

सन् 1985 में निस्सात (NISSAT) ने सी एस आई आर (CSIR) के महानिदेशक की अध्यक्षता में एक बैठक आयोजित की थी। इस बैठक की सिफारिशों में से एक थी कोलकाता में साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी लाइब्रेरी (Science and Technology Library) की स्थापना करना और इस शहर में पुस्तकालय स्वचालन और नेटवर्किंग को बढ़ावा देना। निसात ने सी एम सी लिमिटेड (CMS Ltd.) को कलकत्ता पुस्तकालय नेटवर्क (CALIBNET : Calcutta Library Network) पर व्यवहार्यता प्रतिवेदन (Feasibility Report) तैयार करने के लिए नियुक्त किया। यह प्रतिवेदन सन् 1989 में पूरा हुआ और प्रकाशित किया गया। इसी बीच जनवरी 1988 में निस्सात के समर्थन से इण्डिया इण्टरनेशनल सेंटर (India International Centre) नई दिल्ली ने पुस्तकालय नेटवर्क (डेलनेट) (DELNET : Library Network) पर, इस केन्द्र की एक परियोजना के रूप में, कार्य करना शुरू कर दिया था। जुलाई 1992 में सोसायटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट (Societies Registration Act, 1860) के अन्तर्गत इसका एक संस्था (Society) के रूप में पंजीकरण हुआ।

पुस्तकालय सेवा और सूचना विज्ञान के आधुनिकीकरण पर डॉ. शेषागिरी की अध्यक्षता में गठित कार्यदल की सिफारिशों ने सूचना तथा पुस्तकालय नेटवर्क (Information and Library Network) अर्थात् इनफ्लिबनेट, (INFLIBNET) के लिए मार्ग प्रशस्त किया। इनफ्लिबनेट के ऊपर सन् 1989 में प्रतिवेदन प्रकाशित हुआ। सन् 1991 में इनफ्लिबनेट ने अपना काम शुरू कर दिया। इसी बीज चेन्नई, पूणे, मुम्बई और बंगलोर जैसे शहरों में अन्य नेटवर्कों की स्थापना के बारे में प्रस्ताव रखे गये। इसलिए कैलिबनेट, डेलनेट और इनफ्लिबनेट के अलावा पुस्तकालय नेटवर्क किसी न किसी रूप में मुम्बई, बंगलौर, चेन्नई, पूणे और अहमदाबाद में भी शुरू किए गए।

प्रमुख भारतीय पुस्तकालय नेटवर्क—भारत में पुस्तकालय नेटवर्किंग का कार्य यद्यपि विलम्ब से आरम्भ हुआ किन्तु निस्सात द्वारा इस क्षेत्र में अपेक्षित सहयोग प्रदान किया गया जिसके फलस्वरूप स्थानीय एवं क्षेत्रीय नेटवर्कों का विकास हो सका। राष्ट्रीय स्तर पर भी इस दिशा में काफी प्रयास किए गए। कुछ प्रमुख पुस्तकालय नेटवर्क निम्नलिखित हैं।

1. एडिनेट (ADINET) – अक्टूबर 1994 में अहमदाबाद शहर के समीपवर्ती क्षेत्रों के पुस्तकालयों का नेटवर्क निस्सात के सहयोग से स्थापित किया गया। यह गुजरात विश्वविद्यालय के अतिथि गृह के प्रांगण में स्थित है। इसका मुख्य उद्देश्य सदस्य पुस्तकालयों के मध्य संसाधन सहभागिता, सूचना का सम्प्रेषण एवं उनके पुस्तकालयों में उपलब्ध प्रलेखों की केन्द्रीय सूची निर्माण करना है। यह पुस्तकालय कर्मचारियों के साथ-साथ उपयोक्ताओं के लिए भी उपयोगी है।

उद्देश्य—

(i) सदस्य पुस्तकालयों के मध्य सहकारिता की भावना को प्रोत्साहित करना।

(ii) आर्थिक, वैज्ञानिक तथा तकनीकी सूचना प्रणाली को प्रभावशाली एकीकृत नेटवर्क में स्थापित करना।

(iii) सहभागी पुस्तकालयों के मध्य संसाधन सहभागिता को संघ सूची के निर्माण से प्रबन्धन प्रदान करना जिसमें पुस्तकें, धारावाहिक आदि सामग्री भी सम्मिलित है।

(iv) सूचनाओं तथा प्रलेखों के विनिमय हेतु क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय नेटवर्कों, पुस्तकालयों सूचना तथा प्रलेखन केन्द्रों के द्वारा समन्वय स्थापित करना।

(v) सदस्य पुस्तकालयों को सूचना के चयन, संग्रहण तथा प्रसार हेतु तकनीकी निर्देश प्रदान करना।

(vi) संबंधित क्षेत्र की परियोजना, विशेषज्ञों एवं संस्थाओं को विकसित करना।

(vii) सभी सदस्य पुस्तकालयों को सूचना के उपयोग हेतु प्रशिक्षण देना तथा तत्संबंधी चेतना का विकास करना।

(viii) सूचना संसाधनों का प्रयोक्ताओं की आवश्यकताओं के अनुरूप विकास करना।

(ix) पुस्तकालय एवं सूचना केन्द्रों तथा विशिष्ट सूचना की खोज करने वालों की सहायता करना।

पुस्तकालय से संबंधित सेवाएँ—

- ऑनलाइन सूचनाएँ
- अन्तर्पुस्तकालय आदान
- फोटोकापी सेवाएँ
- सामयिक अभिग्यता सेवाएँ
- सूचना सेवाएँ

अन्य सेवाएँ—

- इन्टरनेट सेवाएँ
- निर्देशिकाओं का प्रकाशन

2. बोनेट (Bonet) – निस्सात द्वारा मुम्बई में स्थित पुस्तकालयों के सहयोग हेतु बोनेट की स्थापना की गई है। इसे अरनेट से भी विशेष सहयोग प्राप्त है। यह कम्प्यूटरीकरण की

तुलना में अन्तर्पुस्तकालय कार्यों में विशेष सक्रिय है। सदस्य पुस्तकालय स्वयं अपने पुस्तकालयों का स्वचालन तथा नेटवर्किंग करते हैं तथा एक दूसरे के अनुभव का लाभ उठाते हैं। बोनेट पुस्तकालय स्वचालन तथा नेटवर्किंग पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करता है अरनेट द्वारा अनेक अन्तर्राष्ट्रीय डेटाबेसों के अभिगम की सुविधा सदस्यों को प्रदान की गई है। बोनेट पुस्तकालय डेटाबेसों को अनुसंधानकर्ताओं को उपलब्ध कराने में भी सहायक है।

3. कैलिबनेट (Calcutta Library Net Work : CALIBNET) – कैलिबनेट का प्रयोजन निस्सात ने किया और सी एम सी को इसके ऊपर एक व्यवहार्यता प्रतिवेदन तैयार करने को कहा। व्यवहार्यता प्रतिवेदन के अनुसार कैलिबनेट को 40 पुस्तकालयों का नेटवर्क बनाया जाना था और इसे दो अवस्थाओं में विकसित करना था। निस्सात ने कैलिबनेट के लिए इनग्रेस (INGRESS) 502 पर आधारित सॉफ्टवेयर पैकेज मैत्रेयी (MAITRAYEE) को विकसित करने के लिए धन उपलब्ध कराया। सी एम सी लिमिटेड द्वारा इस पैकेज को विकसित किया गया।

'मैत्रेयी' सॉफ्टवेयर पैकेज का प्रयोग करने वाले विभिन्न भागीदार पुस्तकालयों द्वारा तैयार किए गए मशीन पठनीय डेटा की कुल मात्रा के बारे में विवरण फिलहाल उपलब्ध नहीं है। ऐसा लगता है कि कैलिबनेट इन्टरनेट (Internet) का अभिगम उपलब्ध करा रहा है और सीडी-रोम डेटाबेस (CD-ROM Database) खोज सुविधा प्रदान कर रहा है। कैलिबनेट ने भागीदार पुस्तकालयों में उपलब्ध पुस्तकों के लिए संघ सूची बनाना शुरू कर दिया है या नहीं, इसका पता अभी नहीं लग पाया है।

ऐसा प्रतीत होता है कि कैलिबनेट द्वारा कलकत्ता में पुस्तकालयों के संसाधन सहभागिता नेटवर्क को विकसित नहीं किया जा सका है। कैलिबनेट की पूरी तस्वीर स्पष्ट नहीं हो पायी है तथा कलकत्ता के पुस्तकालयों द्वारा संसाधन सहभागिता क्रियाकलाप में मदद करने के लिए इसके द्वारा विकसित मूल्ययोजित उत्पादों का पूर्ण विवरण अभी सामने आना बाकी है। उसके बाद ही इसकी उपलब्धियों को वास्तव में समालोचनात्मक रूप में मूल्यांकित किया जा सकेगा।

4. डेलनेट (Developing Library Network : DELNET) – भारतीय अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र (India International Centre) ने डेलनेट नेटवर्क की स्थापना करने में सबसे पहले नेतृत्व किया। इसने जनवरी 1988 में दिल्ली में स्थित पुस्तकालयों के लिए संसाधन सहभागिता व नेटवर्किंग पर विचार-विमर्श का आयोजन किया। इस सभा में दिल्ली के पुस्तकालयों के लिए नेटवर्क की स्थापना की संभावनाओं का अध्ययन करने के लिए एक समिति का गठन किया गया। निस्सात ने सीएमसी लिमिटेड के द्वारा व्यावहारिक अध्ययन की व्यवस्था की एवं इस उद्देश्य के लिए धन उपलब्ध कराया।

1988 में यह आईआईसी तथा निस्सात की संयुक्त परियोजना के रूप में स्थापित हुआ। आरम्भिक अवस्था में निस्सात ने इस नेटवर्क के कार्यान्वयन के लिए 1992 तक तकनीकी तथा वित्तीय सहायता प्रदान की। अब यह डवलपिंग लाइब्रेरी नेटवर्क कहलाता है। डेलनेट सोसाइटी के रूप में सोसाइटी पंजीकरण नियम 1960 के अन्तर्गत पंजीकृत किया गया है।

डेलनेट के उद्देश्य–

- सूचना का संकलन, संग्रहण एवं प्रसारण तथा प्रयोक्ताओं को कम्प्यूटर आधारित सेवाएँ प्रदान कर, पुस्तकालयों का नेटवर्क विकसित कर पुस्तकालयों के मध्य संसाधन सहभागिता को प्रोत्साहित करना,

- सदस्य पुस्तकालयों को सूचीकरण, डेटाबेस सेवाएँ, निर्गम, अधिग्रहण, पत्र-पत्रिका नियन्त्रण, ऑन लाइन सेवाएँ, हार्डवेयर एवं सॉफ्टवेयर के चयन आदि के लिए पथ प्रदर्शन करना,
- उपयुक्त संग्रह संवर्धन एवं अनावश्यक द्विरावृत्ति को जहाँ तक संभव हो रोकने के प्रयासों का समन्वयन करना,
- सूची खोज की देख-रेख तथा सुगमता प्रदान करने के लिए एक निर्देशपरक संदर्भ केन्द्र की स्थापना करना एवं सभी सहभागी पुस्तकालयों के लिए ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं तथा ग्रन्थेतर सामग्रियों के केन्द्रीय ऑन लाइन सूची का अनुरक्षण करना,
- यांत्रिक एवं हस्तचालित ढंग से प्रलेखों के वितरण को प्रोत्साहन एवं सुविधा प्रदान करना,
- ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं एवं सामग्रियों के विशिष्ट ग्रन्थपरक डेटाबेसों को विकसित करना,
- परियोजनाओं, विशेषज्ञों एवं संस्थाओं के डेटाबेस विकसित करना,
- सूचना तथा इलेक्ट्रानिक मेल के वितरण एवं तीव्र संप्रेषण के लिए इलेक्ट्रॉनिक तथा यांत्रिक उपकरणों का अधिग्रहण एवं अनुरक्षण,
- सूचना तथा प्रलेखों के विनिमय के लिए अन्य क्षेत्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय नेटवर्कों के साथ समन्वय स्थापित करना, तथा
- नेटवर्किंग तथा संसाधन सहभागिता को समर्पित समाचार-पत्र व पत्रिकाओं के प्रकाशन के लिए सुलभता एवं उत्तरदायित्व ग्रहण करना। यहाँ यह उल्लेख किया जा सकता है कि डेलनेट ने भारत के पहले क्रियाशील पुस्तकालय नेटवर्क के रूप में अनेक क्रियाओं में प्रगति की है।

डेलनेट की विशेषताएँ—इस नेटवर्क की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

1. इसमें 67 संस्थागत पुस्तकालय, सदस्य के रूप में (सदस्यता साल दर साल बढ़ती जा रही है) भाग ले रहे हैं।

2. सदस्य पुस्तकालयों में संसाधन सहभागिता को बढ़ावा देने के लिए डेलनेट ने अब तक निम्नलिखित का निर्माण किया है—

(क) सदस्य पुस्तकालयों में उपलब्ध पुस्तकों की कम्प्यूटर पठनीय संघ-सूची (1068 लाख रिकॉर्ड);

(ख) पत्रिकाओं की संघ-सूची (116 पुस्तकालय);

(i) वैज्ञानिक तथा तकनीकी पत्रिकाओं की संघ-सूची (7811 रिकॉर्ड),

(ii) समाज विज्ञान की पत्रिकाओं की संघ-सूची (6919 रिकॉर्ड),

(iii) मानविकी की पत्रिकाओं की संघ-सूची (1178 रिकॉर्ड),

(ग) विशेषज्ञों का डेटाबेस (1200 विशेषज्ञ),

(घ) पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों का डेटाबेस (50,000 रिकॉर्ड),

(ङ) पत्रिकाओं की संघ-सूची (2391 रिकॉर्ड),

(च) भाषा संबंधी प्रकाशनों का डेटाबेस (नमूने का डेटाबेस)।

3. बेसिस प्लस (BASIS Plus) पर आधारित नेटवर्किंग सॉफ्टवेयर, डेल्सिस (DELSIS), जो ग्रन्थात्मक और पूर्ण पाठ वाले लाखों रिकार्डों को रख सकता है और उनका उपयोजन कर सकता है, को डेलनेट ने विकसित किया है।

4. इन्टरनेट अभिगम और ई-मेल (e-mail) सुविधाएँ इसके सदस्यों के लिए उपलब्ध कराई गई हैं और इन्टरनेट पर अभिगम डेलनेट के मुख्य कार्यालय द्वारा उपलब्ध है। साथ ही डेलनेट ने अपना होम पेज (Home Page) भी बनाया है। इसका अभिगम इन्टरनेट पर निम्नलिखित पते पर किया जा सकता है।

HYPERLINK http://WWW.nic अथवा http://WWW.nic.in/delnet

5. डेलनेट ने दावा किया है कि उसने भौतिक विज्ञान, चिकित्सा विज्ञानों, और कृषि विज्ञान के क्षेत्र में विदेशी पत्रिकाओं के अधिग्रहण में यौक्तिकीकरण के द्वारा सहभागी पुस्तकालयों का लगभग 1 करोड़ रुपया बचाया है।

6. सदस्य पुस्तकालयों के कर्मचारियों के लिए डेलनेट द्वारा प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है और उन्हें आधुनिक प्रौद्योगिकी के अनुप्रयोग को समझने की व्यवस्था की जाती है।

यह कहा जा सकता है कि डेलनेट ने कम्प्यूटर आधारित संसाधन सहभागिता क्रिया-कलापों में भारत में प्रथम सफलता पाई है और यह भारत का सबसे पहला संक्रियात्मक पुस्तकालय नेटवर्क हो गया है। यह अपने क्रिया-कलापों को उत्तरोत्तर बढ़ाने का प्रयत्न कर रहा है और कुछ ख्याति प्राप्त प्रकाशनों के सहयोग से बुक्स इन प्रिंट : न्यू टाइटिल्स (Books in Print : New Titles) का एक ऑन लाइन डेटाबेस तैयार कर रहा है।

डेलनेट की सेवाएँ—डेलनेट अपने सदस्य पुस्तकालयों को एन आई सी के सहयोग से निम्नलिखित सेवाएँ प्रदान करता है—

- इसके डेटावेसों के लिए ऑन लाइन तथा ऑफ लाइन अभिगम,
- आईएलएल, ऑन लाइन अन्तर्पुस्तकालय के लिए अनुरोधों पर ऑन लाइन में विचार किया जाता है,
- इन्टरनेट तथा ई-मेल सेवाएँ निक द्वारा डेलनेट को उपलब्ध ई-मेल तथा इंटरनेट संयोजकता सभी सदस्य पुस्तकालयों को कम मूल्य पर वितरित की जा रही हैं। अरनेट ई-मेल भी प्रदान की जा रही है,
- डेलनेट-लिस्टसर्व, इंटरनेट मेलिंग, लिस्ट, इफ्ला पर ऑन लाइन सूचना पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान, रोजगार, घटनाएँ तथा चिकित्सा संबंधी कतरनें,
- प्रकाशकों के नए एवं आगामी शीर्षक, पुस्तक समीक्षाएँ तथा इंटरनेट से प्राप्त सामयिक अंतर्विषयों के बारे में ऑन लाइन सूचनाएँ,
- डेलनेट प्रशिक्षण कार्यक्रमों एवं कार्यशालाओं, गोष्ठियों व व्याख्यानों का आयोजन करता है,
- सदस्य पुस्तकालयों के लिए पूर्वव्यापी रूपान्तरण की सुविधा प्रदान करता है,

उपर्युक्त सेवाओं के अतिरिक्त डेलनेट ने संसाधन सहभागिता के लिए नियोजित कार्यक्रम बनाया है। इस नियोजन में वे सभी बातें सम्मिलित हैं जो कि संसाधन सहभागिता की गतिविधि को तीव्र करने के लिए प्रबल संभावनाएँ रखती हैं।

डेलनेट की सफलता इसकी सदस्यता में निरन्तर वृद्धि से प्रतिबिंबित होती है। सदस्यता में वृद्धि अनुसंधान अभिमुख तथा विशिष्ट दोनों ही प्रकार के स्थानों में अवलोकित की जा सकती हैं। शैक्षिक पुस्तकालयों के सम्बन्ध में यह उल्लेख किया जा सकता है कि अनेक विश्वविद्यालय पुस्तकालय नेटवर्क के सक्रिय सदस्य हैं, किन्तु महाविद्यालय पुस्तकालयों को अभी इस सुविधा का लाभ उठाना है। डेलनेट की वर्तमान सदस्यता इस प्रकार है—

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी पुस्तकालय	104	विश्वविद्यालय	22
सामाजिक विज्ञान पुस्तकालय	64	महाविद्यालय	86
मानविकी पुस्तकालय	15	विद्यालय	01
सामान्य पुस्तकालय	50		
भारत	225		
श्रीलंका	003	(सी.सी.एफ.)	
नेपाल	001	ग्रन्थों का यूनियन कैटलाग	27,231
ओमान	001	(मार्क)	
फिलिपीन	001		
संयुक्त राज्य अमेरिका	002		

2000 तथा 2001 में डेटाबेसों के प्रतिशत में पर्याप्त वृद्धि हुई है। डेलनेट स्वयं भी साफ्टवेयर विकसित करने के लिए कठिन प्रयास कर रहा है तथा इस प्रक्रिया में निम्न बाते हैं—

- डेलसिस प्लस सूचीकरण तथा पुस्तकालयों, नेटवर्क एवं सूचना केन्द्रों के संघ सूची का निर्माण आरम्भ करने के लिए बेसिस प्लस के आधार पर एकीकृत प्रमाणीय सॉफ्टवेयर का विकास करना,
- डेल सर्च यह एक ऑफ लाइन दूरस्थ डेटाबेस प्रणाली है जिसका अभिगम ई-मेल के द्वारा किया जाता है। ऐसा कहा जाता है कि दूरस्थ स्थानों में डेटाबेस अभिगम करने में यह उपयोक्ता मैत्रीपूर्ण तथा मितव्ययी हो सकेगी,
- डेल विन्डोज ग्रन्थपरक डेटाबेसों एवं सूचियों के सृजन एवं पुनर्प्राप्ति के लिए यह एक उपयोगी प्रभावकारी उपकरण है,
- डेल-डॉस डेलनेट में डॉस आधार पर डेटाबेस के सृजन एवं पुनर्प्राप्ति के लिए एक पृथक सॉफ्टवेयर का निर्माण किया है। ये सॉफ्टवेयर भारतीय तथा यूरोपीय भाषाओं में तथा जिस्ट के उपयोग से भी डेटा निवेश की व्यवस्था करने में सक्षम हैं,

उपर्युक्त विवरण से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि डेलनेट तेजी से विकास कर रहा है तथा ऐसी संभावना है कि भारत के अन्य नेटवर्कों से पहले यह अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सफल हो जाएगा तथा राष्ट्र में एक प्रभावशाली क्रियाशील नेटवर्क के रूप में परिवर्तित हो जाएगा।

इनफ्लिबनेट

(Information Library Network : INFLIBNET)

इनफ्लिबनेट कार्यक्रम की अवधारणा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के तत्कालीन अध्यक्ष प्रोफेसर यशपाल न की थी। उनका यह मानना था कि इनफ्बिलनेट के आकार का पुस्तकालय एवं सूचना नेटवर्क कम्प्यूटर और संचार प्रौद्योगिकी के मौजूदा संदर्भ में, देश के लिए अत्यन्त अनिवार्य है, क्योंकि ऐसे नेटवर्क विकसित विश्व में पुस्तकालय तथा सूचना सेवाओं की व्यवस्था पर भारी प्रभाव डाल रहे हैं। इनफ्लिबनेट के लिए बनाए गए सम्पूर्ण कार्यक्रम का वर्णन और विवेचन डेवलपमेंट ऑफ एन इन्फॉर्मेशन एण्ड नेटवर्क : रिपोर्ट ऑफ द इन्टर एजेन्सी वर्किंग ग्रुप यू जी सी, 1988 (Development of an Information and Network : Report of the Inter Agency Working Group UGC, 1988) नामक प्रलेख में दिया गया है।

उद्देश्य—जिन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए इनफ्लिबनेट के सृजन की सिफारिश की गई थी वे ये हैं :

(i) एक ऐसे राष्ट्रीय नेटवर्क को विकसित करना जो देश के विभिन्न पुस्तकालयों और सूचना केन्द्रों को परस्पर जोड़ सके और सूचना संचालन और सेवा में दक्षता को सुधार सके,

(ii) मोनोग्राफों, पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं और ग्रन्थेतर सामग्रियों की ऑन लाइन संघ-सूची बनाकर विविध स्थानों के पुस्तकालयों के प्रलेख संग्रह का अभिगम उपलब्ध कराना,

(iii) ग्रन्थात्मक, संख्यात्मक तथा तथ्यात्मक डेटाबेसों के प्रति अधिक से अधिक अभिगम उपलब्ध कराना—खासतौर से उन डेटाबेसों का अभिगम जो निस्सात के क्षेत्रीय सूचना केन्द्रों (Sectoral Information Centre) तथा यूजीसी (UGC) के सूचना केन्द्रों द्वारा अपने देश में बनाए गए हैं,

(iv) सूचना की ऑन लाइन प्राप्ति को सुनिश्चित करने के लिए गेटवे (Gateway) स्थापित करना,

(v) जिन पुस्तकालयों के पास विशेष क्षेत्रों में पुस्तकों के प्रचुर संग्रह हैं उनके सूचना स्रोतों को समुन्नत करके प्रलेख वितरण सेवा प्रदान करना,

(vi) संसाधन सहभागिता के जरिए सूचना संसाधन के इष्टतम उपयोग को सुनिश्चित करना,

(vii) एकसमान मानकों का अनुसरण कर पुस्तकालयों और सूचना केन्द्रों के कार्यों और सेवाओं का कम्प्यूटरीकरण,

(viii) इलेक्ट्रॉनिक मेल, बुलेटिन बोर्ड (Bulletin Board), फाइल अंतरण, कम्प्यूटर आधारित श्रव्य/दृश्य कॉन्फ्रेंसिंग (Conferencing), इत्यादि के जरिए वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकीविदों, शोधकर्ताओं, समाजशास्त्रियों, शिक्षाविदों, अध्यापकों और छात्रों के बीच वैज्ञानिक संचार को सुगम बनाना,

(ix) पुस्तकों, मोनोग्राफों, पत्र-पत्रिकाओं और ग्रन्थेतर सामग्रियों को, उनके स्रोतों का पता लगाकर जहाँ उपलब्ध हैं, देशभर में फैले हुए उपयोक्ताओं की पहुँच के दायरे में लाना और नई प्रौद्योगिकी तथा लेखों की संघ सूची के माध्यम से उन्हें उपलब्ध कराना,

(x) देश के पुस्तकालयों, प्रलेखन केन्द्रों, और सूचना केन्द्रों के बीच सहयोग को प्रोत्साहित करना जिससे कि सुदृढ़ संसाधन केन्द्रों तथा कमजोर संसाधन केन्द्रों के हित के लिए संसाधनों का एकीकरण किया जा सके,

(xi) इनफ्लिबनेट को सुदृढ़ बनाने के लिए, उसका प्रबन्ध करने के लिए तथा उसे गतिशील रखने के लिए समुचित गुणवत्ता युक्त व्यावसायिक जनशक्ति विकसित करना, तथा

(xii) तकनीकों, विधियों, प्रक्रियाओं, हार्डवेयर तथा सॉफ्टवेयर और सेवाओं, इत्यादि में मानकों और एकसमान निर्देशों को विकसित करना तथा सभी पुस्तकालयों द्वारा उनको (मानकों, इत्यादि को) वास्तविक व्यवहार में लेना जिससे कि संसाधनों का इष्टतम उपयोग हो सके।

इनफ्लिबनेट सेवाएँ—इनफ्लिबनेट का आयोजन और अभिकल्प बहुल कार्यों/सेवाओं वाले नेटवर्क के रूप में किया गया है। इससे निम्नलिखित सेवाएँ प्राप्त करने की आशा की जाती है :

(i) सूची आधारित सेवाएँ,
(ii) डेटाबेस सेवाएँ,
(iii) प्रलेख आपूर्ति सेवाएँ,
(iv) संग्रह विकास (विभिन्न भागीदारों को अधिग्रहण तथा अधिप्राप्ति में सहायता देना),
(v) संचार आधारित सेवाएँ।

सूची आधारित सेवाएँ—सूची सेवाओं में पुस्तकों, मोनोग्राफों, पत्र-पत्रिकाओं तथा ग्रन्थेतर सामग्रियों का सहभागी सूचीकरण, पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं तथा ग्रन्थेतर सामग्रियों की संघ-सूची का संकलन, सहभागी सूचीकरण करने और प्रलेख के स्थान के निधारण के लिए ऑन लाइन अभिगम की व्यवस्था, कार्ड (Card), पुस्तक, चुम्बकीय टेप/फ्लॉपी (Floopy), इत्यादि के रूप में सूची तैयार करने में सहायता, इत्यादि शामिल हैं।

डेटाबेस सेवाएँ—इन सेवाओं के अन्तर्गत मौजूदा तथा पूर्वव्यापी सेवाओं के डेटाबेसों से सूचना की खोज, कम्प्यूटर आधारित एस डी आई (SDI) सेवा प्रदान करना, गैर-ग्रन्थात्मक डेटाबेसों से ढूँढ़कर गैर-ग्रन्थात्मक सूचनाएँ उपलब्ध कराना, इत्यादि शामिल हैं।

प्रलेख आपूर्ति सेवाओं में अन्तर्पुस्तकालय ऋण सेवा तथा फैक्स (Fax), इत्यादि द्वारा प्रलेख वितरण सेवा शामिल हैं।

प्रलेख-संग्रह विकास सेवा का संबंध मूलतः सदस्य पुस्तकालयों को चयन, अधिग्रहण तथा अधिप्राप्ति संबंधी कार्यों में सहायता करना है।

संचार आधारित सेवाएँ—ये विभिन्न प्रकार की होती हैं, जैसे—

- रेफरल (Referral) सेवा,
- इलेक्ट्रॉनिक-मेल (Electronic-mail) सेवा,
- बुलेटिन बोर्ड दृश्य/अद्यतन बुलेटिन बोर्ड,
- इलेक्ट्रॉनिक-मेल, फाइल अंतरण, कम्प्यूटर/श्रव्य/दृश्य कॉनफेरेंसिंग, इत्यादि के द्वारा शैक्षिक संचार।

इनफ्लिबनेट ने अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कुछ अन्य महत्वपूर्ण उपाय किए हैं, जैसे—

(i) संसाधन सहभागिता कार्यक्रम को प्रोत्साहन प्रदान करने के लिए इसने संघ सूची के 50,000 अभिलेखों को पहले ही सृजित कर लिया है।

(ii) शोध प्रबन्धों और लघु शोध प्रबन्धों के 65,000 अभिलेखों एवं 30,000 पत्रिकाओं के अभिलेखों के डेटाबेसों को सृजित करने के लिए ये इनफ्लिबनेट द्वारा किए जा रहे कुछ महत्वपूर्ण प्रयास हैं।

डेटाबेस विकास—इनफ्लिबनेट द्वारा अब तक निम्नलिखित डेटाबेस विकसित किए जा चुके हैं—

1. पुस्तकें, 2. वर्तमान पत्रिकाएँ, 3. विशेषज्ञ, 4. अनुसंधान रिपोर्ट, 5. द्वितीय पत्रिकाएँ, 6. सीडी-रोम, और 7. संग्रहीत पत्रिकाएँ।

सॉफ्टवेयर विकास—इनफ्लिबनेट ने विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के स्वचालन के लिए 'सोल' (Software of University Libraries : SOUL) का विकास किया है जो कि क्लाएंट सर्व तकनीक पर विन्डोज व विन्डोज एन टी पर प्रचालित किया जाता है।

इस प्रकार इनफ्लिबनेट विश्वविद्यालय पुस्तकालयों के सकारात्मक विकास में विशेष योगदान कर रहा है। कुछ अन्य नैटवर्क, जैसे—बंगलौर में बालनेट, पुणे में पुम्नेट तथा मैसूर में माइलिबनेट सभी निस्सात द्वारा प्रायोजित हैं।

शैक्षणिक पुस्तकालय सेवाओं के उन्नयन में इन्टरनेट की भूमिका

(ROLE OF INTERNET IN PROMOTING OF ACADEMIC LIBRARY SERVICES)

प्रश्न—इन्टरनेट के बारे में आप क्या जानते हैं ? शैक्षणिक पुस्तकालय सेवाओं के विस्तार में इन्टरनेट की भूमिका की विवेचना कीजिए।

What do you know about INTERNET ? Discuss the role of internet in promoting academic library services.

अथवा (Or)

पुस्तकालय सेवाओं के उन्नयन में इन्टरनेट की भूमिका की चर्चा करें।

Discuss the role of INTERNET in promoting library services.

अथवा (Or)

विश्वव्यापी वेब की व्याख्या कीजिए।

Explain world wide web—WWW.

अथवा (Or)

इन्टरनेट की सेवाओं की व्याख्या करते हुए इसके गुणों और दोषों की विवेचना कीजिए।

Describe the services of Internet and also discuss its advantages and disadvantages.

अथवा (Or)

शैक्षिक पुस्तकालय सेवाओं पर इन्टरनेट के प्रभाव की चर्चा कीजिए।

Discuss the impact of Internet on academic library services.

उत्तर—

इन्टरनेट और पुस्तकालय सेवाएँ
(Internet and Library Services)

इन्टरनेट शब्द भारत के लिए अधिक पुराना नही है। इसका सम्बन्ध सूचनाओं के अंतरराष्ट्रीय महाजाल से हैं, जो कम्प्यूटरों के माध्यम से एक दूसरे को उपलब्ध होते हैं। विश्वव्यापी होने के कारण ही इसे 'इंटरनेशनल नेटवर्क' (संक्षेप में इंटरनेट) का नाम दिया गया है। इन्टरनेट वर्तमान समय की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इन्टरनेट नेटवर्कों का संकलन है जो हजारों कम्प्यूटर पद्धति के एक दूसरे से सम्नन्धित होने का विशाल समझौता है। विश्व भर में फैले नेटवर्क का नेटवर्क इन्टरनेट है। इसके द्वारा लोग एक दूसरे से दूरस्थ डाटा बेस की सहायता से जुड़े हैं, व्यक्तिगत संचार एवं सामूहिक विचार विमर्श कर सकते हैं।

दूसरे शब्दों में इन्टरनेट एक दूसरे प्रकार का दूरसंचार नेटवर्क है। इन्टरनेट का सम्बन्ध प्रायः साधारण टेलीफोन लाइन से होता है। संसाधन सहभागिता इन्टरनेट का आधार है। प्रकाशन की सार्वभौमिक उपलब्धिता (Universal Availability of Publication—UAP) इन्टरनेट से होता है। विश्व के विभिन्न स्थानों के अनुसंधानकर्ता इन्टरनेट के माध्यम से अपने ही क्षेत्र में सहयोगियों के कार्यों और कागज में उपलब्ध हजारों खण्डों के विशाल पुस्तकालयों में उपलब्ध प्रचुर मात्रा को जो पहले प्राप्त करना कल्पना से परे था, को प्राप्त करना सम्भव हुआ है।

सूचना के सहभागिता का आधार इन्टरनेट (मेल, प्रलेख, कार्यक्रम, डाटा और ग्राफिकल और आज पद्धति कैसे कार्य करती है भविष्य में छा जाने) है। इन्टरनेट के विकास की शुरुआत 1960 से अमेरिका के रक्षा विभाग ARPANET के प्रादुर्भाव से हुई है।

इन्टरनेट से कैसे जुड़ें

हालांकि, विकसित देशों ने इन्टरनेट को सुविधा काफी पहले हासिल कर ली थी, लेकिन भारत इससे नियमित रूप से कहीं अब जाकर जुड़ा है। वैसे भारत में इसका प्रवेश सात-आठ साल पहले ही हो गया था, पर जब तक इसका प्रयोग मात्र वैज्ञानिक और शैक्षणिक, संस्थाओं तक ही सीमित था। 15 अगस्त, 1995 को विदेश संचार निगम लिमिटेड (VSNL) द्वारा गेटवे इन्टरनेट ऐक्सेस सेवा आरम्भ कर दिए जाने के बाद इन्टरनेट का रास्ता सभी भारतीयों के लिए सुगम हो गया है। इन्टरनेट सुविधा हासिल करने के लिए विदेश संचार निगम लिमिटेड से पंजीकरण कराना पड़ता है। लेकिन इसके पहले आपके पास अपना कम्प्यूटर होना जरूरी है। इन्टरनेट सुविधा प्राप्त करने के लिए आपको एक मॉडेम लेना होगा तथा अपने कम्प्यूटर को टेलीफोन लाइन से सम्बद्ध कराना होगा। विदेश संचार निगम लिमिटेड से अनुरोध करके आप डायल अप या लीज्ड ऐक्सेस सुविधा प्राप्त कर सकते हैं।

इन्टरनेट सहायता सेवा
(Internet Access Service)

इन्टरनेट ने सारे विश्व के कम्प्यूटर को जोड़ने एवं नेटवर्क के द्वारा सूचना व्यवस्था और सहायता के लिये विभिन्न उपकरण और तकनीक का विकास किया है। इन्टरनेट निम्नलिखित सेवायें प्राप्त करता है—

1. गोफर (Gopher)

मिनिसोटा विश्वविद्यालय ने इस गोफर इन्टरनेट का विकास किया था। यह व्यवस्थित सूची (Menu) द्वारा संचालित अनुप्रयोग है जो उपयोगकर्ता को विभिन्न होस्ट और सर्वर में जो जानकारी है उसे पहुँचाने में मदद करता है जैसे वितरण प्रणाली से प्रलेख वितरित किया जाता है। गोफर वास्तव में उपयोगकर्ता जो चाहता है उसे बाहर हुई सूचना को प्राप्त कर उसके कम्प्यूटर में रखता है।

2. फाइल ट्रांसफर प्रोटोकाल (File Transfer Protocol – FTP)

फाइल ट्रान्सफर प्रोटोकाल का प्रयोग इन्टरनेट के माध्यम से एक कम्प्यूटर से दूसरे कम्प्यूटर में स्थानान्तरित करने में होता है। विभिन्न प्रकार की फाइल जैसे Text, Binary तथा Compressed को विभिन्न माड्यूल्स का प्रयोग करके स्थानान्तरित कर सकता है। ज्यादातर शैक्षणिक संस्थायें अपनी पद्धति पर उपलब्ध सामग्री जो दूसरों के उपयोग में आने पर उपलब्ध करती है। FTP से कोई भी अज्ञात उपयोगकर्ता E-mail पता और पासवर्ड उपयोग कर प्राप्त कर सकता है।

3. वेरोनिका (Veronica)

यह एक खोज उपकरण है जो गोफर स्थान से निश्चित फाइल एवं निर्देशिका का जल्दी से Scan करता है। यह एक कार्यक्रम है जो गोफर से सहायता लेता है। वेरोनिका ने केवल फाइल एवं निर्देशिका को ढूढ़ता है बल्कि उन्हें अस्थाई तौर से गोफर की व्यवस्थित सूची से निकालने के लिये रखता है।

4. वैस (Wide Area Information System – WAIS)

यह एक पूर्णरूपेण साफ्टवेयर (Text Indexing Software) है जिससे बड़ी से बड़ी मूल फाइल, प्रलेख और पत्रिकाओं की अनुक्रमणिका का उपयोग किया जा सकता है। इसका अनुप्रयोग उपयोगकर्ता को एक अन्तःस्थान से मूल, ध्वनि या चित्र में से कोई भी हो खोजने से मदद करता है। WAIS से सम्बन्धित लेख की ग्रन्थ सूची अज्ञात FTP के जरिये उपलब्ध होती है।

5. समाचार समूह/यूजनेट (Newsgroup/Usenet)

विश्वभर में हजारों की संख्या में स्थित Usenet सूचना को एकत्रित कर अन्य स्थित Usenet में भेजते हैं। Usenet एक मशीनों का सेट है एकत्रित लेखों को एक अथवा अधिक विश्वविद्यालयों से मान्यता प्राप्त कार्य जो समाचार पत्र के नाम से जाना जाता है से अदला-बदली करता है। सायबरस्पेस में लोगों के मिलने पर दूसरा साधन Newsgroup है। Usenet का मूल आधार Newsgroup है जो विषय- वस्तु से सम्बन्धित संदेश का संग्रह है।

6. अरकी (Archie)

यह अनुक्रमणिका उपकरण है जिसका प्रयोग FTP द्वारा फाइल के खोजने और लाने (Download) में करते हैं। यह वास्तव में इन्टरनेट मे सरवर्स का समूह है। सभी Archie Servers आपस में तालमेल रखते हैं और सूचनाओं का आदान-प्रदान करते हैं और ये सूचनाओं का एक बड़ा डाटाबेस बनाते हैं तथा इसे समय-समय पर अद्यतन करते हैं।

7. टेलनेट (Telnet)

यह NCSA द्वारा बनाया गया सरल कार्यक्रम है, जो एक दूसरे कम्प्यूटर को जोड़ने के TCP/IP के संचार की औपचारिकता का प्रयोग करता है। कोई भी टेलनेट को शोध के लिए बड़े डाटाबेस की खोज के लिये यहाँ तक कि किसी पुस्तक का जाँच के लिए सम्पूर्ण विश्व के पुस्तकालयों में टेलनेट का प्रयोग किया जा सकता है।

8. विश्वव्यापी वेब (World Wide Web-WWW)

World Wide Web अथवा WWW इन्टरनेट पर वितरण, Hypertext, मल्टीमीडिया सूचना पद्धति पर आधारित ग्राहक सरवर है। WWW सरवर मूल और आवाज और तस्वीर सहित आवाज को प्रकाशित कर सकता है। गोफर और WWW सामान्यतया मूल (Text) के प्रकाशन तक सीमित हैं। दोनों ग्राहक सर्वर पर आधारित रहते हैं। उपयोगकर्ताओं को अपनी मशीन पर WWW और गोफर की स्थापन (Install) कराना होता है।

Web एक औपचारिकता का उपयोग करता है जिसे HTTP (Hypertext Transfer Protocol) कहते हैं। Web सरवर Web Page में सूचना को व्यवस्थित करता है जो सभी Text को HTML (Hypertext Marc up Language) से जोड़ता है। HTML दूसरे Web Page को सन्दर्भ के लिये जोड़ता है जो एक ही सरवर में या दुनिया भर में कहीं भी स्थित इन्टरनेट के दूसरे सरवर में हो। प्रलेख की स्थिति अथवा Web Page URL (Uniform Resource Locator) द्वारा निर्धारित होता हैं।

आज इन्टरनेट में सर्वाधिक उपयोग में लायी जाने वाली सूचना सेवा WWW है और इन्टरनेट पर सूचना खोजने और लाने का कार्य साथ-साथ किया जाता है।

इन्टरनेट के संसाधन (Internet Resources)

1. ऑन लाइन सूची (On Line Catalogues) – दूरस्थ पुस्तकालयों की पुस्तकालय सूची की खोज इन्टरनेट के माध्यम से की जा सकती है और पुस्तकालय विशेष में उपलब्ध विशेष सूचना की जानकारी हो सकती है। अधिकांश पुस्तकालयों की सूची इन्टरनेट पर उपलब्ध रहती है।

2. डाटाबेसेस (Databases) – विस्तृत और गहन सूचना नेट के डाटाबेस में उपस्थित मिलती है। इन्टरनेट के माध्यम से किसी भी पुस्तकालय के विभिन्न डाटाबेस को खोजा जा सकता है। इस प्रकार डाटाबेस सूचनाओं का आधार महासागर है।

3. चर्चा समूह (Discussion Group) – किसी भी आवश्यक अथवा इच्छित विषय पर Internet द्वारा चर्चा की जा सकती है। विभिन्न प्रकार के समाचार समूह, चर्चा समूह, इन्टरनेट मे है जो विशिष्ट विषय क्षेत्र पर सूचना प्राप्त करते हैं।

4. ई-मेल (E-mail) – त्वरित संचार के लिये इन्टरनेट पर E-mail सुविधा उपलब्ध है। यह सूचना एवं संदेश पलक झपकते ही संचरित अथवा पहुँच सकता है। इसमें क्षेत्र का प्रभाव ई-मेल भेजने में समय लगने में नहीं पड़ता।

इन्टरनेट की सेवायें (Services of Internet)

1. E-mail के द्वारा संचार की गति में वृद्धि एवं सरल होती है।
2. इन्टरनेट सामान्य मंच चर्चा के लिये सर्वर सूची के समान उपलब्ध करता है और इसी प्रकार विद्युत् वाहन जैसे सामान्य मंच पर विचार करता है। इसकी मदद से इन्टरनेट ने अपनी पंसदीदा विषय को सूचनाओं की सूचनाओं का आदान-प्रदान होता है।
3. किसी भी प्रकार की सन्दर्भ सेवाओं को इन्टरनेट प्रोत्साहित करता है क्योंकि यह नेट में उपलब्ध सभी डाटाबेस की खोज करता सकता है। उपयोगकर्ताओं की आवश्यकताओं कठिन सवालों को सन्तुष्ट करता है, यह सहयोगात्मक अभिगम को अपनाता है।
4. ऐसे पुस्तकालय की सूची जो स्थानीय स्तर पर उपयोगार्थ उपलब्ध नहीं है को इन्टरनेट खोज अथवा उपयोग हेतु उपलब्ध करता है।
5. चयनित सूचना प्रसार सेवा (SDI) सेवा के सम्बन्धित उपयोगकर्ता सूचना एकत्रित करके अपनी SDI प्रोफाइल तैयार करता है।
6. स्थानीय स्तर पर बनाया हुआ डाटाबेस दूरदराज के उपयोगकर्ताओं को उपलब्ध कराता है।
7. विभिन्न प्रतिस्पर्धा वाले On line system का मूल्यांकन कर उसे उपलब्ध कराता है।
8. पुस्तकालय से सम्बन्धित विभिन्न कार्य करता है जैसे अन्तर्पुस्तकालय आदान (Interlibrary Loan), भण्डार सत्यापन, अनुरोध, प्रलेख प्रदान और Consortial file sharing, e-journal, image data, FTP की मूल फाइल, WWW Site और सूचीकरण पुस्तक-पत्रिकाओं का आदेशन।
9. पुस्तकालयों का होम-पेज (Home-page) बनाता है जिससे पुस्तकालयों के बारे में सूचनायें, उसके संसाधन और सेवा आदि के बारे में सबको सूचना उपलब्ध कराता है।
10. पुस्तकालयों को आपस में जोड़ता है।

इन्टरनेट से लाभ (Advantages of Internet)

(i) यह सबको समान मानता है।

(ii) व्यक्तिगत सम्पन्नता, देश अधिकार का कोई महत्त्व नहीं है।

(iii) उच्च स्तरीय श्रेष्ठता, व्यापारिक तौर पर बनाई सूचना मिलती है और यह बढ़ती रहती है जिससे शोध, शिक्षा, व्यापार एवं मनोरंजन के लिये उपयोगी है।

इन्टरनेट से हानि (Disadvantages of Internet)

इन्टरनेट से लाभ के विपरीत कुछ हानियाँ भी हैं, जो अग्रानुसार हैं :

(i) वास्तविक गड़बड़ी प्रतीत होती है।

(ii) इसमें मार्ग निर्देशन कठिन कार्य है।

(iii) अनुपयुक्त उपयोग को रोकना कठिन है।

(iv) सूचना स्रोत की गुणवत्ता पर संदेह है।

(v) Single Protocol, एकरूपता, सही अनुक्रमणिका में कमी।

(vi) तकनीक के उपयोग में दक्षता की कमी।

(vii) धीमी प्रभावी लाइन।

(viii) डाटा का निम्न स्तर और सूचनाओं के गलत तरीके से गठन करने से नेट में भटक सकता है।

(ix) दूर संचार में ध्वनि प्रदूषण।

इन सबसे बावजूद इन्टरनेट की उपयोगिता एवं कार्यकुशलता में त्वरित गति में वृद्धि हो रही है। इन्टरनेट संसाधन के उपयोग से ज्ञान में काफी वृद्धि हो रही है। हमारे ज्ञान की तीव्रता से इन्टरनेट अब काफी तेजी से बढ़ रहा है। लोग इन्टरनेट का प्रयोग प्रायः

(i) समस्या समाधान,

(ii) विशेष कार्य का सम्पादन,

(iii) संसाधनों के बढ़ाने, आदि में करते हैं।

पुस्तकालय सेवा पर इन्टरनेट का प्रभाव
(Impact of Internet on Library Services)

प्राथमिक रूप से शैक्षणिक पुस्तकालय सूचना उपलब्ध कराने के लिये है और सूचना के विस्फोट के कारण त्वरित गति से सूचना को उपलब्ध कराने की आवश्यकता है। इन्टरनेट दूरदराज में कही भी उपलब्ध सूचना को प्रदान करने की प्रक्रिया को सरल बनाने और उससे लगने वाले समय से कम करने के लिए प्रयत्नशील है। प्राथमिक तौर पर इन्टरनेट कम्प्यूटरों को आपस में जोड़कर नेटवर्क उपलब्ध कराता है। जिसमें पुस्तकालय सूची, फाइल और Text को चलायमान करना, E-mail भेजना और प्राप्त करना, डाटा बेस की जाँच करना आदि सरल हो जाता है। इसके अलावा कुछ अन्य कार्य विभिन्न स्रोतों से समाचार पढ़ना एवं साफ्टवेयर को प्राप्त करना भी है। इन्टरनेट न केवल सूचना उपलब्ध कराता है बल्कि उसे उचित तरीके से संग्रहीत करने, चलायमान करने, प्राप्त करने और उपयोगकर्ता और एक दूसरे के बीच सूचना संचरित करने से मदद करता है। इन्टरनेट सन्दर्भ और सार्वजनिक सेवा के लिये विभिन्न विकल्प देता है। विभिन्न शब्दकोष, जनसंख्या सूचना और CIA World Fact Books, आदि विभिन्न वेबसाइट में उपलब्ध रहते हैं। सन्दर्भ सेवायें तत्काल एवं तुरन्त उपलब्ध रहती हैं।

OCLC ने अतिविशिष्ट सेवा को विकसित किया जिसे Persistent Uniform Resources Locator (PURL) कहते हैं। इस सेवा का अर्थ है पुस्तकालय और अन्य संगठन Web Page के उपयोगकर्ताओं को स्थान परिवर्तन के साथ सेवायें उपलब्ध करना है जब PURL सेवा के साथ पंजीकृत URLs (Uniform Resource Locators प्रलेख के वेब पते के साथ) संस्था हो। OCLC मुफ्त में साफ्टवेयर बाँटता है जिससे वेब प्रबन्धक ग्राहकों के पते बदलने पर भी उनकी वापसी में पुनः नये URL में प्रवेश देता है।

नेट सन्दर्भ सेवा सहायता उपलब्ध कराना एक अलग दृष्टिकोण है। यह सन्दर्भ ग्रन्थालयी को सूचना स्रोत के इलेक्ट्रॉनिक अनुवाद के माध्यम से इन्टरनेट स्रोत से हमेशा सम्बन्ध बनाये रखने का दबाव बनाये रखता है। सन्दर्भ पुस्तकालय सूचना खोजने की प्रक्रिया

में माध्यम की भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार इन्टरनेट ने अपने उपयोगकर्ताओं के परम्परागत सन्दर्भ प्राप्त के स्वभाव को बदल दिया है।

इन्टरनेट महत्वपूर्ण सूचना प्राप्त करने का केन्द्र बन गया है, यह पुस्तकालय समुदाय के बीच फैला हुआ है। इन्टरनेट पुस्तकालय सेवा के विभिन्न क्षेत्रों में सम्मिलित है और पुस्तकालयों में जिम्मेदारी बढ़ी है। विभिन्न भागों का नाम परम्परागत तरीके से हटकर वेब आधारित शीर्षक (Titles) हो गये हैं। इसका प्रभाव सीधे सेवा से उच्च श्रेणी की प्रशासनिक सेवाओं में देखने को मिलता है। आजकल नेटवर्क सूचना संसाधन पुस्तकालयी, इन्टरनेट सेवा सहायक अथवा इलेक्ट्रॉनिक संसाधन पुस्तकालयी (Internet Services Coordinator or Electronic Resources Librarian) इन्टरनेट आधारित कार्यों को करने के लिये नियुक्त है। ये लोग परम्परागत पुस्तकालय सेवाओं को आधुनिक तकनीकी सेवाओं के साथ जोड़ने का कार्य कर रहे हैं।

वर्तमान में इन्टरनेट के द्वारा सूचनाओं को खोजने एवं उपलब्ध कराने वाली सेवाओं को सही मार्गदर्शन की आवश्यकता है, जैसे—

(i) सूचना प्रदान कराने वालों का संचालन,

(ii) पुस्तकालयाध्यक्ष के सूचनाओं के योगदान व इन्टरनेट पर सूचनाओं के संगठन में भागीदारी,

(iii) पुस्तकालय का इन्टरनेट से सम्बन्ध,

(iv) इन्टरनेट पर सूचनाओं की उपलब्धता की जानकारी।

डिजिटल पुस्तकालय और परम्परागत पुस्तकालय
(Digital Library and Conventional Library)

पुस्तकें और प्रलेख परम्परागत पुस्तकालय में रैक में रखे जाते हैं। विषय और विषयों से सम्बन्धित प्रलेखों के सेट को वर्गीकृत करके उपयोगकर्ता के उपयोग हेतु व्यवस्थित करते हैं। लेकिन अंकीय व्यवस्थापन में यह आवश्यक नहीं है क्योंकि कम्प्यूटर के माध्यम से खोला जा सकता है और कोई भी सूचना विभिन्न तरीके से अपने आप खोज सकता है।

पुस्तकालयों में उपलब्धता की तेज जाँच हेतु सूची का प्रयोग करते हैं। कभी-कभी बिना सूची की मदद से सीधे रैक से पुस्तकें ढूढ़ते हैं क्योंकि वे यह जानते है कि किताबे कहाँ रखी है। इसीलिये कम से कम इतना ज्ञान होना चाहिये कि वह किताबों को रैक में बिना सूची के सहयोग से भी ढूढ़ सके, जबकि कम्प्यूटरीकृत सूची उपलब्ध है। लेकिन डिजिटल पुस्तकालय में केवल कम्प्यूटर के माध्यम से ही खोजा जा सकता है। इसलिये कम्प्यूटर के बारे में थोड़ी जानकारी आवश्यक है। पुस्तकालय में आवश्यक खोज में समय का नष्ट होना आवश्यक है। इसी प्रकार अंकीय पुस्तकालय में कम्प्यूटर से जानकारी प्राप्त करने में समय नष्ट हो सकता है।

दोनों प्रकार की पद्धतियों में समान समस्यायें हैं और समस्या निराकरण के लिये कर्मचारियों की मदद भी ली जाती है। परम्परागत पुस्तकालय में उपयोगकर्ता कर्मचारियों की मदद भौतिक रूप से सामग्रियों की स्थिति की जानकारी साथ ही पुस्तकालय में उसकी उपलब्धता के लिये लेते हैं। अंकीय पुस्तकालय में पुस्तकालय कर्मचारियों की मदद पुस्तकों की उपलब्धता के लिये लेते हैं लेकिन उन्हें किताब ढूँढ़ने में किसी मदद की आवश्यकता नहीं

होती। खोजने के उत्तरदायित्व का अधिकार E-mail द्वारा भी हो सकता है न कि टेलीफोन, फैक्स या व्यक्तिगत सम्पर्क।

दोनों पद्धति में आवश्यक लागत का निर्धारण सरलता से नहीं किया जा सकता। यद्यपि वर्तमान में सभी सूचना सेवा के लिये शुल्क लेते हैं, लेकिन वे संस्थायें जैसे जन पुस्तकालय, कम्पनी आदि जिसकी स्थापना उपहार के लिये है अपने उपयोगकर्ता को निःशुल्क सेवा प्रदान करते हैं। लेकिन सूचनाओं की फोटोकॉपी में शुल्क देना होती है। अंकीय पुस्तकालय की स्थापना में काफी व्यय होता है इसीलिये सेवा शुल्क के बारे में पुनः विचार की आवश्यकता है। अंकीय पुस्तकालय में मुद्रण का खर्च फोटोकॉपी करने जैसे होने के कारण मुफ्त् नहीं होता।

31:19
LIBRARY

डिजिटल और वर्चुअल पुस्तकालय (Digital and Virtial Library)

पुस्तकालय में हमेशा नयी तकनीक को अपनाते हैं और उसके उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। अंकीय पुस्तकालय, इलेक्ट्रॉनिक पुस्तकालय और वर्चुअल पुस्तकालय इन सभी को एक माना जाता है लेकिन ऐसा नहीं है। अंकीय और इलेक्ट्रॉनिक पुस्तकालय दोनों एक ही हैं। इनको नेटवर्किंग आवश्यक नहीं है, लेकिन अंकीय सूचनायें और मुद्रण आधारित प्रकाशन के साथ उपलब्ध है। लेकिन वर्चुअल पुस्तकालय की कोई सीमा नहीं है। यह सारी दुनिया में फैले हुए हैं। कहीं से भी सही नेटवर्क द्वारा सूचना प्राप्त कर सकते हैं। वर्चुअल पुस्तकालय हमें एक बड़े पुस्तकालय की तस्वीर प्रस्तुत करता है जिसका उपयोग उपयोगकर्ता करते हैं।

डिजिटल पुस्तकालय से लाभ (Merits of Digitial Library)

(i) बिना समय गँवाये सूचनाओं को तुरन्त प्राप्त करता है।
(ii) प्राप्त डाटा विश्वसनीय एवं गुणवत्ता का होता है।
(iii) स्थान में कमी करना।
(iv) संचार एवं इन्टरनेट कार्य में त्वरित गति।
(v) सूचना के व्यावसायीकरण की सम्भावना में वृद्धि।
(vi) ज्ञान वृद्धि की सम्भावना।
(vii) विश्वव्यापीकरण पर बल।
(viii) संसाधन सहभागिंता में वृद्धि।

वर्तमान में विश्व के तमाम पुस्तकालय इन्टरनेट से जुड़ चुके हैं। बहुत ही कम शुल्क में विश्व के किसी भी पुस्तकालय में उपलब्ध अपनी आवश्यकता की पुस्तक न केवल पढ़ सकते हैं अपितु आवश्यक अंशों का प्रिंट आउट भी प्राप्त कर सकते हैं। वैज्ञानिकों, विषय विशेषज्ञों, शिक्षकों और शोधछात्रों के लिए इसकी उपयोगिता महत्त्वपूर्ण है।